Postal Reg. No. M.P./Bhopal/4-340/20-22
R.N.I.No. 51966/1989,ISSN 2455-2399
Date of Publication 15th November 2020
Date of posting 15th & 20th November 2020
Total Page 100

अक्टूबर-नवम्बर 2020 • वर्ष 32 • अंक 10-11 • मूल्य ₹ 40

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

गांधी, टैगोर और नेहरू का विज्ञान

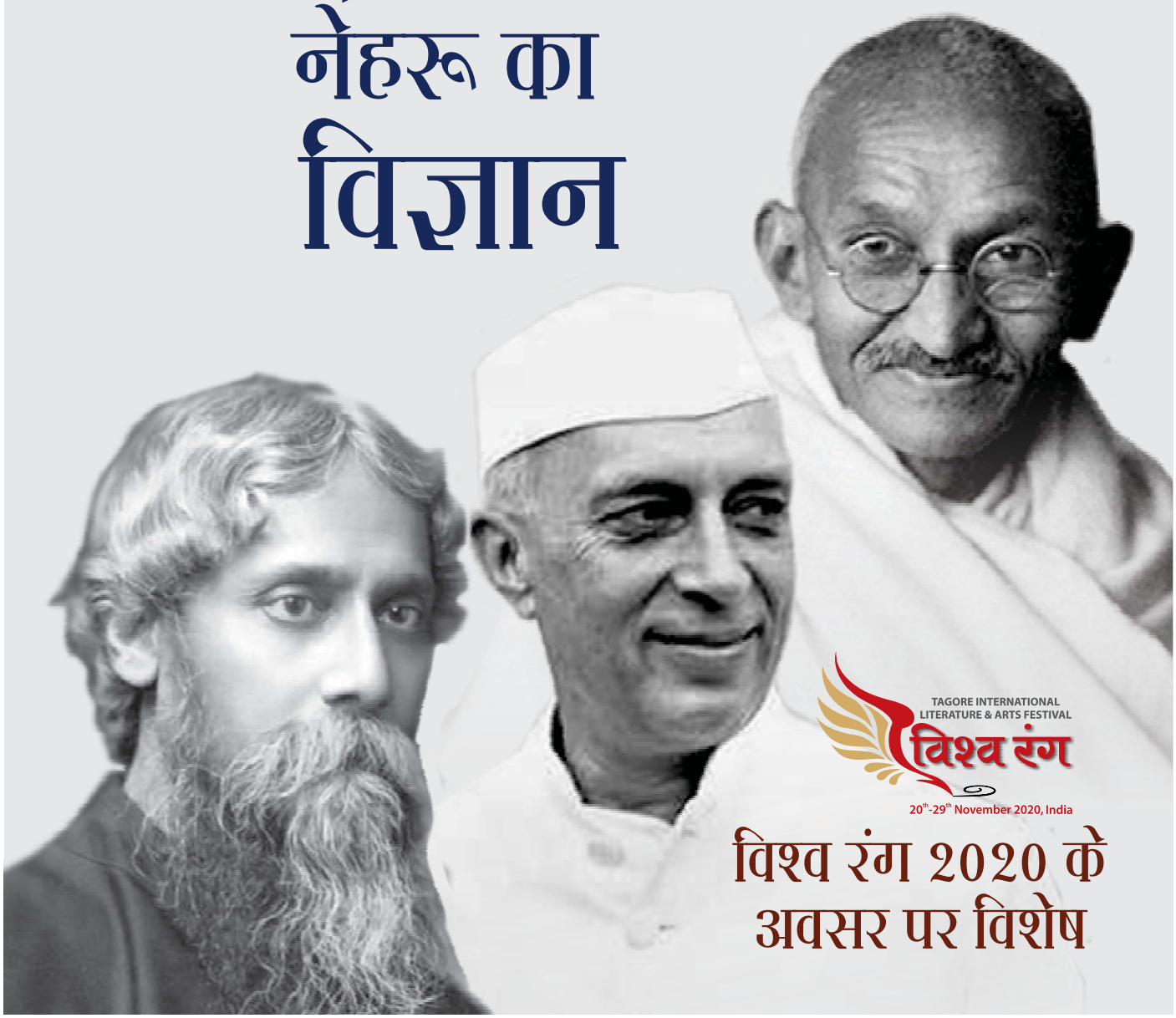

TAGORE INTERNATIONAL LITERATURE & ARTS FESTIVAL
विश्व रंग
20th-29th November 2020, India

विश्व रंग 2020 के अवसर पर विशेष

RNI No. 51966/1989
ISSN 2455-2399
www.electroniki.com
अक्टूबर–नवम्बर 2020
वर्ष 32
अंक 10-11

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

राष्ट्रीय राजभाषा शील्ड सम्मान, रामेश्वर गुरु पुरस्कार, भारतेन्दु पुरस्कार तथा सारस्वत सम्मान से सम्मानित

सलाहकार मण्डल
शरदचंद्र बेहार, डॉ. वि.दि. गर्दे, देवेन्द्र मेवाड़ी, डॉ. मनोज कुमार पटैरिया,
डॉ. संध्या चतुर्वेदी, प्रो. विजयकांत वर्मा, डॉ. रविप्रकाश दुबे,
प्रो. ब्रम्ह प्रकाश पेठिया, डॉ. आर.एन.यादव, डॉ. सुनील कुमार श्रीवास्तव,
प्रो. राकेश कुमार पाण्डेय, प्रो. अमिताभ सक्सेना, प्रो.प्रबाल रॉय

संपादक
संतोष चौबे

कार्यकारी संपादक
डॉ.विनीता चौबे

उप–संपादक
पुष्पा असिवाल

सह–संपादक
मोहन सगोरिया, रवीन्द्र जैन, मनीष श्रीवास्तव

संस्थागत सहयोग
गौरव शुक्ला, डॉ. डी.एस.राघव, डॉ. विजय सिंह, डॉ. सीतेश सिन्हा,
रवि चतुर्वेदी, डॉ. मुनीष गोविंद, डॉ. अनुराग सीठा, डॉ. सत्येन्द्र खरे,
संतोष शुक्ला

राज्य प्रसार समन्वयक
शलभ नेपालिया, अमिताभ गांगुली, रजत चतुर्वेदी, अंबरीष कुमार, अजीत चतुर्वेदी,
इंद्रनील मुखर्जी, राजेश शुक्ला, शशिकांत वर्मा, शैलेष बंसल, लियाक़त अली खोखर,
मुदस्सर कर, नरेन्द्र कुमार, दलजीत सिंह, आबिद हुसैन भट्ट, बिनीस कुमार, सुशांत चक्रवर्ती,
अनूप श्रीवास्तव, निशांत श्रीवास्तव, पुर्विश पंड्या, आनंद एस. कराजगी, दिनेश सिंह रावत

क्षेत्रीय प्रसार समन्वयक
राहुल चतुर्वेदी, भुवनेश्वर प्रसाद द्विवेदी, आशुतोष कुमार, अमन सिंह, सौरभ सक्सेना,
मिर्जा मुनीर, प्रशांत मैथली, अमृतेष कुमार, बेसिल बलमुचू, विजय कुमार, शिव दयाल सिंह,
सुनिल शुक्ला, संतोष उपाध्याय, राजेश कुमार गुप्ता, राजीव चौबे, महेश प्रसाद नामदेव,
मनोज शर्मा, आर.के. भारद्वाज, मनीष खरे, जितेन्द्र पांडे, गीतिका चतुर्वेदी, दीपक पाटीदार,
भारत चतुर्वेदी, रक्शी मसूद, वेद प्रकाश परोहा, अमृतराज निगम, अशोक कुमार बारी,
प्रवीण तिवारी, सूर्य प्रकाश तिवारी, रूपेश देवांगन, अभिषेक अवस्थी, योगेश मिश्रा,
अरुण साहू, सचिन जैन, विजय श्रीवास्तव, रंजीत कुमार साहू, असीम सरकार

समन्वयक प्रचार एवं विज्ञापन
राजेश पंडा, महीप निगम, मनोज यादव

आवरण एवं डिजाइन
वंदना श्रीवास्तव, अमित सोनी

`तकनीक का उपयोग वहीं पर उचित है, जहाँ तक उससे सबका हित हो।'

-महात्मा गाँधी

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए 315-16

इलेक्ट्रॉनिक्स, कम्प्यूटर विज्ञान एवं नई तकनीक की पत्रिका

गाँधी का विज्ञान
- शुकदेव प्रसाद /05
- बलराम गुमास्ता /08
- महेन्द्र गगन /10
- अभिषेक कुमार मिश्र /12

टैगोर का विज्ञान
- देवेन्द्र मेवाड़ी /16

रवीन्द्रनाथ टैगोर का आलेख /19

रवीन्द्रनाथ टैगोर की विज्ञान कविता /24

नेहरू का विज्ञान
- शुकदेव प्रसाद /25
- डॉ.कृष्ण कुमार मिश्र /29
- पंडित नेहरू का इंदिरा के नाम पत्र /32

धरोहर

गंगा की वैज्ञानिक उत्पत्ति और उसके जल का आयुर्वेदिक महत्व
- पंडित कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' /33

आलेख

स्पेस एक्स का मंगलमय अंतरिक्ष सफर
- विजन कुमार पाण्डेय /36

विनाशकारी भूकंप का मंडराता खतरा
- योगेश कुमार गोयल /40

विज्ञान की कसौटी पर प्यार
- डॉ.विजय कुमार उपाध्याय /43

जीवन के लिए ओज़ोन
- डॉ. दीपक कोहली /45

समाचार एजेंसी : उद्भव और विकास
- कुणाल सिंह /49

भारत का पहला लाइकेन पार्क
- डॉ. शुभ्रता मिश्रा /52

हिन्दी कविता में विज्ञान /56
- महावीर प्रसाद द्विवेदी, • सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला',
- सुमित्रानंदन पंत, अज्ञेय, • नागार्जुन, • गजानंन माधव 'मुक्तिबोध',
- गिरिजा कुमार माथुर, • प्रयाग नारायण त्रिपाठी, • विपिन जोशी,
- कुंवर नारायण, • हरिनारायण व्यास, • श्रीकांत वर्मा, • धनंजय वर्मा,
- मलय, • प्रेमशंकर रघुवंशी, • सोमदत्त, • विनोद कुमार शुक्ल

महान वैज्ञानिकों की अजूबी दास्तान • सुभाषचंद्र लखेड़ा /75

देशज नवाचारों को मिले प्रोत्साहन • प्रमोद भार्गव /77

विज्ञान कथा

दास्ताने-अविश्वास • ओम भारती /80

विद्यार्थी कॉलम

गिलहरी मछली • ललित गोयल /83

कॅरियर

जैव प्रौद्योगिकी • संजय गोस्वामी /84

विज्ञान इस माह

दीवाली के पटाखे और हमारी वैज्ञानिक सोच
- इरफॉन ह्यूमन /87

पुस्तक शृंखला

हिन्दी में विज्ञान लेखन
- डॉ. शिवगोपाल मिश्र /93

पत्र व्यवहार का पता

इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए

आईसेक्ट लिमिटेड, स्कोप कैम्पस, एन.एच.–12, होशंगाबाद रोड, मिसरोद, भोपाल–462047

फोन : 0755-2700466 (डेस्क), 2700400 (रिसेप्शन)

e-mail : electronikiaisect@gmail.com, website : www.electroniki.com वार्षिक शुल्क : 480/- यह अंक : 80/-

'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार संबंधित लेखक के हैं। उनसे संपादक की सहमति होना आवश्यक नहीं है।

सभी विवादों का निबटारा भोपाल अदालत में किया जायेगा।

स्वामी, आईसेक्ट लिमिटेड के लिये प्रकाशक व मुद्रक सिद्धार्थ चतुर्वेदी द्वारा आईसेक्ट पब्लिकेशन्स, 25 ए, प्रेस कॉम्प्लेक्स, जोन-1, एम.पी.नगर, भोपाल (म.प्र.) से मुद्रित व आईसेक्ट लिमिटेड, स्कोप कैम्पस एन.एच.-12 होशंगाबाद रोड, मिसरोद, भोपाल (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक- संतोष चौबे।

चित्र : गूगल से साभार

गाँधी का विज्ञान

विज्ञान और प्रौद्योगिकी : गाँधी की दृष्टि में

शुकदेव प्रसाद

शुकदेव प्रसाद विज्ञान और प्रौद्योगिकी के बारे में गाँधी ने जो विचार रखे हैं, उनके सम्बन्ध में तरह-तरह की भ्रान्तियां फैली हुई हैं। यंत्रों के सम्बन्ध में उनकी जो मूल परिकल्पना है, उसकी जानकारी के अभाव में लोग उन पर तरह-तरह के बेबुनियाद आरोप और आक्षेप लगाते नहीं थकते हैं; उदाहरणार्थ, गाँधी दकियानूसी थे, वे सभी तरह की मशीनों के घोर विरोधी थे, वे मानव जाति को आदि युग में ले जाना चाहते थे। इसके विपरीत विज्ञान, प्रौद्योगिकी और विकास के विषय में उन्होंने जो विचार रखे हैं, सर्वथा मौलिक, क्रान्तिकारी और प्रासंगिक हैं।

गाँधी निश्चित रूप से उन सभी प्रविधियों के खिलाफ थे, जिनसे चंद हाथों में सत्ता, स्वामित्व और पूँजी का संकेन्द्रण होता है। जिन यंत्रों से उत्पादन और वितरण में केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिलता है, उन सारे यंत्रों के बहिष्कार की वकालत गाँधी दर्शन में अवश्य है। जिन मशीनों में व्यापक जन समुदाय रोजगार प्राप्त करने से वंचित रह जाता है, उन सारी मशीनों को गाँधी द्वारा परिकल्पित सामाजिक आर्थिक ढांके में कोई स्थान नहीं है। जिन मशीनों का गाँधी द्वारा परिकल्पित सामाजिक आर्थिक ढांचे में कोई स्थान नहीं है। जिन मशीनों द्वारा उत्पादन प्रक्रिया से मानवीय तत्व का बराबर विलोपन हो रहा है तथा जो शोषण तंत्र की राष्ट्रीय अथवा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर टिकाये रखने में लगी हैं, उन सारी मशीनों का गाँधी ने मुखर विरोध किया है।

गाँधी कुछ लोगों द्वारा उत्पादन (Centralised Mass Production) के स्थान पर सबके द्वारा उत्पादन (Production by the Masses) के नये मानवीय अर्थशास्त्र के जनक थे। केंद्रित उत्पादन बड़ी-बड़ी इकाइयों में पूँजी-सघन और जटिल तकनीकों के जरिये होता है। इतना ही नहीं, इस पद्धति में तकनीक उत्तरोत्तर जटिल होती जाती है और मानवीय तत्व क्रमशः लुप्त होता जाता है।

केन्द्रित उत्पादन प्रणाली में घुमाव-फिराव वाली चक्करदार पेंचीदी विचरण व्यवस्था होती है। पूँजी बहुत उत्पाद के कारण सतत एक शक्तिशाली अल्प जनतंत्र की जड़ें मजबूत और गहरी होती जाती हैं, चंद हाथों में स्वामित्व सिमटता जाता है, पूँजी का संचय या एकत्रीकरण जारी रहता है,

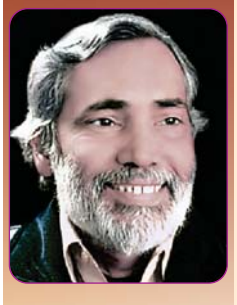

समकालीन विज्ञान लेखकों में शुकदेव प्रसाद का नाम अग्र पंक्ति में शुमार है। वे पिछले चार दशकों से विज्ञान लेखन कर रहे हैं। देश विदेश में वे अपने विज्ञान लेखन के लिए उन्हें कई पुरस्कार और सम्मान प्रदान किये गये हैं। सोवियत भूमि नेहरू पुरस्कार से सम्मानित वे एक मात्र भारतीय विज्ञान लेखक हैं। कई विज्ञान किताबों की रचना के साथ ही उन्होंने विज्ञान ग्रंथों और संचयन का संपादन किया है। शुकदेव प्रसाद इलाहाबाद में रहते हैं।

जिसके परिणाम स्वरूप वही मुट्ठी भर लोग प्रत्यक्ष रूप से राजसत्ता का नियमन, नियंत्रण और संचालन करने लग जाते हैं, बेकाबू मशीनीकरण, मानव श्रम की बचत करने वाले वृहदाकार यंत्रों की बढ़ोत्तरी और अंधाधुंध औद्योगिकी के कारण व्यापक जन समुदाय भीषण बेरोजगारी के दुष्चक्र में फंसता जाता है, जिससे आम जनता की लाचारी, गुलामी और दरिद्रता बढ़ती जाती है। पूँजीवादी मशीनीकृत उत्पादन यंत्र में साम्राज्यवाद की विकरालता नित नये रूपों में प्रकट होती है। जन-समुदाय द्वारा उत्पादन ---- गाँधी छोटी-छोटी इकाइयों में जन-समुदाय द्वारा उत्पादन पर जोर देते थे जिसमें उत्पादन मुख्यतः स्थानीय संसाधनों से व स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए श्रम सघन (Labour-intensive) मशीनों के द्वारा होगा। उत्पादन सबके लिए हो अर्थात् पूरी पड़ोसी आबादी के लिए हो-गाँधी का यही क्रान्तिकारी विचार उनके मानव केन्द्रित अर्थशास्त्र के मूल में है। छोटी-छोटी इकाइयों में, प्रत्यक्ष पड़ोसी समुदायों (Face to face Communities) में उत्पादन और वितरण सहगामी होंगे। इस तरह विकेन्द्रित अर्थरचना में मनुष्य की अभिक्रम शक्ति, क्रियाशीलता और स्वाधीनता का विकास होता जायेगा, जिसमें वह अपनी सारी व्यवस्थाओं का नियमन करने लग जायेगा।

गाँधी द्वारा परिकल्पित सारी समाज रचना का केन्द्र बिन्दु मानव है। गाँधी यह कतई नहीं चाहते थे कि निर्जीव मशीनें जिन्दा मशीनों (लोगों) का स्थान ले लें। जिस देश में विपुल श्रम शक्ति बेकार पड़ी हो, वहां पर श्रम की बचत करने वाले पूँजी सघन यंत्रों की क्या आवश्यकता है? गाँधी ने बारम्बार इस बात पर जोर दिया है कि मशीनें मनुष्य का स्थान न लें, बल्कि उन्हें श्रम करने या रोजगार के अवसर से वंचित न रखते हुए उनके शारीरिक श्रम को हल्का करें। उदाहरण के तौर पर गाँधी के कुछ उद्धरण प्रस्तुत हैं :

– 'तकनीक का अपना स्थान है और अब इसने अपने पांव भी जमा लिये हैं। किन्तु जिस हद तक शरीर श्रम अनिवार्य है, उस हद तक तकनीक को श्रम का स्थान नहीं लेने देना चाहिए।'

– **'यंग इंडिया', 5 नवम्बर, 1925**

गाँधी इस प्रकार उन सीधी-सादी सहज मशीनों को चाहते थे, जो स्थानिक जन-समुदायों में सर्वसुलभ हों। लेकिन, वे वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी विकास के रंचमात्र विरोधी नहीं थे। उनका कहना सिर्फ यही था कि इसका लाभ चंद हाथों में सिमट कर न रह जाए, बल्कि वह जन-जन तक निर्बाध रूप में पहुँचे।

'तकनीक का उपयोग वहीं पर उचित है, जहां तक उससे सबका हित हो।'

– **'यंग इंडिया', 15 अप्रैल, 1926**

"मैं समूची विध्वंसात्मक मशीनरी के सर्वथा खिलाफ हूँ। परन्तु ऐसे साधारण कल पुर्जी या औजारों, उपकरणों और ऐसी मशीनरी का मैं अवश्य स्वागत करूंगा जो जन-जन के (अनावश्यक, बोझिल, उबाऊ) शरीर श्रम को बचत करते हैं और झोपड़ियों में रहने वाले करोड़ों लोगों का बोझ हल्का करते हैं'

– **'यंग इंडिया', 17 जून, 1926**

मशीनीकरण

यहां पर मशीनों के सम्बन्ध में एक समाजवादी सज्जन की गाँधी से हुई बातचीत का उल्लेख करना अप्रासंगिक न होगा

'मशीनों के पक्ष समाजवादी मित्र ने गाँधी से पूछा- 'क्या ग्रामोद्योग आन्दोलन का लक्ष्य मशीन मात्र को ही निकाल बाहर करना नहीं है?'

गाँधी उस समय चरखा चला रहे थे। उन्होंने खुद ही समाजवादी मित्र से प्रतिप्रश्न किया 'यह चरखा मशीन नहीं है क्या?'

समाजवादी सज्जन ने गाँधी से कहा- 'मैं इस मशीन की बात नहीं करता, मेरा मतलब तो बड़ी-बड़ी मशीनों से है।'

इस पर गाँधी ने जो उत्तर दिया, वह मशीनरी सम्बन्धी उनके विचारों का एकदम खुलासा करता है- 'जो मशीनें व्यापक जन-समुदाय को श्रम करने के अवसर से वंचित नहीं करतीं, बल्कि जो व्यक्ति को उसके शरीर श्रम में मदद देती हैं और उसकी कार्य क्षमता को बढ़ाती हैं और जिन मशीनों को मनुष्य उनका गुलाम हुए बिना अपनी इच्छा से चला सकता हैं, उन सब मशीनों को ग्रामोद्योग आन्दोलन से अभयदान दे रखा है।'

– **'हरिजन', 22 जून, 1935**

एक अन्य स्थान पर भी गाँधी ने यही बात प्रकारान्तर से दुहरायी है 'मशीनीकरण उसी अवस्था में अच्छा है, जब किसी निर्धारित काम को पूरा करने के लिए आदमी बहुत ही कम हों। वहां यह एक बुराई है, जहाँ पर किसी काम को करने के लिए जितने आदमी चाहिए, उनसे भी कहीं अधिक लोग बेकार पड़े हुए हों, जैसा कि यह हिन्दुस्तान में तो है ही।'

– **'हरिजन', 14 नवंबर, 1934**

गाँधी इस प्रकार उन सीधी-सादी सहज मशीनों को चाहते थे, जो स्थानिक जन-समुदायों में सर्वसुलभ हों। लेकिन, वे वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी विकास के रंचमात्र विरोधी नहीं थे। उनका कहना सिर्फ यही था कि इसका लाभ चंद हाथों में सिमट कर न रह जाए, बल्कि वह जन-जन तक निर्बाध रूप में पहुंचे। उन्हीं के शब्दों में

– 'यदि गांव-गांव में, घर-घर में हम बिजली दे सकते हैं, तो गाँव वाले अपने औजारों को बिजली से चलाएं। परन्तु ऐसी अवस्था में ग्राम पंचायतों या राज्य उन बिजली घरों के मालिक होंगे, जैसे गांव के चरागाहों का स्वामित्व गांव का होता है

– **'हरिजन' 22 जून, 1935**

गाँधी बड़ी मशीनरी की अनिवार्यता को एकदम नहीं नकार देते थे। वे यह मानते थे कि निश्चित रूप से कुछ बड़े उद्योग होंगे, जो अनिवार्यतः केन्द्रित होंगे और उनमें भारी मशीनरी बहुतायत में इस्तेमाल होगी। हालांकि

ऐसे उद्योगों की चर्चा उन्होंने विस्तार में नहीं की है, फिर भी वे उन्हें कुंजी उद्योगों (Key industries) के नाम से पुकारते थे। उनका कहना था कि ये भारी उद्योग हमारी अर्थरचना के न्यूनतम अंग ही होंगे अर्थात् इनका स्थान प्रमुख न होकर, गौण ही रहेगा। लेकिन, इन पर नियंत्रण या स्वामित्व राज्य या समुदाय का होगा। यहां यह बात विशेष रूप से ध्यान में रखने की है कि दैनन्दिन उपभोग की वस्तुएं भारी उद्योग नहीं उत्पादित कर सकेंगे। बुनियादी जरूरतों की चीजें स्थानिक प्रत्यक्ष समुदायों की छोटी-छोटी इकाइयों द्वारा उत्पादित होंगी। श्रम सघन तकनीक अपनाने के कारण लोग इन इकाइयों की उत्पादन प्रक्रिया में भागीदार होंगे तथा उत्पादन, वितरण व प्रशासन का विकेन्द्रीकरण होता जाएगा। भारी मशीनरी के बारे में गाँधी के विचार हैं-

'सार्वजनिक उपयोग की ऐसी बड़ी मशीनों का भी अपना अनिवार्य स्थान है, जिन्हें मनुष्य के हाथ की मेहनत से नहीं चलाया जा सकता है। लेकिन ऐसी मशीनों पर सरकार का नियंत्रण रहेगा।'

- 'हरिजन', '22 जून, 1935

गाँधी की दृष्टि से मशीनों से पैदा होने वाली बुराइयों की कोई सीमा नहीं है। ये करोड़ों-करोड़ लोगों का स्वत्व छीनकर भौतिक शक्ति और सम्पत्ति का भारी केन्द्रीयकरण करती हैं। करोड़ों लोगों का रक्तदोहन कर उनके झोपड़ों से काफी दूरी पर स्थित बड़े-बड़े उद्योगों का पेट भरने का काम ये मशीनें कर रही हैं। उत्पादन के सारे साधनों, कल-कारखानों और मिलों या औद्योगिक प्रतिष्ठानों का अन्तिम और वास्तविक नियंत्रण और स्वामित्व जिन चंद हाथों में है, उनकी संख्या पूरी जनसंख्या की तुलना में प्रायः नगण्य-सी है। इसका नतीजा एक ओर तो सम्पत्ति संचय, राज सत्ता और अपरिमित भौतिक शक्ति की मायापुरी है और दूसरी ओर आम लोगों के लिए न तो काम है, न दाम है और न आराम है। यही कारण है कि गाँधी, मशीनों के लिए पागलपन की हद तक जो ललक है, उसके घोर विरोधी थे, खुद मशीन के कतई नहीं। मशीनों के लिए जो विवेकान्ध चूहा-दौड़ चल रहा है, वह आखिर किसलिए? वह तो मानव की श्रमशक्ति बचाने के लिए ही है न। इस संदर्भ में गाँधी का कथन है-

'लोग इस श्रम शक्ति को बचाने की धुन में यहां तक आगे बढ़ जाते हैं कि हजारों लोग बेकार होकर खुली सड़कों पर पड़कर भूखों मरने लग जाते हैं। मैं समय और श्रम दोनों की बचत करना चाहता हूँ, लेकिन मानव जाति के किसी एक अंश के लिए नहीं, वरन् सबके लिए। मैं चाहता हूँ कि पूँजी का संचय चंद हाथों में न रहकर, सभी हाथों में हो। मशीन आज केवल कुछ व्यक्तियों को लाखों लोगों की पीठ पर सवार होने में सहायता पहुँचती है। इन सबके पीछे मेहनत बचाने की कल्याण भावना नहीं, वरन् लालच है। अपनी समस्त शक्ति से इस व्यवस्था के विरोध में मैं लड़ रहा हूँ। मशीनों को मनुष्य की हडिड्यां चूसने का काम नहीं करने देना है।'

- 'यंग इंडिया', 13 नवंबर, 1924

गाँधी यंत्रकला के विकास के विरोधी कतई नहीं थे। उनका विरोध सिर्फ वहीं था, जहां उच्च तकनीक लोगों को स्वाश्रयी और आत्म निर्भर बनने से रोकती है। बड़ी-बड़ी मशीनों से बाजारोन्मुख अर्थव्यवस्था और स्वार्थपूर्ण स्पर्धा की समस्यायें उठ खड़ी होती हैं, जिससे निमर्म शोषण और साम्राज्यवाद को बढ़ावा मिलता है। गाँधी का मानना है-

'बड़े पैमाने पर औद्योगीरण किये जाने का परिणाम यह होगा कि होड़ और बाजार की समस्यायें पैदा होंगी। इनके फलस्वरूप गांव वालों का किसी न किसी रूप में शोषण किया जायेगा। इसलिए हमें इस बात को ध्यान में रखकर चलना है कि गांव आत्मनिर्भर हों और अपनी जरूरत का सामान मुख्यतः वहीं तैयार कर लें। यदि ग्रामोद्योगों का यह स्वरूप कायम रखा जाए, तो फिर इस पर कोई आपत्ति नहीं है कि गांव वाले आधुनिक प्रौद्योगिकी और उपस्करों का प्रयोग करें- ऐसे यंत्रोपकरणों का, जो वे आसानी से प्राप्त कर सकें और स्वयं बना सकें। शर्त यह ही कै इन यंत्रों का उपयोग दूसरों का शोषण करने के लिए नहीं होना चाहिए।'

- 'हरिजन', 29 अगस्त, 1936

इन ढेर सारे उदाहरणों के प्रकाश में अब यह स्पष्ट हो चुका है कि गाँधी मशीन, मनुष्य और प्रकृति के बीच स्वस्थ सम्बन्ध कायम करना चाहते थे। मशीनें मनुष्य की साथी-संगी हों, उसकी कार्यक्षमता में वृद्धि करें और उसे ऊब व उकताहट पैदा करने वाले बोझिल श्रम से बचायें। जहाँ लोग रह रहे हैं, वहीं उन्हें रोजगार के पर्याप्त अवसर उपलब्ध हों, इसके लिए उन्हें बड़े-बड़े शहरों की तरफ न भागना पड़े। जहां लोग रह रहे हैं, वहीं उनकी छोटी-छोटी कर्मशालायें हों, जिनमें छोटी-छोटी मशीनें लगी हों। ये कर्मशालायें उनकी बुनियादी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए हों।

sdprasad24oct@yahoo.com

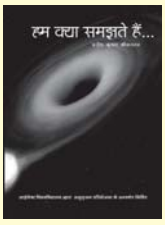

सन 1951 में कानपुर में जन्में प्रदीप कुमार श्रीवास्तव वरिष्ठ विज्ञान संचारक और विजिटिंग एसोसिएट हैं। उन्होंने अनेक विज्ञान लेख और पुस्तकें लिखी हैं जिनमें एलिमेंट्री बायोफिजिक्स, मेकेनिक्स, ऑप्टिक्स आदि उल्लेखनीय हैं। पिछली सदी के प्रारंभ से ही क्वांटम-भौतिकी ने पदार्थ व ऊर्जा की मूलभूत रचना व कार्यशैली के एक नये तथा विस्मयकारी सिद्धान्त की नींव डाल दी थी। क्वार्क, ब्लैक-होल, बिग-बैंग, जीन्स, एंटी मैटर आदि शब्द पिछली सदी की सबसे महत्वपूर्ण खोजों के परिचायक हैं। इनका रोचक एवं परिचयात्मक वर्णन, एक झलक, देने का प्रयास सरल सुबोध भाषा में किया गया है।

13 सितम्बर 1931 में जन्में शिवगोपाल मिश्र एम.एस-सी, डी.फिल, साहित्य रत्न में शिक्षित डॉ. मिश्र विज्ञान परिषद् प्रयाग इलाहाबाद के प्रधानमंत्री हैं। वे शीलाधर मृदा विज्ञान शोध संस्थान के निदेशक भी रहे। उन्होंने कई विज्ञान कोश व ग्रंथों की रचना की जिसमें हिन्दी में 26 तथा अंग्रेजी में 11 पुस्तकों सहित 5 पाठयपुस्तकें, नौ साहित्यिक पुस्तकें, महाकवि निराला पर तीन पुस्तकें उल्लेखनीय हैं। आपको आत्माराम पुरस्कार, भारत भूषण सम्मान आदि से विभूषित किया गया है। विज्ञान को समझने-समझाने के लिए हिन्दी विज्ञान लेखन के क्रमिक विकास का विहंगावलोकन आवश्यक है। वस्तुतः ऐसी ही सोच के कारण हिन्दी विज्ञान लेखन के भूत, वर्तमान तथा भविष्य विषयक यह पुस्तक गम्भीरता से विचार करके रोचक तरीके से लिखी गई है।

गाँधी और उनका वैज्ञानिक चिंतन

बलराम गुमास्ता वैज्ञानिक दृष्टि सम्पन्न महत्वपूर्ण कवि हैं। दैनिक जीवन में घट रही चीजों को वे अपनी कविता का विषय बनाते हैं। पेशे से इंजीनियर रहे बलराम के लेखन में विश्व को बचाये रखने की जद्दोजहद और चिंता प्राथमिकता से आती हैं।

बलराम गुमास्ता

जो लोग गाँधी के बारे में ठीक से नहीं जानते उन्होंने यह भ्रम पाला कि गाँधी विज्ञान विरोधी थे। वर्तमान परिस्थितियों में आज पूरी दुनिया गाँधी के विचारों और चिंतन की ओर आशा से देख रही है।

हिंद-स्वराज में गाँधी जी ने विज्ञान को लेकर अपना मंतव्य साफ कर दिया था। वह विज्ञान की उपलब्धियों में मनुष्य की नियत को लेकर चिंतित रहते थे, वह विज्ञान की समाज और पर्यावरण संगत उपलब्धियों के पक्षधर थे। उनका मानना था कि विज्ञान की उपलब्धियां समाज के प्रति उत्तरदायी होने के साथ-साथ उसके केन्द्रिय उद्देश्यों में आमजन और सबसे गरीब का हित समाहित होना चाहिए।

इसी चिंता के चलते गाँधी जी अक्सर एल्फ्रेड वॉलेसि के कहे गये शब्दों को विज्ञान के संदर्भ में दुहराते थे कि 'वैज्ञानिक खोजों और उपलब्धियों के साथ-साथ, मनुष्य की नैतिक इंद्री का विकास नहीं हुआ।' नैतिक ह्रास नतीजा वैज्ञानिक उपलब्धियों पर लालच के चलते कुछ मुट्ठी भर लोगों का अधिकार।

लालच से अनैतिक व्यापार, प्रकृति का अनियंत्रित दोहन पूँजी का केन्द्रीकरण और अन्ततः हथियारों की होड़ और धरती नष्ट होने की कगार पर, गाँधी ऐसी वैज्ञानिक उपलब्धियों के खिलाफ थे।

गाँधी के जीवन दर्शन में इसीलिए स्वच्छता, अहिंसा, नैतिक मूल्यों और सत्य के आग्रह का बड़ा महत्व है और उन्होंने इन नैतिक मूल्यों की ताकत का प्रादर्श अपने जीवन में प्रस्तुत किया जो आज दुनिया के लिए सच्ची राह दिखायेगा और मनुष्य को उसकी गरिमा दिलायेगा। गाँधी जी का कहना था कि उनका जीवन ही उनका सच्चा संदेश है।

पृथ्वी के संसाधनों का अनियंत्रित दोहन और मनुष्य के लालच के संबंध में उनका कहना था कि यूँ तो पृथ्वी सभी की जरूरतों के लिए संसाधन उपलब्ध कराने में सक्षम है मगर वह एक व्यक्ति के भी लालच की पूर्ती करने में असमर्थ है।

प्राकृतिक संसाधनों के दोहन और लालच का तो यह हाल हे कि विकसित देशों और वहीं कार्यरत बहुराष्ट्रीय सकंपनियों ने अगर अपने लालच में संयम नहीं बरता तो भविष्य में उनकी भूख को पूरा करने में 27 पृथ्वियों के संसाधन भी कम पड़ जायेंगे। इससे सहज ही प्रकृति के संसाधनों के अन्याय पूर्ण बँटवारे और वैज्ञानिक उपलब्धियों के द्वारा ताकत और पूँजी का केन्द्रीकरण हुआ, धरती को विकसित, विकासशील और अविकसित राष्ट्रों की श्रेणी में बाँटकर पूँजी का असमान बँटवारा जारी है आज जिसने तमाम-मानव निर्मित त्रासदियों को जन्म दिया।

विकास के नाम पर कुछ मुट्ठी भर बहुराष्ट्रीय कंपनियों और निहित स्वार्थों के चलते इस तरह के अमानवीय, असंगत निर्णय लिये गये कि आज करोड़ों लोग जहाँ विस्थापन की पीड़ा भोग रहे हैं वहीं कई करोड़ अपनी-जमीन, जंगल और पानी जैसे संसाधनों से हाथ धो चुके हैं।

प्राकृतिक संसाधनों पर अधिकार और बँटवारे पर वह हर एक को बराबर के अधिकार के हामी थे। याने प्राकृतिक संसाधनों पर सबका बराबर का अधिकार हो, ऐसा वह अपने खुद के व्यवहार में भी आचरण करते थे।

यहाँ एक प्रसंग का जिक्र गाँधी के उपरोक्त विचार को पुष्ट करता है, वह इलाबाद में नेहरू जी के यहाँ रुके थे, सुबह मुँह हाथ धोने उन्होंने एक बाल्टी पानी भिजवाया, गाँधी जी ने एक बाल्टी पानी का उपयोग किया और दूसरी बाल्टी पानी लौटा दिया, नेहरू जी ने कहा गाँधी जी यह

इलाहाबाद है, यहाँ गंगा-जमना बहतीं हैं, पानी की कमी इलाहाबाद में नहीं है। इस पर गाँधी का कहना था मैंने अपने उपयोग भर पानी ले लिया, यह उपलब्ध जल सबके लिए है और उस पर सबका समान अधिकार है, अतिरिक्त पानी का उपयोग मेरी नैतिकता के हिसाब से न्याय संगत नहीं।

गाँधी जी का यह प्रसंग पानी के साथ-साथ प्रकृति के सभी संसाधनों के समान बँटवारे और उन पर सभी के समान अधिकार का संदेश देता है।

आज प्राकृतिक संसाधनों का विकसित देशों और उनकी बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने अनियंत्रित दोहन करके एक भेदभाव पूर्ण गरीब-अमीर में संसार को बाँट दिया है। उनके औद्योगिक प्रदूषण और जीवन शैली ने पर्यावरणीय समस्याओं को मनुष्य के लिए घातक बना दिया है। दुनिया कार्बन-डाय-आक्साइड गैसों और क्लोरोफ्लोरो कार्बन के उत्सर्जन से ग्लोबल वार्मिंग और ओजोन परत में छेद होने से पराबैगनी विकरण की समस्याओं से जूझ रही है। पिछले 100 सालों में पृथ्वी के वातावरण का तापक्रम 3-6 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ा है। नतीजा यह है कि ग्रीनहाउस प्रभाव ने गर्मी और बरसात की असामान्य स्थितियों को जन्म दिया, ग्लेशियरों के पिघलने से समुद्रों का जल स्तर बढ़ रहा है और भविष्य में कई समुद्र किनो के शहर जलमग्न हो सकते हैं। पर्यावरण प्रदूषण ने शहरों में बीमारियों और मृत्यु दर को बढ़ा दिया है।

यह नर-संहार और पर्यावरण विनाश का कार्य वह लोग कर रहे हैं जो दुनिया की आबादी के सिर्फ दस प्रतिशत है और उनके कब्जे में सबसे ज्यादा संसाधन और संपदा है, जबकि चालीस प्रतिशत आबादी के पास पाँच प्रतिशत तथा बीस प्रतिशत आबादी के हिस्से में सिर्फ दो प्रतिशत सम्पदा और संसाधन है। यही असमानता अन्ततः शोषण और हिंसा के लिए जिम्मेवार है। गाँधी इस असमानता का हमेशा विरोध करते रहे।

प्रकृति की व्यवस्था इतनी सहज और न्याय संगत है कि जब पौधे अपने लिए प्रकाश की उपस्थिति में फोटो सिंथेसिस द्वारा अपना भोजन बनाते हैं तो ग्लूकोज का एक परमाणु बनाने वह, 6 परमाणु कार्बन डायआक्साइड, 6

आज आवश्यकता है, गाँधी के स्वावलंबी ग्राम स्वराज की, जहाँ खेती के लिए वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों जैसे सौर, पवन और बायोगैस आदि के उपयोग तथा कम्पोस्ट और केंचुआ खाद के साथ-साथ स्थानीय संसाधनों के उपयोग को बढ़ावा देने की। साथ ही अनुभव और पूर्वजों से अर्जित प्रकृति संगत ज्ञान का उपयोग कर संरक्षित और सतत् तथा समान्वित खेती करने की जिससे किसान के लिए खेती लाभ का सौदा हो और पर्यावरण संगत विकास की अवधारणा को बल मिले।

परमाणु पानी के उपयोग करते है और बदले में ऑक्सीजन के 6 परमाणु वापिस वायुमंडल में लौटा देते हैं। अंधाधुंद पेड़ों की कटाई से प्रदूषण नियंत्रण असंभव हो गया है। अब यह समय की मांग है कि मानव अस्तित्व को बचाने पेड़ों की कटाई पर प्रतिबंध के साथ-साथ वृक्षारोपण पर ध्यान दिया जाये और प्राकृतिक संसाधनों के दोहन में संयम से काम लिया जाये तथा लालच को रोका जाये।

पर्यावरण प्रदूषण के दुष्परिणाम से आज कृषि भी जूझ रही है। खतरनाक खरपतवार और कीट नियंत्रण करने वाले जहरीले रसायनों और रासायनिक खाद के उपयोग तथा ऊर्जा के लिए पेट्रोलियम के बढ़ते उपयोग ने जहाँ मिट्टी को मृत बना दिया है वहीं नदियों, तालाबों तथा वायुमंडल को विषाक्त भी।

आज आवश्यकता है, गाँधी के स्वावलंबी ग्राम स्वराज की, जहाँ खेती के लिए वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों जैसे सौर, पवन और बायोगैस आदि के उपयोग तथा कम्पोस्ट और केंचुआ खाद के साथ-साथ स्थानीय संसाधनों के उपयोग को बढ़ावा देने की। साथ ही अनुभव और पूर्वजों से अर्जित प्रकृति संगत ज्ञान का उपयोग कर संरक्षित और सतत् तथा समान्वित खेती करने की जिससे किसान के लिए खेती लाभ का सौदा हो और पर्यावरण संगत विकास की अवधारणा को बल मिले।

गाँधी इसी स्थानीय दरयाई अर्थ नीति के हामी थे। उनका जोर गाँव के स्तर पर उपलब्ध संसाधनों का उपयोग करने का होता था, वह मानते थे कि जब संसाधन समुचित उपलब्ध होंगे तो ना ही उनकी कमी होगी ओर न ही कमी के चलते भविष्य में काला- बाजारी और अन्ततः अनैतिक व्यापार और हिंसा का जन्म। उदाहरण के लिए वह कहते थे कि गाँव के घर मिट्टी और स्थानीय उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों से बने तो मिट्टी कभी कम नहीं पड़ेगी और यह उपयोग पर्यावरण संगत भी होगा। जबकि सीमेंट से घर बनाने में आर्थिक और पर्यावरणीय समस्याएँ पैदा होंगी।

गाँधी जी का जोर बुनयादी शिक्षा पर था वह चाहते थे कि 14 वर्ष तक शिक्षा मात्र भाषा में हो और शिक्षा में दिमाग, श्रम तथा दिल का ऐसा प्रशिक्षण हो कि विद्यार्थी किसी एक तकनीक में पारंगत होकर कुछ इस तरह बाहर निकले कि उसके हाथ में इतना हुनर हो कि वह अपना जीवन-यापन कर सके। शिक्षा उसे समाज उन्मुख नैतिक और आत्मनिर्भर बनाए। वह कुटीर उद्योगों के विकास के भी पक्षधर थे तथा संसाधनों और पूँजी की केन्द्रीय सत्ता बनने के खिलाफ।

गाँधी जी ने जीवन के हर क्षेत्र को अपने अनुसंधान का हिस्सा बनाया। शाकाहार, प्राकृतिक चिकित्सा, आयुर्वेद, चिंतन, प्रार्थना और योग जैसे विषयों पर उन्होंने प्रयोग किये। ये सभी प्रयोग समाज और प्रकृति संगत सरोकारों को पाने में और सत्य तथा अहिंसा की अमूल्य खोज में सहायक हुए। गाँधी के यह सारे बहुमूल्य प्रयोग आज के विज्ञान के लिए मानव हितकारी और प्रकृति संगत विकास की अवधारणा का सुन्दर, सुखद रास्ता दिखाते हैं। नैतिक मूल्यों पर आधारित समाज और गरीब उन्मुख वैज्ञानिक उपलब्धियाँ ही सुन्दर, सुखद, अहिंसक समाज बनाने में सहायक होंगी।

आज गाँधी जी की 150वीं जयंती पर उन्हें सादर नमन। गाँधी चिंतन ही वह एक मात्र आशा है जो दुनिया को हिंसा, युद्धों और नष्ट होने से बचाये।

bkgumasta16@gmail.com

गाँधी विज्ञान और नैतिकता

महेन्द्र गगन

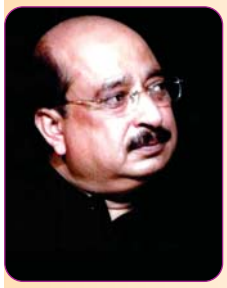

पेशे से पत्रकार-संपादक और स्वभाव से कवि महेन्द्र गगन की विज्ञान तथा अन्य क्षेत्रों में महत्वपूर्ण उपस्थिति है। पहले-पहल के संपादक महेन्द्र गगन गाँधी वाङ्मय के गहरे अध्येता हैं। गाँधी के विज्ञान पर उन्होंने सूक्ष्म अन्वेषण किया है। यहाँ प्रस्तुत है उनका महत्वपूर्ण लेख।

विज्ञान को लेकर गाँधी जी के दर्शन को देखें तो एक बात साफ तौर पर निकल कर आती है कि गाँधी विज्ञान विरोधी नहीं थे। लेकिन उनकी सोच यह थी कि विज्ञान मनुष्य का मददगार हो, ना कि आदमी की छाती पर चढ़कर उस पर शासन करने लगे। गाँधी जी ऐसा विज्ञान चाहते थे जो आदमी के लिए हो और आदमी द्वारा संचालित हो। गाँधी जी ऐसा विज्ञान नहीं चाहते थे जो आदमी को संचालित करने लगे। गाँधी जी ने विज्ञान के विध्वंसकारी रूप और मुनाफाखोर चरित्र का विरोध किया था। उनका मानना था कि विज्ञानवेत्ताओं को सामाजिक नजरिए से सर्वोदयी दृष्टिकोण के साथ विकास की अवधारणा पर विचार करना चाहिए। गाँधी देश के पारंपरिक संसाधनों से देश की जरूरतों को पूरा करने के पक्ष में थे। गाँधी के विज्ञान को लेकर विचार श्रम प्रधान और पर्यावरण के संरक्षण से जुड़े रहे हैं।

17-9-1919 को यंग इण्डिया में लिखे अपने आलेख में गाँधी कहते हैं- 'शुद्ध स्वदेशी मशीनों से कतई कोई विरोध नहीं है। स्वदेशी का आंदोलन तो केवल विदेशी वस्त्रों के इस्तेमाल के खिलाफ है। मिलों में तैयार किये गये वस्त्र पहनने पर कोई आपत्ति नहीं है। परन्तु मैं स्वयं मिल का बना कपड़ा नहीं पहनता और स्वदेशी की प्रतिज्ञा के साथ मैंने यह स्पष्टीकरण भी अवश्य जोड़ दिया है कि हाथ का कता और बुना कपड़ा पहनना ही प्रत्येक भारतीय का आदर्श होना चाहिए।'

अपने इस लेख में गाँधी आगे कहते हैं-देश में मिल उद्योग और करधा, दोनों के लिए गुंजाइश है। इसलिए चरखों के साथ मिलों की संख्या भी बढने़ दीजिए। और मेरा ख्याल है कि चरखे और हथकरधे भी निःसंदेह एक प्रकार की मशीनें ही हैं। चरखा बुनाई मिल का ही लधु रूप है। मैं चाहता हूँ ऐसी छोटी-छोटी सुंदर सी मिलें देश के घर-घर में दिखने लगे। परन्तु देश को हाथ के कताई-बुनाई उद्योग की भी पूरी-पूरी आवश्यकता है। किसी भी देश में कृषि के किसी एक अनुपूरक उद्योग के बिना किसानों का काम नहीं चल सकता और भारत में तो कृषि का दारोमदार ही अनुकूल वर्षा पर होता है। इसलिए यहाँ पर तो चरखा और हथकरधा कामधेनु के समान हैं।

गाँधी इसके साथ देश के किसानों की भी चिंता करते हैं और कहते हैं-यदि हमारे देश की

आवश्यकता के लायक वस्त्र तैयार करने के लिए पर्याप्त मिलें हों, तो भी दिन-दिन निर्धनता के अधिक शिकार बनते जाने वाले हमारे किसानों के लिए अनुपूरक उद्योग खड़ा करने की आवश्यकता बनी ही रहेगी और जो करोड़ों जनों के लिए उपयुक्त हो ऐसा उद्योग हाथ की कताई और बुनाई का ही हो सकता है। सवाल मिलों या मशीनों के विरोध करने का नहीं है। सवाल यह है कि हमारे देश के लिए उपयुक्त क्या है? मैं न तो देश में मशीनों के निर्माण के आंदोलन का विरोध करता हूँ और ना ही मशीनों में और अधिक सुधार करने का। मैं तो बस एक प्रश्न का उत्तर चाहता हूँ कि ये मशीनें हैं किस मतलब की? रस्किन के शब्दों में पूछता हूं- क्या ये मशीनें ऐसी होंगी कि एक मिनिट में लाखों व्यक्तियों को ध्वस्त कर दें या ऐसी होंगी कि बंजर भूमि को कृषि योग्य और उपजाऊ बना दें? यदि विधान बनना मेरे हाथों में होता तो मैं विनाशकारी मशीनों के निर्माण की प्रवृत्ति को दण्डनीय बना देता और उस उद्योग को संरक्षण देता जो इतने हल तैयार करता जिसे हर आदमी चला सके।

(अंग्रेजी से यंग इडिया 17-9-1919)

उपरोक्त आलेख में स्पष्ट है कि गाँधी जी की सोच में पहले आम आदमी था, उसके हित थे और उसी के अनुसार वे मशीन या विज्ञान को जरूरी मानते थे। वे प्रगति में कोई रोड़ा अटकाना नहीं चाहते थे। वे विज्ञान को वैज्ञानिक से सीधे आम आदमी तक सरल रेखा की तरह पहुँचाना चाहते थे। गाँधी ने दक्षिण अफ्रीका में अपने प्रवास के दौरान ही विज्ञान को लेकर अपना चिंतन और लेखन प्रारंभ कर दिया था। गाँधी जी के लेखन में विज्ञान शब्द अनेक बार आता है किन्तु वे उसे अपनी विचारधारा की सोच के अनुकूल ही स्वीकार करते हैं। उनकी मूल चिंता यह थी कि विज्ञान यदि नैतिकता से अलग होगा तो विकराल रूप ग्रहण कर लेगा जो देश के आम आदमी के लिए खतरनाक होगा। इसीलिए वे चाहते थे कि आधुनिक विज्ञान की खोजों के साथ इन्सान की नैतिक इंद्रि का विकास भी हो।

1910-20 के अपने आलेखों में गाँधी 'वैकल्पिक विज्ञान' की रूपरेखा दर्शाते हैं। वे मानते थे कि मशीन ऐसी गलती नहीं कर सकती, जिसे सुधारा नहीं जा सकता। जरूरत

'हिन्द स्वराज' में लिखी अपनी बातों पर गाँधी दुख से कहते हैं-'मुझे दुख के साथ कहना पड़ता है कि पुस्तक की भावना के अनुसार तो उसका भी पालन नहीं हो रहा है। अगर होता तो सिर्फ एक ही दिन में भारत में स्वराज कायम हो जाता।

हमें अपनी मानसिक दशा को दुरुस्त करने की है। उनकी चिंता थी कि आज भी हमारे यहाँ विज्ञान की शिक्षा दिये जाने का माध्यम अंग्रेजी बना हुआ है। उनकी मंशा थी कि विज्ञान की शिक्षा स्थानीय भाषा में दी जाए। 1930 के दशक में उन्होंने इसी संदर्भ में विचार प्रकट किये थे, जिसमे 'नई तालीम' के अर्न्तगत गाँव-गाँव में युवा प्रतिभाओं के आगे आने की बात थी। गाँधी की वैज्ञानिक सोच पर संदेह करने वाले यह भूल जाते हैं कि गाँधी ने हमारी बुनियादी कमियों को ध्यान में रखकर विज्ञान को स्वीकारने की बात कही थी जो आज भी मौजूं है। पश्चिम के शिक्षण से वे देश की कोई संगति नहीं देखते थे। तभी तो अंग्रेजों की रेल व्यवस्था, चिकित्सा व्यवस्था और न्याय व्यवस्था पर सवाल उठाते हैं। यदि हम आज के संदर्भ में देखें तो गाँधी जी की वे शंकाए हमारे सामने सच के रूप में प्रकट होती नजर आती हैं।

गाँधी जी की किताब 'हिन्द स्वराज' आज बेहद चर्चित और जरूरी किताब के रूप में दिखलाई पड़ती है। गाँधी जी ने 1910 में अपनी उस किताब पर बात करते हुए लिखा था- यह बेशक मेरे लिए सौभाग्य की बात है कि मेरी यह छोटी सी किताब की ओर बहुत अधिक लोगों का ध्यान गया है। मूल किताब गुजराती में है। सबसे पहले यह दक्षिण अफ्रीका में 'इण्डियन ओपिनियन' अखबार में छपी थी। अपने इसी लेख में गाँधी जी ने कहा था- मैं रेलों और अस्पतालों को खत्म करने का प्रयत्न नहीं कर रहा हूँ, वैसे यदि वे कुदरती तौर पर नष्ट हो जाएं तो मैं उसका स्वागत नहीं करूँगा। न तो रेलें, न अस्पताल ही ऊँची और पवित्र सभ्यता की कसौटी है। ज्यादा से ज्यादा हम उन्हें एक जरूरी बुराई ही मान सकते हैं। किसी राष्ट्र के नैतिक मानक तो वे एक इंच भी नहीं बढ़ाते। न मेरा मकसद अदालतों को स्थायी रूप से खत्म कर देना ही है। हालांकि मैं मानता हूँ कि यह एक ऐसी बात है सभी को जिसके खत्म हो जाने की कामना करनी चाहिए। सारी मशीनों और मिलों को खत्म करने की कोशिश तो मैं और भी कम कर रहा हूँ। इसके लिए लोग आज जितने तैयार हैं, उससे कहीं ऊँचे दर्जे की सादगी और त्याग की जरूरत है।

'हिन्द स्वराज' में लिखी अपनी बातों पर गाँधी दुख से कहते हैं-'मुझे दुख के साथ कहना पड़ता है कि पुस्तक की भावना के अनुसार तो उसका भी पालन नहीं हो रहा है। अगर होता तो सिर्फ एक ही दिन में भारत में स्वराज कायम हो जाता।

भारत यदि प्रेम के सिद्धांत को सक्रिय रूप से अपना ले और राजनीति में उस पर अमल करे तो स्वराज उसे ईश्वर के आशीर्वाद के रूप में सहज ही प्राप्त हो जायेगा। लेकिन मुझे बहुत दुःख के साथ स्वीकार करना पड़ता है कि अभी वह शुभ घड़ी बहुत दूर है।

महात्मा गाँधी किसी भी हालत में भारतीयता का साथ नहीं छोड़ते। उनकी सोच धर्म पर आधारित समाज रचना की है। वे भारत की असली शक्ति पहचानने वाले नेता हैं। वे कहते हैं-'मुझे धर्म प्यारा है इसलिए मेरा पहला दुख तो यह है कि हिन्दुस्तान धर्म भ्रष्ट होता जा रहा है। धर्म का अर्थ मैं हिन्दू, मुस्लिम या जरस्थोरती' से नहीं करता। लेकिन सब धर्मों के अन्दर जो धर्म है वह हिन्दुस्तान से जा रहा है।' गाँधी की सोच किसी भी विषय चाहे वह धर्म हो, विज्ञान हो या अन्य कोई संदर्भ में वे भारत को एक राष्ट्र के रूप में देखकर सोचते थे। राष्ट्र के अन्तिम छोर पर जो आदमी है उसका कल्याण कैसे हो उनकी यह मूल चिन्ता थी। इसके लिए वे किसी भी चीज पर समझौता करने को तैयार नहीं थे। इसीलिए गाँधी बड़े हैं और उनके विचार आज भी प्रासंगिक हैं।

pahalepahal@gmail.com

गाँधी का वैज्ञानिक दृष्टिकोण

अभिषेक कुमार मिश्र

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय से भूविज्ञान में स्नातकोत्तर, भूवैज्ञानिक एवं विज्ञान लेखक। साहित्य, कला-संस्कृति, विरासत, फ़िल्म आदि में भी रुचि। इग्नू के भूविज्ञान पाठ्यक्रम के अनुवाद में प्रतिभागिता। 'विज्ञान प्रगति', 'इलेक्ट्रोनिकी आपके लिए' 'अहा ! जिंदगी', 'विज्ञान कथा', आदि कई पत्र-पत्रिकाओं, ब्लॉग्स आदि में साइंस फिक्शन तथा लेख आदि प्रकाशित। 'पूरी दुनिया' मासिक पत्रिका के लिए नियमित विज्ञान कॉलम लेखन।

मुख्य रूप से हिंदी विज्ञान लेख, विज्ञान कथाएं और हमारी विरासत के बारे में लेखन।

'आने वाली पीढ़ियाँ शायद मुश्किल से ही यह विश्वास कर सकेंगी कि गाँधी जैसा हाड़-मांस का पुतला कभी इस धरती पर था।' - गाँधी जी को इंसानों में एक चमत्कार मानने वाले महान् वैज्ञानिक आइंस्टीन यदि इन शब्दों में उन्हें याद करते हैं तो हमें समझना होगा कि उनके इस आकलन में अतिशयोक्ति या मात्र औपचारिकता नहीं बल्कि एक संवेदनशील वैज्ञानिक व्यक्तित्व का एक अन्य वैज्ञानिक दृष्टिकोण के व्यक्तित्व से आत्मीय जुड़ाव भी है जिसे आज भी कई लोग समझ न सके हैं।

महात्मा गाँधी कहते थे कि 'मेरा जीवन ही मेरा संदेश है', अपने जीवन को वो सत्य के साथ प्रयोग मानते थे। गौर से देखें तो पायेंगे कि यह उनका वैज्ञानिक दृष्टिकोण ही था जो प्रयोगों के आधार पर अपने निष्कर्षों में सुधार करता अपनी खोज में सतत आगे बढ़ता रहता है। वो अपने किसी एक निष्कर्ष से बंधे नहीं रहते लेकिन अपने प्रयोग की शुद्धता बनाये रखने के लिए साध्य और साधन की शुचिता पर जरूर ध्यान देते हैं।

भारत की विश्व को योगदान की बात उठती है तो उसमें एक नाम गाँधी विचार का भी आता है। गाँधी जी की कार्यशैली, उनके विचारों ने पूरी मानवता को प्रभावित किया। भारतीय स्वतंत्रता संग्राम तो उनकी भूमिका से प्रभावित है ही, उससे पहले भी दक्षिण अफ्रीका में उन्होंने अपने विचारों को अमल में लाने की पहल शुरू कर दी थी। उससे भी पूर्व ब्रिटेन प्रवास के दौरान गाँधीजी की पारंपरिक सोच और वहाँ की आधुनिक जीवन पद्धति के मेल ने उनके विचारों को प्रभावित करना शुरू कर दिया था जिसे उन्होंने वहाँ कुछ लेखों और बाद में अपनी आत्मकथा में भी स्पष्ट किया है।

राजनीतिक, सामाजिक आदि कई विषयों पर गाँधीजी के विचारों की चर्चा तो होती रहती है पर विज्ञान के प्रति उनके विचारों को समग्र रूप से देखने के प्रयास कम ही मिलते हैं। उनकी छवि विज्ञान और तकनीक के विरोधी सदृश्य बनाई जाती है। बाजार आधारित अर्थव्यवस्था में यह स्वाभाविक भी है क्योंकि गाँधी जी के विचार लोगों को आत्मनियंत्रण की ओर प्रवृत्त करते हैं। ऐसा प्रतीत करवाया जाता है कि वो तकनीक के विकास के विरोधी थे। क्या यही वास्तविकता भी है! यदि उनके विचारों को गहराई से जानें, समझें और उनके सिद्धांतों की आज के वैज्ञानिक विकास की दिशा से तुलना करें तो इस क्षेत्र में गाँधी विचार की अहमियत का कुछ अनुमान लगा सकेंगे।

अंधविश्वास और धर्म एक चीज नहीं हैं। इसी प्रकार विज्ञान का विरोध भी धर्म से नहीं बल्कि अंधविश्वास से है। धर्म यदि मनुष्य को जीने की सही पद्धति सिखाता है, सभी के प्रति समान व्यवहार, समान विकास की सीख देता है तो विज्ञान इसकी स्थापना में एक सहायक की भी भूमिका निभा सकता है। गाँधीजी व्यक्तिगत, सामाजिक, राजनीतिक आदि हर क्षेत्र में धर्म की स्थापना चाहते थे। किन्तु उनका धर्म संकीर्णता लिए नहीं बल्कि समाज के हर स्तर के व्यक्ति के हित को सुनिश्चित करने वाला होता था और अपनी इस धारणा को उन्होंने अपने प्रयास से प्रत्येक क्षेत्र में अमल में लाने के प्रयास किए। क्या वास्तविक विज्ञान का मूल उद्देश्य सर्वजन के हित से अलग होता है! आजादी के बाद जब वो अन्य विषयों की ओर भी अपनी भूमिका तय कर रहे थे ऐसे में भारत का वैज्ञानिक विकास भी उनके सिद्धांतों से निश्चित रूप से प्रभावित हुआ होता। क्या गाँधीजी के विचारों पर आधारित मानव के विकास और सहयोग के लिए विकसित विज्ञान में आणविक बम जैसे अन्य विध्वंसक आविष्कारों की जगह होती! क्या वैज्ञानिक उन वैष्णव जनों से अलग हो सकते हैं जो पीड़ पराई और आम जन की मूल आवश्यकता को जान सकें! इस प्रश्न का उत्तर स्वयं ही समझा जा सकता है।

गाँधीजी के विचारों का प्रथम परिचय करवाती 'हिन्द स्वराज' में उनके द्वारा प्रस्तुत विचारों की एकतरफ़ा व्याख्या से उन्हें वैज्ञानिक विकास का विरोधी करार दिया जाता है। परंतु यह पूरी तरह

सच नहीं है। वैसे भी उनके विचार बंधे तालाब की तरह नहीं वरन बहती जलधारा के सदृश्य थे। विकास की उनकी अवधारणा थोड़ी पृथक थी। वो विज्ञान और विकास के कल्याणकारी मानवीय पहलू के समर्थक थे। 'हिन्द स्वराज' में उन्होंने विज्ञान के विध्वंसकारी और मुनाफाखोर रूप का विरोध किया है।

गाँधी जी के विज्ञान संबंधी विचार मूलतः श्रम प्रधान और पर्यावरण संरक्षण से जुड़े हैं। उन्होंने विज्ञान का सबसे विध्वंसकारी रूप हीरोशिमा और नागासाकी की तबाही के रूप में देखा था, इसलिए भारतीय परंपरा को ध्यान में रखते हुए उन्होंने विज्ञान के प्रति अपनी एक विशिष्ट विचारधारा विकसित की थी। उनका मानना था कि विज्ञान का विकास एक संयुक्त प्रयास के द्वारा होना चाहिए, जिसमें सभी की सहभागिता हो। वो विज्ञान में संवेदना और नैतिकता के सम्मिलित होने के पक्षधर थे। वह अक्सर वैज्ञानिक एल्फ्रेड वह्लेस के उन शब्दों को दोहराया करते थे, जिसमें उन्होंने कहा था कि विज्ञान की बढ़ती खोजों के साथ इंसान की नैतिक इन्द्रियों का विकास नहीं हुआ है।

गाँधी जी आधुनिक वैज्ञानिकों के प्रति भी काफी सम्मान रखते थे। आइंस्टीन से उनके पत्राचार होते थे और उन्होंने उनसे अपने आश्रम में मुलाक़ात होने की कामना भी व्यक्त की थी। आइंस्टीन भी अपने कक्ष में उनकी तस्वीर रखते थे जो उनके वैज्ञानिक विचारों पर नैतिकता के प्रभाव का संकेत था। उन्होंने कहा था कि 'समय आ गया है कि हम सफलता की तस्वीर की जगह सेवा की तस्वीर लगा दें।'

विज्ञान के प्रति समर्पण को लेकर मैडम क्युरी के योगदान और बलिदान से भी वो अवगत तथा प्रभावित थे। 1942 में उनकी सुपुत्री से मुलाक़ात होने पर उन्होंने मैडम क्युरी को एक तपस्विनी बताया और डॉ. सुशीला नायर जी से उनकी पुत्री द्वारा उन पर लिखी किताब के अनुवाद पर भी चर्चा की। डॉ. नायर ने अपने संस्मरण 'कारावास की कहानी' में गाँधीजी के उद्गार को निम्न शब्दों में लिखा है- 'वह तो सच्ची तपस्विनी थी। मेरे मन में होता है कि पेरिस जाकर उसका धर देख आऊँ। हमारे किसी वैज्ञानिक ने इतना दुख नहीं भोगा। नतीजा तो मैं यह निकालता हूँ कि हम पर अंग्रेजी की मेहरबानी होने के कारण हमने

गाँधीजी का आधुनिक तकनीक/यंत्रों से बैर नहीं था वो बस उसके मानव पर नैतिक, आर्थिक आदि प्रभाव को लेकर चिंतित थे। उन्होंने स्वयं रेल, जलयान, रेडियो, टेलीफोन आदि विभिन्न आविष्कारों का प्रयोग किया किन्तु सबके ऊपर उनका आग्रह इनके नैतिक पहलुओं पर रहता था। गाँधी जी की दिलचस्पी खगोल विज्ञान में भी थी। तारों को देखना और उन्हें जानना उन्हें पसंद था।

अंग्रेजों के ढंग से ही काम करना सीखा। शोध विभाग इत्यादि के सफ़ेद हाथी खड़े कर लिए। इतना पैसा खर्च होता है। इतनी बड़ी प्रयोगशालाएँ टाटा ने खड़ी कीं, सरकार ने भी कीं; पर काम वहाँ पर कितना होता है?'

गाँधी जी की औद्योगीकरण आदि के विरुद्ध होने की धारणा बनाई गई, किन्तु उनका कहना था कि उनकी प्रगति में रोड़ा अटकाने की कोई मंशा नहीं है। वह मानते थे कि मशीन ऐसी कोई गलती नहीं कर सकती, जिसे सुधारा न जा सके। जरूरत केवल अपनी मानसिक दशा को दुरुस्त रखने की है। वह मशीन के इंसानों पर हावी होने के समर्थन में नहीं थे।

विभिन्न अवसरों पर उन्होंने अपने इस विषय पर निम्न विचार व्यक्त किए थे-

'सारी मशीनों और मिलों को नष्ट करने के तो मैं और भी कम प्रयास कर रहा हूँ। इसके लिए जितनी सादगी और त्याग की अपेक्षा है, उसके लिए लोग अभी तैयार नहीं हैं।'

'मैं समृद्धि चाहता हूँ, मैं आत्मनिर्णय चाहता हूँ, मैं आजादी चाहता हूँ लेकिन ये सभी चीजें मैं आत्मा के लिए चाहता हूँ। मुझे संदेह है कि चकमक युग से इस्पात के युग तक पहुँचना कोई उन्नति है। मैं इसके प्रति उदासीन हूँ। आत्मा का विकास ही एक ऐसी चीज है जिसके लिए हमारी बुद्धि और समस्त क्षमताओं का इस्तेमाल किया जाना चाहिए।'

'सभ्यताएं आई हैं और गई हैं, और हमारी समस्त तथाकथित प्रगति के बावजूद मुझे बार-बार यह पूछने की इच्छा होती है कि - इस सबका प्रयोजन क्या है?'

आज पर्यावरण एक वैश्विक समस्या है। निःसंदेह गाँधी जी के समय में यह उतने गंभीर विमर्श का विषय नहीं बना था, किन्तु उनका यह कथन आज भी इस समस्या के मूल को इंगित करता है जिसमें उन्होंने कहा था कि - "पृथ्वी सभी मनुष्यों की जरूरत पूरी करने के लिए पर्याप्त संसाधन प्रदान करती है, लेकिन लालच पूरा करने के लिए नहीं।"

एक भविष्यवक्ता की भाँति गाँधी जी ने आगाह किया था कि - "ऐसा समय आएगा जब अपनी जरूरतों को कई गुना बढ़ाने की अंधी दौड़ में लगे लोग अपने किए को देखेंगे और कहेंगे, ये हमने क्या किया?"

इन विचारों और सवालों पर मंथन करने वाले महात्मा गाँधी की विचारधारा की एक झलक हमें मिल सकती है। किसी खास काल में किसी विषय पर उनकी राय की आलोचना हो सकती है, किन्तु उनके विचारों को समग्र रूप से देखने और समझने की आवश्यकता है।

गाँधी जी प्रथम दृष्टि में चाहे जितने धार्मिक दिखें किन्तु गौर से देखें तो उनके विचारों में हमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण ही मिलेगा। विज्ञान ईश्वर को नहीं मानता, वह सत्य की खोज का प्रयास करता है। गाँधीजी भी सत्य को ही ईश्वर मानते थे। इस सत्य को पाने के लिए वो विभिन्न प्रयोग करते थे। उनका कहना था कि एक ही विषय पर उनके दो मतों में विरोधाभास दिखे तो बाद वाले मत को ही उनकी राय मानी जाए, क्योंकि वह वक्त के साथ प्रयोगों से और परिपक्व हुआ होगा। ध्यान से देखें तो यह किसी खोज के विभिन्न पहलुओं को तलाशने का वैज्ञानिक दृष्टिकोण ही है।

गाँधीजी का आधुनिक तकनीक/यंत्रों से बैर नहीं था वो बस उसके मानव पर नैतिक, आर्थिक आदि प्रभाव को लेकर चिंतित थे। उन्होंने स्वयं रेल, जलयान, रेडियो, टेलीफोन

आदि विभिन्न आविष्कारों का प्रयोग किया किन्तु सबके ऊपर उनका आग्रह इनके नैतिक पहलुओं पर रहता था। गाँधी जी की दिलचस्पी खगोल विज्ञान में भी थी। तारों को देखना और उन्हें जानना उन्हें पसंद था। 1932 में यरवदा जेल में रहते हुये उनके साथ डी.बी. केलकर (काका केलकर) भी थे जो स्वयं खगोल विज्ञान में गहरी रुचि रखते थे, के सानिध्य में उन्हें इस पर अपनी जानकारी कुछ और बढ़ाने का भी अवसर मिला। अपनी अन्य जिम्मेदारियों के कारण उन्हें इस दिशा में अपनी रुचि को आगे बढ़ाने का चाहे यथेष्ट समय न मिल पाया, किन्तु उन्होंने साबरमती आश्रमवासियों आदि को लिखे विभिन्न पत्रों में उन्हें आकाशीय अवलोकन के लिए इसे 'शांति और स्वास्थ्य देने वाली गतिविधि' के रूप में प्रेरित किया। खगोल विज्ञान में उनकी रुचि को ध्यान में रखते हुये 2019 में उनकी 150 वीं जयंती पर देश के कई भागों में 'बापू खगोल मेला' की शृंखला भी आयोजित की गई जिसके माध्यम से आम लोगों और बच्चों में खगोल विज्ञान के प्रति जागरूकता लाने के प्रयास किए गए।

उन्होंने स्पष्ट किया था कि उनका विरोध यंत्रों के प्रति नहीं बल्कि यंत्रों के पीछे जो पागलपन चल रहा है उसके प्रति है। उनका उद्देश्य तमाम यंत्रों का नाश करना नहीं बल्कि उनकी हद बांधने का था। अपनी बात को साफ करते हुए उन्होंने कहा था कि ऐसे यंत्र नहीं होने चाहिए, जो काम न रहने के कारण आदमी के अंगों को जड़ और बेकार बना दें। निष्कर्ष यह कि गाँधी जी मनुष्य को यंत्रशक्ति के समक्ष पराजित होते नहीं देखना चाहते थे। वो मनुष्य की मुक्ति के पक्षधर थे। उन्हें मनुष्यता की शर्त पर न मशीनें चाहिए थीं न कारखाने।

बुनियादी शिक्षा की अपनी योजना में उन्होंने मातृभाषा और इसमें ही विज्ञान की शिक्षा शामिल करने का सुझाव इसीलिए दिया था। वो भी मानते थे कि मातृभाषा में विज्ञान की शिक्षा छात्रों में स्वतंत्र वैज्ञानिक सोच विकसित करने में सहायक होगी। उन्होंने इस दिशा में जापान का उदाहरण देते हुये इसे स्पष्ट किया था, जहाँ स्थानीय भाषा में विज्ञान शिक्षा दी जाती है। अपने राज्य गुजरात में उन्होंने गुजरात विद्यापीठ के विद्यार्थियों से अपील की थी कि वह विज्ञान का पाठ गुजराती भाषा में ही

आयुर्वेद और प्राकृतिक चिकित्सा में शोध द्वारा वो इसके विकास को सुनिश्चित करना चाहते थे। वो चाहते थे कि बीमारी के इलाज की जगह इसे उभरने से ही रोका जाए। शरीर को मंदिर मानना और स्वच्छता पर ज़ोर देना उनके इसी विचार के अंग थे। उस दौर में जबकि कुष्ठ रोग को लेकर तमाम अंधविश्वास और धारणाएँ प्रचलित थीं, गाँधी जी का उनकी सेवा का साहसिक निर्णय उनकी वैज्ञानिक दृष्टि का ही परिचायक है।

करें और जहां जरूरी हो, अंग्रेजी की मदद लें। 1937 में उनके द्वारा दिया गया 'नई तालीम' का विचार इन्हीं संदर्भों में था, जिसके अंतर्गत उन्होंने गाँव-देहात की युवा प्रतिभाओं के आगे आने की बात की थी।

स्वास्थ्य को लेकर भी गाँधीजी ने व्यक्तिगत रूप से और अपने आश्रमों आदि के माध्यम से कई प्रयोग किए। कुष्ठ रोगियों की सहायता, महामारियों आदि में उनके राहत अभियान, दक्षिण अफ्रीका में रहते बोअर युद्ध में भारतीय एम्बुलेंस कोर के माध्यम से राहत कार्य आदि उनके इस दिशा में गंभीर पहलों को दर्शाते हैं। आयुर्वेद और प्राकृतिक चिकित्सा में शोध द्वारा वो इसके विकास को सुनिश्चित करना चाहते थे। वो चाहते थे कि बीमारी के इलाज की जगह इसे उभरने से ही रोका जाए। शरीर को मंदिर मानना और स्वच्छता पर ज़ोर देना उनके इसी विचार के अंग थे। उस दौर में जबकि कुष्ठ रोग को लेकर तमाम अंधविश्वास और धारणाएँ प्रचलित थीं, गाँधी जी का उनकी सेवा का साहसिक निर्णय उनकी वैज्ञानिक दृष्टि का ही परिचायक है।

1934 में राजनीति से सन्यास ले उन्होंने रचनात्मक पहल के उद्देश्य से अखिल भारतीय ग्रामोद्योग संघ की स्थापना की तो इसकी सलाहकार समिति में गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर के साथ उन्होंने प्रसिद्ध वैज्ञानिकों श्री सी। वी। रमन, प्रो। जगदीश चंद्र बोस तथा श्री पी. सी. रे जैसे मूर्धन्य वैज्ञानिकों को भी रखा। निश्चित रूप से उनका उद्देश्य बुनियादी स्तर, ग्राम स्तर से ही वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ विकास की प्रक्रिया सुनिश्चित करना रहा होगा। हम सिर्फ अनुमान ही लगा सकते हैं कि तभी से भारत सहित पूरे विश्व में प्रमुख वैज्ञानिकों का अपने वैज्ञानिक ज्ञान का आधार से ही प्रयोग सुनिश्चित किया जाना आज विश्व को किस रूप में हमारे सामने रख रहा होता!

समझा जा सकता है कि यदि उन्हें और समय मिला होता तो विज्ञान को भी वो पूँजीपतियों और बहुराष्ट्रीय कंपनियों के हित में स्वार्थसिद्धि के साधन से अलग सत्य और अहिंसा पर आधारित, नैतिक रूप से सुदृढ़ आधार देते हुये मानव की समग्र उन्नति से जोड़ते। नरसंहार और बेरोजगारी की संभावना बढ़ाने वाले आविष्कारों की जगह मानव को एक-दूसरे से जोड़ने और शिक्षा, स्वास्थ्य आदि सभ्यता की समेकित विकास को सुनिश्चित करने वाले आविष्कारों को प्रोत्साहित किया जाता।

समय और परिस्थिति के अनुसार हम उनकी किसी राय से असहमत हो सकते हैं। परंतु असहमति और संवाद से बचने का उन्होंने कभी यत्न भी नहीं किया। घोर विरोधी विचार वाले व्यक्ति से भी वो संवादरत रहते थे। यह भी एक वैज्ञानिक प्रवृत्ति ही कही जाएगी। लेकिन यह अवश्य है कि उनके किसी भी विचार को मात्र अपने संदर्भ के लिए न लेते समग्र रूप से देखें, और वो खुद भी इसमें आवश्यक सुधार के लिए प्रस्तुत तो रहे ही हैं।

गाँधी जी ने जिस क्षेत्र में भी अपनी अहम भूमिका निभाई उसपर उनकी छाप पड़ी। चाहे वो राजनेता गाँधी हों, समाज सुधारक गाँधी या पत्रकार के रूप में गाँधी। इन क्षेत्रों में उनके प्रभाव ने एक मानदंड स्थापित किए जो आज भी आदर्श माने जाते हैं। गाँधी जी विज्ञान

के क्षेत्र में भी अपनी ऐसी ही छाप छोड़ सकते थे। वैज्ञानिक विकास की दिशा आज भी समस्त विश्व के समक्ष एक विचारणीय विषय है। मानव के वास्तविक विकास के संदर्भ में इसकी भूमिका सुनिश्चित करने के लिए हम गाँधी जी की ही एक सलाह को याद रख सकते हैं।

गाँधी जी के दिये इस जंतर को याद रखें तो विज्ञान सहित किसी भी क्षेत्र में कभी भी, कोई भी निर्णय लेने से पहले उसके औचित्य को स्पष्ट करने में सहायता मिलेगी जिसमें उन्होंने सुझाया था कि -

'मैं तुम्हें एक जंतर देता हूँ। जब भी तुम्हें संदेह हो या तुम्हारा अहम तुम पर हावी होने लगे तो यह कसौटी अपनाओ- जो सबसे गरीब और कमजोर आदमी तुमने देखा हो, उसकी शक्ल याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो, वह उस आदमी के लिए कितना उपयोगी होगा, क्या उससे उसे कुछ लाभ पहुँचेगा? क्या उससे वह अपने ही जीवन और भाग्य पर काबू रख सकेगा? यानी क्या उससे उन करोड़ों लोगों को स्वराज मिल सकेगा, जिनके पेट भूखे हैं और आत्मा अतृप्त.. तब तुम देखोगे कि तुम्हारा संदेह मिट रहा है और अहम समाप्त होता जा रहा है...'

22-23 अक्टूबर, 1937 को वर्धा में आयोजित 'अखिल भारतीय शैक्षिक सम्मेलन' की अध्यक्षता गाँधीजी ने की थी। इसके अन्तिम दिन निम्नलिखित प्रस्ताव पारित किये गये-

(1) बच्चों को सात वर्ष तक राष्ट्रव्यापी, निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा दी जाय।

(2) शिक्षा का माध्यम मातृभाषा हो।

(3) इस दौरान दी जाने वाली शिक्षा हस्तशिल्प या उत्पादक कार्य पर केंद्रित हो। अन्य सभी योग्यताओं और गुणों का विकास, जहाँ तक सम्भव हो, बच्चों के पर्यावरण को ध्यान में रखते हुए बालक द्वारा चुनी हुई हस्तकला से सम्बन्धित हो।

1935 ई. के गवर्नमेंट ऑफ़ इंडिया ऐक्ट की घोषणा के फलस्वरूप ब्रिटिश भारत के सात प्रांतों में जब कांग्रेसी सरकारों ने राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के लिये कार्यक्रम बनाया तो उसकी आधारशिलाओं में बुनियादी शिक्षा भी एक थी।

1935 ई. के गवर्नमेंट ऑफ़ इंडिया ऐक्ट की घोषणा के फलस्वरूप ब्रिटिश भारत के सात प्रांतों में जब कांग्रेसी सरकारों ने राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के लिये कार्यक्रम बनाया तो उसकी आधारशिलाओं में बुनियादी शिक्षा भी एक थी। यही नीति आजादी के बाद की शिक्षानीतियों में किसी-न-किसी रूप में शामिल रही। गाँधी जी की नजर में बुनियादी शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का एक साधन थी। आत्मविश्वास एवं आत्मनिर्भरता को ही वो मनुष्य के पूर्ण विकास का आधार मानते थे, जिसे सुनिश्चित करने में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका है।

आज देश की नई शिक्षा नीति आकार ले रही है। इसमें वर्तमान परिस्थितियों के मद्देनजर आत्मनिर्भरता पर भी विशेष ज़ोर है। गाँधी जी के विचारों के साथ इसका योग देश के भविष्य को नई दिशा दे सकता है। वर्तमान परिदृश्य एवं आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुये बहु भाषा जिसमें अंग्रेजी की भी उपयुक्त जगह हो का उचित प्रावधान तथा क्रियान्वयन हो, ताकि अंग्रेजी ज्ञान के आधार पर बच्चों का नया वर्गीकरण न निर्मित हो तथा सभी को समान अवसर प्राप्त हो पाये। इसी से गाँधी जी तथा अन्य महापुरुषों के सपनों का भारत आकार ले पाएगा।

गाँधी जी के विचार मानवता के लिए एक धरोहर हैं, जिनकी प्रासंगिकता हर क्षेत्र में सदा बनी रहेगी और राह दिखाती रहेगी...।

abhi.dhr@gmail.com

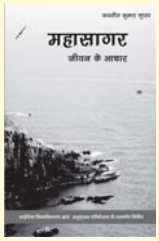

नवनीत कुमार गुप्ता ने एम.एससी. विज्ञान संचार तक शिक्षा ग्रहण की और विज्ञान प्रसार से संबद्ध हुए। आपका जन्म 15 अगस्त 1982 को पचौर जिला रायगढ़ में हुआ। अब तक आपने जैव विविधता संरक्षण एवं जलवायु परिवर्तन तथा पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूकता संबंधी 10 पुस्तकें लिखीं। साथ ही 11 पुस्तकों का संपादन तथा अनेक लेखों का अनुवाद किया। राजीव गांधी ज्ञान-विज्ञान लेखन पुरस्कार, मेदनी पुरस्कार, राजभाषा पुरस्कार, श्रीतरूशनपाल पाठक स्मृति बाल विज्ञान पुरस्कार से सम्मानित नवनीत कुमार गुप्ता ने महासागरों की विशेषताओं की संक्षिप्त जानकारी के साथ पृथ्वी ग्रह को सुन्दर और जीवनदायी ग्रह बनाए रखने में इनकी पर प्रकाश डाला गया है। महासागरों के अनोखेपन से परिचित कराने के साथ ही महासागरों एवं सागरों को प्रदूषणरहित बनाए रखने की आवश्यकता पर ध्यान आकर्षित किया गया है।

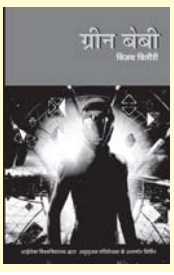

1953 को चितौरी इलाहाबाद में जन्में विजय चितौरी एम.ए., बी.एस-सी., बी.एड. तक शिक्षित हो पूर्णकालिक लेखक रहे। पराई कोख, आपरेशन इंडिया, हमारा ब्रह्मांण, महान भारतीय वैज्ञानिक, अंतरिक्ष में चुनौती पूर्ण जीवन, मंगल पर जल और जीवन, स्वास्थ्य और आधुनिक जीवन तथा मौन पालन तकनीक सहित आपकी 12 अन्य बाल विज्ञान पुस्तकें प्रकाशित हैं। 'जीवों की उत्पत्ति' नामक पुस्तक के लिये उ.प्र. हिन्दी संस्थान द्वारा आपको पुरस्कृत किया गया। आपको देश भर में अन्यान्य संस्थाओं द्वारा सम्मानित किया गया। 'ग्रीन बेबी' एक वैज्ञानिक उपन्यास है। इस उपन्यास में लेखक ने मानव की- मशीनों पर अतिनिर्भरता का दुष्परिणाम दिखाने का प्रयास किया है। यह पुस्तक रहस्य, रोमांच और ढेर सारी वैज्ञानिक जानकारियों से भरी हुई है तथा बाइसवीं सदी के वैज्ञानिक विकास का दिग्दर्शन कराती है।

टैगोर का विज्ञान

टैगोर का विज्ञान

देवेन्द्र मेवाड़ी

जब भी गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर की विज्ञान की पुस्तक 'विश्व परिचय' पढ़ने के लिए हाथ में लेता हूँ, इन पंक्तियों पर आंखें टिक जाती हैं-

'पित्रदेवेर संगे गिए छिलूम डलहौजी पहाड़े। समस्त दिन झापाने-कोरे गिए संध्यावेलाय पहुंचोतम डाकबंगलाय। तिनि चौकि आनिए आंगिनाय बोस्तेन। देखते-देखते गिरिश्रंगेर बेड़ा-देवा निवीड़ नील आकाशेर स्वच्छ अंधकारे तारागुलि जेन काछे नेमे आसतो।...यानी, पिताजी के साथ गया था डलहौजी पहाड़। दिन भर घूमने के बाद सांध्यबेला में डाक बंगले में पहुँचते। वहाँ आंगन में कुर्सी लगा कर बैठते। देखते ही देखते गिरि श्रंगों के घेरे के ऊपर निविड़ नील आकाश के स्वच्छ अंधकार में तारावलि निकट उतर आती। वे मुझे नक्षत्र दिखाते, ग्रह दिखाते। इतना ही नहीं, वे मुझे सूर्य से उनकी प्रदक्षिणा की दूरी, उनके घूमने का समय और अन्य विवरण विस्तार से बताते। उन्होंने जो कुछ बताया वह मुझे इतनी अच्छी तरह याद हो गया कि मैंने अपनी अधकचरी शैली में ही एक लंबा लेख भी लिख डाला। मैंने लिखा, क्योंकि मुझे उसमें आनंद मिला। वह मेरी प्रथम धारावाहिक रचना थी और संयोग से वह वैज्ञानिक संवाद था।

आगे उन्होंने लिखा है, 'पांडित्य न होने के कारण मैंने भाषा पर ध्यान दिया है। विज्ञान की शिक्षा में पारिभाषिक शब्दों की आवश्यकता पड़ती है। लेकिन, पारिभाषिक भाब्दों को भोजन की तरह चबाना जरूरी है। इन्हें तभी दिया जा सकता है जब दांत इसके लिए तैयार हों। मन में यही सोच कर, मैंने पारिभाषिक शब्दों के बजाय सरल शैली अपनाई है।' इससे सरल-सहज भाषा-शैली में विज्ञान लेखन के बारे में गुरूदेव टैगोर के विचारों का पता लगता है।

गुरुदेव टैगोर ने आम लोगों को सरल-सरस भाषा में विज्ञान की जानकारी देने के लिए 'विश्व परिचय' नामक यह पुस्तक लिखी। उन्होंने इस पुस्तक की पांडुलिपि को अल्मोड़ा में अपने मित्र बोशी सेन के निवास कुंदन हाउस के शांत वातावरण में पूरा किया। यह पुस्तक उन्होंने 'श्रीयुत सत्येंद्र नाथ बसु प्रीतिभाजनेशू' संबोधन के साथ प्रसिद्ध भौतिक विज्ञानी प्रोफेसर सत्येन्द्र नाथ बसु को समर्पित की। अपनी इस पुस्तक में उन्होंने परमाणु लोक, नक्षत्र लोक, सौर जगत, ग्रह लोक और भूलोक के बारे में विस्तार से लिखा है।

यह वर्ष गुरुदेव टैगोर का 160 वां जयंती वर्ष है। उनका जन्म 7 मई 1861 को कलकत्ता (अब कोलकाता) में हुआ था। यह जानकर बहुत खुशी होती है कि बहुमुखी प्रतिभा के धनी गुरुदेव रवींद्र नाथ टैगोर कवि, उपन्यासकार, नाटककार, चित्रकार, संगीतकार, दार्शनिक के साथ-साथ एक सिद्धहस्त विज्ञान लेखक भी थे।

उनके भीतर बचपन से ही जड़ और चेतन जगत के प्रति अत्यधिक जिज्ञासा थी। वे प्रकृति के रहस्यों को विज्ञान और कविता दोनों ही के माध्यम से समझना चाहते थे। इसलिए वे प्रकृति के इन रहस्यों पर अपने समकालीन वैज्ञानिकों से विमर्श किया करते थे। यह जान कर खुशी भी होती है और आश्चर्य भी कि कालजयी कविताओं के महान रचनाकार रवींद्रनाथ टैगोर की विज्ञान में गहरी रूचि थी और अपने समय के अनेक नामी वैज्ञानिकों से भी उनकी घनिष्ठता थी। यह विज्ञान के प्रति उनका प्रेम ही था कि वे आचार्य जगदीश चंद्र बसु, सत्येंद्र नाथ बसु, मेघनाद साहा, प्रफुल्ल चंद्र रॉय, चंद्रशेखर वेंकट रामन, प्रशांत चंद्र महालनोबिस जैसे भारतीय और अल्बर्ट आइंस्टाइन, वेर्नर कार्ल हीजनबर्ग और आर्नोल्ड जोहानीज विलहेल्म सोमरफील्ड जैसे प्रसिद्ध विदेशी वैज्ञानिकों के संपर्क में रहे। वे वैज्ञानिक सोच के पक्षधर दार्शनिक व साहित्यकार बर्टेंड रसल से भी मिले। जर्मन भौतिक

देवेंद्र मेवाड़ी भारत के एक प्रतिष्ठित और लोकप्रिय विज्ञान लेखक हैं। उनके लिए विज्ञान लेखन एक मिशन है। विगत पचास वर्षों से भी अधिक समय से आप हिंदी में लोकप्रिय विज्ञान लेखन करते आ रहे हैं। वैज्ञानिक विषयों पर देश की प्रमुख पत्र-पत्रिकाओं में नियमित लेखन करते मेवाड़ी जी के अभी तक 2500 से अधिक लेख तथा तीस मौलिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। विज्ञान लोकप्रियकरण का एक मुख्य उद्देश्य समाज से अंधविश्वास और रुढ़ियों का उन्मूलन करना है जिसे देवेन्द्र मेवाड़ी अपने विज्ञान लेखन और विज्ञान संचार से पूरा कर रहे हैं। वे दिल्ली में रहते हैं और विज्ञान को जन-जन तक पहुँचाने के लिए वे देशभर में भ्रमण करते हैं। आप विद्यार्थियों के बीच वे बहुत लोकप्रिय विज्ञान लेखक हैं।

विज्ञानी सोमरफील्ड और हीजेनबर्ग से उनकी भेंट सन् 1928 में कलकत्ता (अब कोलकाता) में हुई थी। हीजेनबर्ग ने उनके साथ आपेक्षिकतावाद जैसे गूढ़ वैज्ञानिक विषय पर चर्चा की थी। हीजेनबर्ग ने तब कहा भी था कि महाकवि के साथ की गई बातचीत से उनको लाभ मिला है।

प्रसिद्ध भौतिक विज्ञानी अल्बर्ट आइंस्टाइन से सन् 1926 से 1930 के बीच टैगोर की चार बार भेंट हुई। इन मुलाकातों में महाकवि और आइंस्टाइन ने यथार्थ की प्रकृति और विज्ञान व संगीत जैसे विषयों पर गंभीर चर्चा की।

टैगोर आचार्य जगदीश चंद्र बसु के अभिन्न मित्र थे और वे दोनों अपनी-अपनी तरह से प्रकृति के रहस्यों का अनावरण कर रहे थे। टैगोर ने बसु की खोजों और उपलब्धियों पर अनेक लेख लिखे। उन्होंने छुईमुई के पौधे पर भी कविताएं लिखी। इस पौधे पर प्रयोग करके आचार्य बसु ने पौधों में संवेदनाओं का पता लगाया और सिद्ध किया कि पेड़-पौधों में भी प्राण होते हैं।

टैगोर ने लिखा है: 'जगदीश के सम्पर्क में आने पर मुझे प्रथम बार मित्रता के आनंद का अनुभव हुआ।...कविता से आनंद प्राप्त करने में उनका मस्तिष्क मेरे मस्तिष्क जैसा ही संवेदनशील है।'

टैगोर लिखते हैं, 'मेरे कल्पना लोक की सार्थकता तथ्यों की पूर्णता की खोज न करके उनसे प्रसन्नता प्राप्त करने में थी। इसके बावजूद, मेरी धारणा है कि मेरे स्वभाव में आंशिक रूप से ऐसी तार्किकता है जिसे तथ्यों से खेलना पसंद करने के अलावा स्थूल यथार्थ का विश्लेशण प्राप्त करने में आनंद प्राप्त होता है। मेरे मित्र अक्सर कहा करते थे कि मेरी प्रकृति तो एक वैज्ञानिक की है, वैज्ञानिक होने में कमी सिर्फ यह रह गई है कि मुझे प्रशिक्षण का अवसर नहीं मिला।' (जगदीश चंद्र बोस, लेखक- विश्वप्रिय मुखर्जी, प्रकाशन विभाग)। टैगोर कहते हैं कि युवावस्था में वे जगदीश चंद्र बसु के व्यक्तित्व से प्रभावित हुए...।

एस.एन. बसु ने अपनी पुस्तक 'जगदीश चंद्र बोस' में लिखा है कि टैगोर शुरू में कुछ समय पद्मा नदी के एक नौकाघर में रहे थे जहाँ उन्होंने अपनी कुछ बेहतरीन कविताएँ

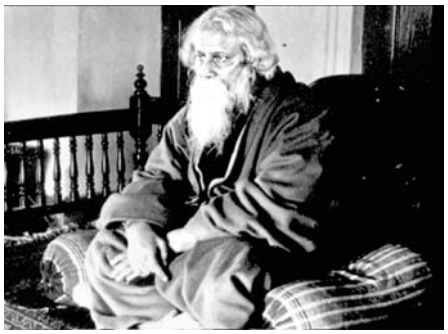

टेगोर लिखते हैं, `मेरे कल्पना लोक की सार्थकता तथ्यों की पूर्णता की खोज न करके उनसे प्रसन्नता प्राप्त करने में थी। इसके बावजूद, मेरी धारणा है कि मेरे स्वभाव में आंशिक रूप से ऐसी तार्किकता है जिसे तथ्यों से खेलना पसंद करने के अलावा स्थूल यथार्थ का विश्लेषण प्राप्त करने में आनंद प्राप्त होता है। मेरे मित्र अक्सर कहा करते थे कि मेरी प्रकृति तो एक वैज्ञानिक की है, वैज्ञानिक होने में कमी सिर्फ यह रह गई है कि मुझे प्रशिक्षण का अवसर नहीं मिला।'

लिखीं। कई बार सप्ताहांत पर उनके मित्र जगदीश चंद्र बसु भी वहाँ चले आते। तब महाकवि उन्हें नौका विहार करते हुए अपनी कविताएँ सुनाते और आचार्य बसु की वैज्ञानिक जिज्ञासाओं की बातें सुनते। वे प्रायः आचार्य बसु के घर पर भी आते और उन्हें अपनी कविताएं सुनाते थे। जब टैगोर शांति निकेतन में रहने लगे, तब भी आचार्य बसु उनसे मिलने के लिए वहाँ जाते रहते थे।

जगदीश चंद्र बसु के अनुसंधान कार्य के लिए टैगोर ने आर्थिक सहायता भी जुटाई। बसु सन् 1901 में जब इंग्लैंड में थे, तब टैगोर ने उन्हें पत्र भेज कर राय दी कि वे अपना काम अधूरा छोड़ कर भारत वापस न आएं। फिर टैगोर ने अगरतला जाकर अपने मित्र महाराजा त्रिपुरा से पंद्रह हजार रूपए का दान लेकर वह राशि जगदीश चंद्र बसु को भिजवाई।

उधर यूरोप में अपने प्रयोगों का साक्षात व सफल प्रदर्शन करके आचार्य बसु ने अपने आलोचक विदेशी शरीर-क्रिया विज्ञानियों को करारा जवाब दिया और टैगोर को लिखा कि वे अपने संघर्श में विजयी हो गए हैं।

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर और आचार्य जगदीश चंद्र बसु का आत्मीय लगाव तो देखिए। टैगोर ने 'छुई-मुई' यानी लाजवंती के पौधे पर कविताएं लिखीं और जब सन् 1913 में वे नोबेल पुरस्कार से सम्मानित हुए तो कहते हैं, आचार्य बसु ने उन्हें शुभकामनाओं के साथ छुई-मुई का एक गमला भेंट किया था!

यह जानना बहुत रोचक है कि महाकवि टैगोर ने अपनी 13 वर्ष की उम्र में पहली रचना विज्ञान पर लिखी। वह रचना थी, 'ग्रहआगन जीबेर आबासभूमि' यानी जीवों की आवास-भूमि ग्रह। उनकी यह रचना सन् 1874 में 'तत्वबोधिनी पत्रिका' में छपी थी जिसके संपादक उनके पिता देवेंद्र नाथ टैगोर थे। अपने जीवनकाल में उन्होंने समय-समय पर पाँच पत्रिकाओं का संपादन किया और लोगों को विज्ञान संबंधी लेख लिखने के लिए प्रोत्साहित किया। 'बंगदर्शन' में उन्होंने स्वयं आचार्य जगदीश चंद्र बसु के अनुंसधान कार्य के बारे में लिखा। 'साधना' पत्रिका के विज्ञान खंड को वे स्वयं देखते थे। इस पत्रिका में उन्होंने कई वैज्ञानिक लेख लिखे। टैगोर परिवार ने सन् 1885 में बच्चों की पत्रिका 'बलाका' निकाली थी। उसमें भी टैगोर ने विज्ञान संबंधी लेख और समाचार लिखे। वे बच्चों को विज्ञान की शिक्षा देने के लिए पहले उनकी आंखें खोलना और उनके देखने-समझने यानी अवलोकन की भाक्ति को बढ़ाना आवश्यक समझते थे।

मैंने कुछ वर्ष पहले एक दिन वरिष्ठ विज्ञान लेखक मित्र डॉ. सुबोध महंती के घर पर बांग्ला भाषा की एक नई पुस्तक देखी थी- 'ठाकुरबाड़ीर विज्ञान-भावना'। ठाकुरबाड़ी यानी रवींद्रनाथ ठाकुर का घर। उलट-पलट कर पुस्तक के संपादक और लेखकों के नाम पढ़ने की कोशिश की। पारुल प्रकाशन, कोलकाता से छपी इस सुंदर, सुरुचिपूर्ण साज-सज्जा वाली पुस्तक के संपादक हैं- पार्थ गंगोपाध्याय। रचनाकारों में जो कुछ नाम पढ़ पाया, वे हैं: रवींद्र नाथ ठाकुर, हेमेंद्रनाथ ठाकुर, द्विजेंद्रनाथ ठाकुर, हिरण्मयी देवी, सरला देवी आदि। सहज जिज्ञासा हुई कि आखिर ठाकुरबाड़ी की किस विज्ञान-भावना की बात इस पुस्तक में दी गई है?

डॉ. महंती से पूछा तो वे बोले, 'देखिए, बांग्ला और दूसरी भाषाओं में लोग कितना शोधकार्य करके ऐसी दुर्लभ सामग्री प्रकाशित कर रहे हैं। हिंदी में हमें इससे प्रेरणा लेनी

चाहिए।'

'आप सही कह रहे हैं महंती जी। मैं तो यह जानने के लिए बहुत उत्सुक हूँ कि विश्व कवि गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर के साथ ही इतने सारे रचनाकारों ने विज्ञान के बारे में आखिर लिखा क्या है? क्या विज्ञान के लिए भी उनका इतना लगाव था?' मैंने पूछा।

बहुत लगाव था। ठाकुरबाड़ी यानी टैगोर के घर पर विज्ञान चर्चाएं होती थीं और उस परिवार के सदस्यों ने विज्ञान की रचनाएं भी लिखीं। देखिए, इस पुस्तक की भूमिका में लिखा है, 'हम बंगाली जन-जीवन के हर क्षेत्र में रवींद्रनाथ ठाकुर परिवार के ऋणी हैं जिसके कारण हम आधुनिकता के आलोक से आलोकित हुए। हम रवींद्रनाथ ठाकुर के वैज्ञानिक विचारों से परिचित हैं लेकिन यह नहीं जानते कि उनके परिवार के सदस्यों और उनके अन्य अभिन्न लोगों ने क्या किया।'

हम रवींद्रनाथ ठाकुर की पुस्तक 'विश्व परिचय' के बारे में तो थोड़ा-बहुत जानते हैं, लेकिन उनके बड़े भाई हेमेंद्रनाथ ठाकुर के वैज्ञानिक ग्रंथ के बारे में क्या जानते हैं? हम यह कहाँ जानते हैं हम कि गुरुदेव रवीद्रनाथ ठाकुर के बड़े भाई हेमेंद्रनाथ ठाकुर ने 'प्राकृतिक विज्ञानेर स्थल-मर्म' जैसा विज्ञान ग्रंथ लिखा था? कहाँ जानते हैं हम कि देवेंद्रनाथ ठाकुर की बेटी और गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर की बहिन स्वर्ण कुमारी देवीन ने 'पृथ्वीर उत्पत्ति', 'सूर्य' और 'सौर परिवार' जैसी वैज्ञानिक रचनाएं दीं। और यह भी कहाँ जानते हैं कि गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर की बहू नरेंद्रबाला देवी बांग्ला भाषा में बच्चों के लिए विज्ञान लिखने वाली प्रथम महिला हैं। उन्होंने 'सूरजेर कथा' लिखी, 'सूर्य किरनेर कार्य' की बात समझाई।''

महंती जी ने बताया, 'रवींद्रनाथ ठाकुर के एक और भाई द्विजेंद्रनाथ ठाकुर ने 'ज्यामितीर नूतन संस्करण' लिखने के अलावा न्यूटन के दो प्रसिद्ध सिद्धांतों के आधार पर एक नए सिद्धांत की परिकल्पना की है ('न्यूटनेर दुइटि प्रसिद्ध सिद्धांत होइते एकटि नूतन सिद्धांतेर व्यवकलन')।'

'और, ये हिरण्मयी देवी कौन थीं?' मैंने पूछा।

"महर्षि देवेंद्रनाथ टैगोर की पुत्री स्वर्णकुमारी देवी की बड़ी बेटी। इस पुस्तक में

उनके दो लेख दिए गए हैं- 'उद्भिदेर जीवन-एक्रवाय नवाविष्कृत उपाय' और 'पाश्टेर आविष्कृतो चिकित्सा'। पाश्टेर मतलब पाश्चर।"

किताब खोल कर मुझे दिखाते हुए वे बोले, 'यह देखिए, यह रवींद्रनाथ ठाकुर के भतीजे क्षितींद्रनाथ ठाकुर की रचना है- 'अभिव्यक्ति बादेर आपत्ति खंडन'। यह अभिव्यक्ति का मतलब इवोल्यूशन यानी विकासवाद के सिद्धांत से है। कविवर टैगोर के एक और भतीजे बलेंद्रनाथ ठाकुर का लेख है- 'अभिव्यक्तीर नूतन अंग'।'

'और, यह सरलादेवी?' मैंने पूछा तो महंती जी ने कहा, 'यह भी स्वर्णकुमारी देवी की बेटी थीं। इस पुस्तक में उनकी रचना 'वैज्ञानिक कृषि कार्य' शामिल की गई है। और, यह देखिए, देवेंद्रनाथ ठाकुर के दूसरे बेटे सत्येंद्रनाथ ठाकुर के पुत्र सुरेंद्रनाथ ठाकुर के दो लेख हैं, 'प्राण ओ प्राणी' और 'ज्योतिर्विज्ञान, स्पेक्ट्रोस्कोपी ओ फोटोग्राफी'।

गुरुदेव रवींद्रनाथ की पुस्तक 'विश्व परिचय' का अंश तो दिया ही गया है, उनके बेटे रवींद्रनाथ ठाकुर की भी दो रचनाएं इस पुस्तक में दी गई हैं, 'गाछेर कथा' और 'पुष्टि प्रसंगे' यानी पोषण प्रसंग। भूकंप पर भी एक लेख दिया गया है जिसे सत्यप्रकाश गंगोपाध्याय ने लिखा है। वे देवेंद्रनाथ ठाकुर की ज्येष्ठ पुत्री सौदामिनी देवी के पुत्र थे।

आपने अभी स्वर्णकुमारी देवी लिखित 'सौर परिवार' का एक अंश पढ़ा था। उसे फिर से सुनना चाहता हूँ। बहुत सुंदर भाषा में लिखा गया है वह। आप सुनाइए, साथ-साथ हिंदी में भी अनुवाद कर लेते हैं। हाँ बोलिए, मैंने कहा।

महंती जी सुना रहे हैं, "तारका कनक कूचि, जलद अक्षर रूचि, गीत लेखा नीलांबर पाते।"

'निस्तब्धा निशीथे असंख्य तारकामालाखचित, अनंत नील नभोमंडल देखिले सकलेई रोमांचित हय, सकलेर हृदयी अनंतेर भाबे परिपूर्ण हय। एमोन औसाड़चेता केहई नाई जे ताहार मनश्चक्षु तारकांपूर्ण आकाशे परम मंगलमय परमेश्वरेरे हस्ताक्षर-लिखित अनंत जीवनेर अनंत काब्य ना पड़े।'

'यानी, अनंत नील नभमंडल को देख कर सभी, रोमांचित हो उठते हैं। सभी का हृदय अनंत के भाव से भर उठता है। ऐसा चेतनाहीन कोई नहीं जो अपने मनश्चक्षुओं से तारों भरे आकाश में परम मंगलमय परमेश्वर के हस्ताक्षर-लिखित अनंत जीवन का काव्य न पढ़ सके।'

अद्भुत! विज्ञान इतना सुंदर, इतना रोचक हो सकता है? मैंने मन ही मन अपना संकल्प दुहराया- 'मैं हिंदी विज्ञान लेखन में विज्ञान और साहित्य के बीच ऐसा ही सेतु बनना चाहता हूँ। आमीन।'

बांग्ला भाषा में लिखा इतना अद्भुत, इतना सरस विज्ञान लेखन भला कौन नहीं पढ़ना चाहेगा।

बहुत पहले डीएसबी डिग्री कालेज, नैनीताल में बीएस.सी. की पढ़ाई के दौरान हिंदी कहानी प्रतियोगिता में मेरी एक कहानी पुरस्कृत हुई थी। तब छात्र संपादक बटरोही ने 29 फरवरी 1965 को विशेष पुरस्कार के रूप में शुभकामनाओं के साथ मुझे सत्यकाम विद्यालंकार द्वारा अनूदित विश्व कवि रवींद्र नाथ टैगोर की 'गीतांजलि' भेंट की थी। विज्ञान लेखक टैगोर की स्मृति को उसी गीतांजलि की इन पंक्तियों के साथ विनम्र नमन!

आलोक आलोकमय करे हे...
तू प्रकाश को प्रकाशमय करता है,
तू प्रकाश का स्रोत है!...
तेरा प्रकाश वृक्षो के पत्तों पर नाच कर हृदय को उल्लास से भरता है।
तेरा प्रकाश पक्षियों के घोंसलों में
गीतों की कड़ियां जोड़ता है।

dmewari@yahoo.com

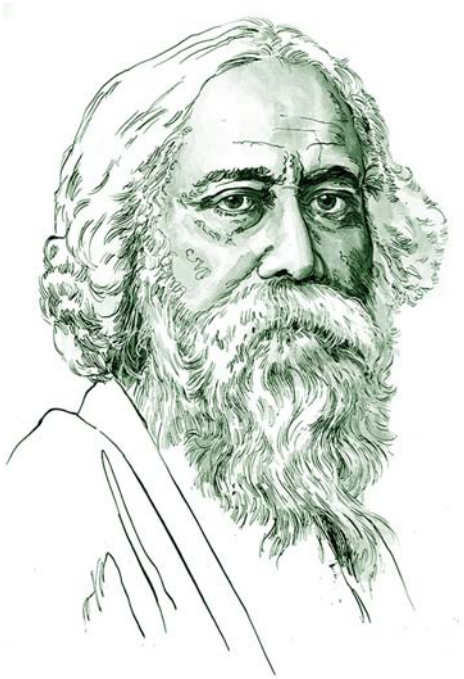

मेरा विद्यालय

लगभग चालीस वर्ष की अवस्था में मैंने बंगाल में एक स्कूल स्थापित किया। निश्चय ही मुझ जैसे व्यक्ति से, जिसने जीवन का अधिकांश समय कविताएं लिखने में व्यतीत किया हो, किसी को ऐसी आशा नहीं थी। इसलिए स्वाभाविक रूप से लोगों ने सोचा कि यह स्कूल अति उत्तम तो नहीं होगा, लेकिन अनुभवहीनता एवं साहस की वजह से इसमें परम्परागत से अलग कुछ विशेष नवीनता ज़रूर होगी।

इसी कारण प्रायः मुझसे पूछा जाता है कि मेरा विद्यालय किन विचारों पर आधारित है? मेरे लिए यह प्रश्न अत्यंत संकोच में डालने वाला होता है क्योंकि केवल अपने प्रश्न-कर्त्ताओं को संतुष्ट करने के लिए मैं अपने उत्तर में सामान्य किस्म के विचार प्रस्तुत करने लगूं यह उचित नहीं होगा। दूसरी ओर, मौलिक होने के लोभ का संयमन करते हुए मैं केवल सत्य को प्रस्तुत कर संतुष्ट हो जाऊंगा।

सर्वप्रथम तो मैं स्वीकार करता हूँ कि मेरे लिए यह बता पाना वास्तव में कठिन है कि मेरी संस्था किन विचारों पर आधारित है क्योंकि विचार किसी ठोस नींव की तरह तो होते नहीं जिन पर कोई भवन खड़ा कर दिया जाए; वरन् वे तो बहुत कुछ एक बीज की तरह होते हैं जिसे बढ़ते हुए पौधे से अलग करके नहीं पहचाना जा सकता।

मैं जानता हूँ कि इस विद्यालय के अस्तित्व में आने का श्रेय किसको है। इसकी स्थापना को प्रेरित करने वाली शिक्षा की कोई नई पद्धति नहीं, वरन् मेरे स्कूल के दिनों की स्मृतियां थीं।

विद्यालय जाने के वे दिन मेरे लिए अप्रसन्नता भरे थे। मुझे नहीं लगता कि इसके लिए मेरा स्वभाव दोषी है या उन स्कूलों के कुछ खास अवगुण जहाँ मुझे भेजा गया। हो सकता है कि अगर मैं कुछ कम संवेदनशील होता तो इस दबाव के अनुरूप ढल जाता और विश्वविद्यालय उपाधि प्राप्त करने तक वहाँ बना रह पाता। लेकिन जो भी कहो, विद्यालय तो विद्यालय होते हैं, अपने-अपने मानदण्डों के अनुसार, कुछ बेहतर तो कुछ खराब।

छोटे शिशुओं के लिए भोजन के रूप में माँ के दूध की व्यवस्था है। उन्हें उनका भोजन और उनकी माँ एक ही समय में मिल जाते हैं। यह उनके लिए सम्पूर्ण पोषण है - शरीर का भी, आत्मा का भी। यह उस महान सत्य से उनका पहला परिचय है कि संसार से मनुष्य का सच्चा संबंध व्यक्तिगत प्रेम की वजह से है, न कि कार्य-कारण आधारित यंत्रवत नियमों की वजह से। इसलिए हमारे बचपन को पूर्ण मात्रा में जीवन की वह खुराक मिलनी चाहिए जिसके लिए उनमें अंतहीन पिपासा होती है। छोटे-छोटे बालकों के मन को इस विचार से पूरी तरह संतृप्त कर दिया जाना चाहिए कि उन्होंने मनुष्यों की ऐसी दुनिया में जन्म लिया है जो उनके चारों ओर की दुनिया से पूरी तरह समरस और सामंजस्यपूर्ण है।

और हमारे सामान्य स्कूल अपनी उच्च बौद्धिकता और तिरस्कारपूर्ण रवैये के साथ, इसी बात की तीव्र उपेक्षा करते हुए, बच्चों को बलपूर्वक ईश्वर द्वारा निर्मित इस सुन्दर और रहस्यों से भरे संसार से दूर कर देते हैं जो व्यक्तित्व की सकारात्मक संभावनाओं से भरा हुआ है। मात्र अनुशासन की यह प्रणाली व्यक्ति की वैयक्तिकता को पूरी तरह नकार देती है। यह ऐसा कारखाना है जो विशेष प्रकार के एक ही जैसे नमूने तैयार करने के लिए बनाया गया है। शिक्षा की कार्य प्रणालियां बनाने के लिए यह एक औसत आधारित काल्पनिक सीधी रेखा खींच कर उसका अनुसरण करता है, लेकिन जीवन की रेखा सीधी सपाट नहीं होती। वो तो उस औसत की रेखा के साथ उतार-चढ़ाव का खेल खेलने की शौकीन होती है, जिसकी वजह से फिर बच्चों को स्कूल की प्रताड़ना झेलनी पड़ती है। और जब मैं स्कूल भेजा गया, यही मेरे दुख का कारण था। अचानक मैंने पाया कि मेरे चारों ओर की दुनिया लुप्त होती जा रही है और उसके स्थान पर ऊँची दीवारें और लकड़ी की बैंचें मुझे किसी अंधे की सूनी आँखों की तरह लगातार घूर रही हैं।

पौराणिक कथा है कि ज्ञान के फल का स्वाद लेना और स्वर्ग में रहना साथ-साथ नहीं हो सकता। इसलिए ज्ञान प्राप्त करने के लिए मनुष्य के बच्चों को स्वर्ग का संसार त्याग कर, मृत्यु के इस साम्राज्य में आना ही पड़ता है जहाँ ठोक-पीट कर सही करने वाले विभाग का ही प्रभुत्व है। इसलिए मेरे दिमाग को अत्यंत कसे हुए स्कूली डिब्बे को स्वीकार करना पड़ा, जहां मैंडारिन स्त्री के जूतों की तरह, हर तरफ से मेरी प्रकृति पर, मेरी क्रियाओं पर

चिकोटियां और खरोचें पड़ती रहीं। मैं भाग्यशाली था कि संवेदनहीनता की अवस्था आने के पहले ही अपने को वहां से मुक्त कर सका।

हालांकि सुसंस्कृत समाज में प्रवेश पाने के लिए मुझ जैसे परिवेश के लोगों को जितनी सज़ा भुगतनी पड़ती है, मुझे उतनी नहीं भुगतनी पड़ी, फिर भी मुझे खुशी है कि मैं उससे पूरी तरह मुल्तवी नहीं रहा। इससे मुझे यह अहसास हुआ कि इस दौरान मनुष्य के बच्चों पर क्या-क्या गुज़रता है।

उक्त स्थिति उत्पन्न होने का कारण "बच्चों का ज्ञान कैसे बढ़ाया जाए?" इस विषय में मनुष्य के अभिप्राय का ईश्वर के अभिप्राय से विपरीत होना है। हम अपने व्यवसाय को कैसे चलाएं, यह हमारा निजी मामला है और इसके लिए हम अपने कार्यालयों में अपने ढंग के तरीके अपनाने के लिए स्वतंत्र हैं, लेकिन यह कार्यालयीन व्यवस्था ईश्वर की कृति के लिए उपयुक्त नहीं है और बच्चे ईश्वर की अपनी कृति, अपनी सृष्टि हैं।

हम इस संसार को केवल जानने के लिए नहीं वरन स्वीकार करने के लिए आए हैं। हम ज्ञान के द्वारा शक्तिशाली तो बन सकते हैं, लेकिन पूर्णता हमें सहानुभूति और सहिष्णुता द्वारा ही प्राप्त होती है। उच्चतम शिक्षा वह है जो हमें केवल सूचनाएं या जानकारी नहीं देती, बल्कि हमें अस्तित्व में आई अन्य चीज़ों के साथ सामंजस्यपूर्ण ढंग से जीवन बिताना सिखाती है। लेकिन सहृदयता की यह शिक्षा न केवल स्कूलों में बड़े सुनियोजित ढंग से उपेक्षित कर दी जाती है बल्कि उसे अच्छे से दबा दिया जाता है। बिल्कुल बचपन से ही हमारी आदतें डाल दी जाती हैं और ज्ञान इस प्रकार दिया जाता है कि जीवन को प्रकृति से ज़बरदस्ती अलग कर दिया जाता है; और हमारा दिमाग जीवन के प्रारम्भ से ही दुनिया के विरोध में रहने का आदी हो जाता है।

इस तरह से वह सर्वोत्तम शिक्षा जिसे प्राप्त करने के लिए हम तैयार हुए थे, उपेक्षित रह जाती है और उसकी जगह सूचनाओं के भंडार को प्राप्त करने के लिए हमारी दुनिया हमसे छुड़ा दी जाती है। बच्चे को भूगोल पढ़ाने के लिए हम बलपूर्वक उसकी ज़मीन छीन लेते हैं, व्याकरण पढ़ाने के लिए उसकी भाषा छीन लेते हैं। वह मनुष्यों के संसार में पैदा हुआ था लेकिन अज्ञानता के साथ पैदा होने के उसके पाप के परिष्कार के लिए हम उसे निर्वासित कर ग्रामोफोनों की दुनिया में ढकेल देते हैं। बाल-स्वभाव कष्ट सहने की पूरी ताकत के साथ ऐसी प्रताड़नाओं का विरोध करता है, लेकिन उसे दण्डित कर, दबाकर चुप कर दिया जाता है।

हम सब जानते हैं कि बच्चों को मिट्टी से बेहद प्यार होता है। उनका पूरा शरीर और दिमाग फूलों की तरह सूर्य के प्रकाश और हवा के लिए प्यासा रहता है। इस संसार में चारों ओर से प्रकृति द्वारा उनकी इन्द्रियों से सीधा सम्पर्क कर जो आमंत्रण मिलते रहते हैं, उन्हें वे कभी अस्वीकार नहीं करना चाहते। दुर्भाग्य से बच्चों के माता-पिता अपने-अपने व्यवसाय में, अपनी सामाजिक हैसियत के अनुरूप, अपने ही निराले नियम कायदों की दुनिया में रहते हैं; जिसके बारे में अधिकांशतः कुछ नहीं किया जा सकता क्योंकि लोग तो अपनी परिस्थितियों से प्रेरित होकर सामाजिक एकरूपता की ज़रूरत के अनुसार विशिष्टता प्राप्त करना चाहते हैं। परन्तु, हमारा बचपन ही वह समय है जब हमें अधिक स्वतंत्रता मिलती है या मिलनी चाहिए; स्वतंत्रता विशेष योग्यता प्राप्त कर परम्परागत सामाजिक-व्यावसायिक संकीर्ण सीमाओं में बंध जाने की आवश्यकता से।

मुझे एक सफल, अनुभवी और अनुशासन प्रिय हैडमास्टर के विस्मय और नाराज़गी की घटना खूब याद है जब उन्होंने हमारे स्कूल के ही एक लड़के को पेड़ पर चढ़ दो शाखाओं के बीच बैठने की जगह चुनकर पढ़ते देखा। मुझे स्पष्टीकरण में कहना पड़ा कि "बचपन का समय ही ऐसा समय है जब कोई सभ्य आदमी ड्राईंगरूम की कुर्सी और पेड़ की शाखाओं में से किसी एक को चुन सकता है। क्या मैं इस बच्चे को केवल इसलिए उस विशेषाधिकार से वंचित कर दूं, क्योंकि बड़ा हो जाने के कारण मुझे उससे वंचित होना पड़ा है।" यह जानकर आश्चर्य हुआ कि उन्हीं हैडमास्टर ने वनस्पति शास्त्र पढ़ने वाले छात्रों को इस प्रकार अध्ययन करने के लिए प्रोत्साहित किया। वह पेड़ के तटस्थ (निर्वैयक्तिक) ज्ञान में विश्वास रखते थे क्योंकि वह विज्ञान के अन्तर्गत आता है लेकिन एक निजी अनुभव के रूप में नहीं। अनुभवों का यह विकास ही वृत्तियों का निर्माण करता है जो प्रकृति द्वारा प्रदत्त शिक्षा के परिणाम के रुप में सामने आता है।

मेरे स्कूल के लड़कों ने सहज रूप से पेड़ के रूपाकृति-विज्ञान का पर्याप्त ज्ञान प्राप्त कर लिया है। ज़रा से स्पर्श से ही वे जान जाते हैं कि दुस्तर चिकने पेड़ पर पैर टिकाने की जगह कहां मिलेगी। उन्हें पता है कि पेड़ की शाखाओं से किस सीमा तक स्वतंत्रता ली जा सकती है, वे यह भी जानते हैं कि पेड़ पर चढ़ते समय अपने शरीर के भार का विभाजन कैसे करें कि शाखाओं पर उनका भार कम-से-कम पड़े। मेरे लड़के पेड़ों का सर्वोत्तम उपयोग करना जानते हैं - फल एकत्र करने से लेकर आराम करने और अनचाहे पीछे पड़ने वालों से छुपने तक के लिए। मेरा अपना पालन-पोषण शहर के एक सुसंस्कृत घर में हुआ, और जहाँ तक मेरे अपने आचरण की बात है, मुझे जीवन भर ऐसे आचार-व्यवहार में रखा गया जैसे मैं ऐसी दुनिया में पैदा हुआ होऊं, जहाँ कोई पेड़ होता ही नहीं। इसलिए मैं इसे अपने लड़कों की शिक्षा का एक हिस्सा मानता हूँ कि वे पूरी तरह इस बात का अनुभव करें कि वे भी अस्तित्व की योजना का एक अंश हैं, और पेड़ इसके महत्वपूर्ण तत्व हैं - न केवल क्लोरोफिल बनाने और हवा से कार्बन लेने के साधन के रूप में, वरन् जीवित वृक्षों की तरह भी।

प्राकृतिक रूप से हमारे पैरों के तलवे इस प्रकार के बने हैं कि हमारे पृथ्वी पर खड़े होने और चलने के लिए वे सर्वोत्तम साधन बन जाते हैं। जब से हमने जूते पहनना शुरू किया हमने अपने नंगे पैरों के प्रयोजन को बहुत कम कर दिया है। हमारे लिए तो भगवान से शिकायत करने के लिए यही दुख काफी है कि उसने हमें सुन्दर संवेदनशील तलवों के स्थान पर खुर क्यों नहीं दिए। मैं मनुष्यों के लिए जूतों के उपयोग का विरोधी नहीं हूँ, लेकिन मुझे ज़ोर देकर यह कहने में भी संकोच नहीं है कि बच्चों

के तलवों को उस शिक्षा से वंचित नहीं रखा जाना चाहिए जो प्रकृति उन्हें निःशुल्क देती है। हमारे शरीर के जितने भी अवयव हैं, उनमें से केवल तलवे ही अपने स्पर्श द्वारा पृथ्वी को सबसे अच्छी तरह और सबसे करीब से जानने में सक्षम हैं। पृथ्वी के अपने बड़े सूक्ष्म नियम और रूपाकृतियां हैं जिनका वह सच्चे चाहने वालों अर्थात पैरों (तलवे) को ही चुम्बन करने देती है।

मैं पुनः स्वीकार करता हूँ कि मैं एक सम्मानीय परिवार में पैदा हुआ और बचपन से ही मेरे पैरों की सावधानीपूर्वक रक्षा की गई ताकि वे सीधे-सीधे मिट्टी के सम्पर्क में न आ सकें। जब मैं नंगे पैर चलने में अपने लड़कों की बराबरी करने की कोशिश करता हूँ तो प्रायः मैं कांटों भरे रास्ते का चुनाव कर लेता हूं और कुछ ऐसे ढंग से चलता हूँ कि कांटों को ही विजय की खुशी मिलती है। मेरे पैरों को कम-से-कम प्रतिरोध वाले रास्ते का अनुसरण करते हुए चलने का सहज ज्ञान नहीं है। भूमि की सतह चाहे कितनी भी सपाट क्यों न हो, उसमें भी कहीं कुछ उभार, तो कहीं छोटे-छोटे गड्ढे तो होते ही हैं जिन्हें केवल शिक्षित और अनुभवी पैर ही समझ सकते हैं। मुझे प्रायः ही सीधे सपाट खेतों के बीच में से टेढ़ी-मेढ़ी पगडंडियों को निकलते देखकर आश्चर्य होता है। स्थिति और भी उलझनपूर्ण तब हो जाती है जब आपको पता चलता है कि यह पगडंडी किसी एक व्यक्ति की चपलता का परिणाम नहीं है। जब तक बहुत सारे लोग उसी सनक (जुनून) के साथ टेढ़े-मेढ़े रास्ते पर न चलें तब तक पगडंडी बन ही नहीं सकती। इसका वास्तविक कारण पृथ्वी के उन अतिसूक्ष्म संकेतों में है जिनकी ओर पैर बरबस ही खिंचे चले जाते हैं। जो लोग इस प्रकार की बातों से दूर नहीं कर दिए गए हैं वे ज़रा से संकेत पर अपने पैरों की मांसपेशियों को बड़ी तेज़ी से सन्तुलित कर लेते हैं। इस तरह से वे नंगे पैर चलते हुए भी बिना कठिनाई अनुभव किए अपने पैरों को कंकड़ों व कांटों की चुभन से बचा लेते हैं। मैं जानता हूं कि भौतिक संसार में जूते भी पहने जाएंगे, पक्की सड़कें भी बनाई जाएंगी, कारों का भी उपयोग होगा, परन्तु शिक्षा प्राप्त करने के दौरान क्या बच्चों को यह नहीं बताया जाना चाहिए कि दुनिया सजे हुए बैठक-खानों तक ही सीमित नहीं है, प्रकृति नाम की भी कोई चीज़ है जिसके सम्पर्क में आने के लिए उनके शारीरिक अंगों को बड़ी सुंदरता के साथ गढ़ा गया है।

ऐसे भी लोग हैं जो यह सोचते हैं कि अपने विद्यालय में सादा जीवन व्यतीत करने का परिचय देकर मैं बालकों को गरीबी के आदर्शवाद का उपदेश दे रहा हूँ जैसा कि मध्यकालीन युग में प्रचलित था। शिक्षा के दृष्टिकोण से क्या हमें यह स्वीकार नहीं कर लेना चाहिए कि गरीबी ही वह विद्यालय है जहाँ मनुष्य ने अपना पहला सबक सीखा है और सर्वोत्तम प्रशिक्षण पाया है। गरीबी हमें पूरी तरह जीवन व संसार के सम्पर्क में लाती है क्योंकि धनी लोगों की तरह जीवन व्यतीत करना औरों के अनुभव से जीने जैसा है, जिसका सीधा-सीधा अर्थ हुआ जीवन को पूरी वास्तविकता से न जी पाना। यह बात किसी ऐश्वर्यपूर्ण जीवन जीने वाले और अभिमान को पोषित करने वाले व्यक्ति के लिए अच्छी हो सकती है परन्तु शिक्षा के लिए नहीं। धन बच्चों के लिए सोने का पिंजरा है। इसलिए मैंने अपने विद्यालय में भौतिक सामान और लकड़ी के फर्नीचर की कमी करके, जिसे रईस और शौकीन लोग हेय समझते हैं, प्राकृतिक वातावरण रखा है - इसलिए नहीं कि यह गरीबी है वरन् इसलिए कि इससे बच्चों को दुनिया का व्यक्तिगत आत्मीय अनुभव होता है।

मेरे स्कूल के दिनों में जिस बात ने विशेष रूप से मुझे बहुत अधिक उत्पीड़ित किया वह यह थी कि स्कूल में संसार की पूर्णता नहीं थी, वह तो एक विशेष व्यवस्था थी जो पाठों के अध्ययन के लिए की गई थी। यह व्यवस्था वयस्कों के लिए उपयुक्त हो सकती थी जो ऐसे स्थानों की विशेष आवश्यकता के प्रति जागरुक थे और जीवन की धारा से अलग रह कर भी इस प्रकार के शिक्षण को स्वीकार करने के लिए तत्पर थे, लेकिन बच्चों को तो जीवन से प्यार होता है - और यह उनका पहला प्यार है। संसार के सारे रंग और इसमें होने वाली क्रियाएं उनकी उत्सुकता को आकर्षित करती हैं। उनके इस प्रेम का गला घोंटकर क्या हम वास्तव में बुद्धिमानी कर रहे हैं? बच्चे कोई जन्मजात बैरागी नहीं हैं जो एकदम से ज्ञानप्राप्ति के लिए संन्यासियों जैसे अनुशासन में रहने लगें। उन्हें चाहिए कि पहले वे जीवन जीते हुए ज्ञान प्राप्त करें, फिर ज्ञान प्राप्ति के लिए जीवन से वैराग्य लें और बाद में पुनः परिपक्व ज्ञान प्राप्त कर पूर्ण जीवन की ओर लौटें।

लेकिन, समाज ने मनुष्यों को विशेष रूपों में ढालने के लिए कुछ अलग प्रकार के जोड़-तोड़ की व्यवस्था की है। इस व्यवस्था का ताना-बाना कुछ इस प्रकार बुना गया है कि उसमें कहीं से भी प्रकृति को अंदर आने देने के लिए जगह बचती ही नहीं है। कोई व्यक्ति अपनी आत्मा को जीवित रखने के लिए भी यदि इस व्यवस्था या इसके किसी भाग से मुक्त होने का दुस्साहस करता है तो उसे एक के बाद एक, अंत तक दंडित करने का सिलसिला बना हुआ है। इसलिए सच्चाई का अनुभव एक बात है और उसे ऐसी जगह व्यवहार में लाना जहां प्रचलित व्यवस्था का सारा प्रवाह ही आपकी विचारधारा के विपरीत हो, दूसरी बात। इसलिए जब मेरे सामने मेरे अपने बेटे की शिक्षा की समस्या आई तो मैं समझ ही नहीं पा रहा था कि इसका व्यावहारिक समाधान क्या होगा। सबसे पहला काम जो मैंने किया, वह यह था कि उसे शहर के वातावरण से दूर गाँव के वातावरण में ले गया और उसे यथासंभव प्रकृति के साथ सहज सम्पर्क में आने की स्वतंत्रता दी। वहाँ नदी थी जो अपने खतरे के लिए जानी जाती थी, वहां वह तैरा और बड़ों की चिंताओं ओर वर्जनाओं से मुक्त होकर उसने नाव भी चलाई। वह खेतों में समय बिताता था, अनगढ़ी पगडंडियों से रेतीले किनारों पर जाता था, खाने के लिए अक्सर देरी से आता था, परन्तु कोई उससे इस बारे में प्रश्न नहीं करता था। उसके पास आराम और ऐश्वर्य के ऐसे कोई साधन नहीं थे जो परम्परागत रीति-रिवाज़ों के अनुसार उसके जैसे परिवेश में

रहने वाले लड़के के लिए आवश्यक ही नहीं, उचित भी माने जाते थे। इन अभावों के लिए न केवल लड़के को दया की दृष्टि से देखा जाता था वरन् उसके माता-पिता के ऊपर भी लोगों द्वारा दोषारोपण में कोई कमी नहीं की जाती थी, ऐसे लोगों द्वारा जिनके लिए समाज ने पूरी दुनिया पर ही पर्दा डाल दिया है।

लेकिन मेरा पूरा विश्वास था कि आराम और विलासिता की चीज़ें लड़कों को भारस्वरूप लगती हैं। यह बोझिलता होती है दूसरों की आदतों की, विलासिता भरे अभिमान और ऐश्वर्य का प्रतिनिधि होने की, जिसका आनन्द माता-पिता अपने बच्चों के माध्यम से लेते हैं।

फिर भी, सीमित साधनों में रहने वाला मैं, अपने बच्चे को अपनी योजना के अनुसार शिक्षा देने की दिशा में बहुत कम कर पाया। उसे कहीं भी आने-जाने की स्वतंत्रता थी। उसके और प्रकृति के बीच व्यवधान डालने वाले धन और सामान के पर्दे बहुत कम थे। इस तरह मेरी अपेक्षा उसे संसार का वास्तविक अनुभव प्राप्त करने के बेहतर अवसर मिले, जो मुझे कभी प्राप्त नहीं हुए। लेकिन मेरे दिमाग में अन्य सब बातों से अधिक चिंता एक और महत्वपूर्ण बात की थी।

शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य को 'सत्य की एकता' (unity of truth) से परिचित कराना है। पहले समय में जब जीवन सादा था, मनुष्य के व्यक्तित्व के सब पहलुओं के बीच परस्पर पूरा सामंजस्य था, लेकिन जब से बुद्धि को आध्यात्म व भौतिकता से अलग कर दिया गया, स्कूली शिक्षा ने सारा ज़ोर मनुष्य की बुद्धि और भौतिक पक्ष पर डाल दिया। हमारा सारा ध्यान बच्चों को सूचनाएं देने पर होता है, बिना इस बात पर ध्यान दिए कि इस प्रकार ज़ोर देकर हम उनके बौद्धिक, भौतिक और आध्यात्मिक जीवन में विघटन को बढ़ावा दे रहे हैं।

मैं आध्यात्मिक संसार में विश्वास करता हूँ, जो हमारी इस दुनिया से कहीं अलग नहीं है, बल्कि इस दुनिया का ही आन्तरिक सत्य है। अनन्त ईश्वरीय रहस्यों से भरे हुए इस विशाल संसार में पैदा होकर हम यह नहीं मान सकते कि हमारा जीवन मात्र एक क्षणिक संयोग था और हम यूं ही पदार्थों के वेगभरे धारा-प्रवाह में अन्तहीन, अनिर्दिष्ट दिशा की ओर बढ़ते जा रहे हैं। हम अपने जीवन को उस स्वप्नदर्शी का ऐसा स्वप्न नहीं मान सकते जिसके जीवन में कभी जागना है ही नहीं। हमारा एक व्यक्तित्व है जिसके लिए पदार्थों और शक्ति का तब तक कोई अर्थ नहीं है जब तक उनका संबंध उस असीम ईश्वरीय सत्ता से न हो जाए जिसकी प्रकृति (स्वभाव) को कुछ मात्रा में हमने मानवीय प्रेम, महान विभूतियों की श्रेष्ठता, वीरों के बलिदान और प्रकृति के अवर्णनीय सौन्दर्य में देखा है, उसे केवल भौतिक सत्य मात्र कहकर व्यक्त नहीं किया जा सकता वरन् वह तो व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति का ही एक रूप है। बचपन से लगातार उपेक्षा करते रहने के कारण हम आध्यात्मिक संसार की वास्तविकता का अनुभव नहीं कर पाते। बच्चों को पूरी तरह इस संसार में रहकर उस वास्तविकता का अनुभव होना चाहिए, मात्र कुछ धर्म संबंधी शिक्षाओं द्वारा इसकी पूर्ति नहीं की जा सकती। लेकिन इसे किया किस प्रकार जाए? वर्तमान युग में इस समस्या का समाधान पाना कठिन है क्योंकि लोगों ने अपने समस्त समय को इस तरह व्यस्त रखने की व्यवस्था कर ली है कि उन्हें इतना खाली समय मिलता ही नहीं कि वे जान पाएं कि उनकी क्रियाओं में केवल कुछ-न-कुछ करते रहने की गति मात्र भर है, परन्तु सत्य बहुत कम है और उनकी आत्मा अपने संसार से बहुत दूर है।

भारत में आज भी हमारी स्मृतियों में वे परम्पराएं जीवित हैं जब महान शिक्षक वनों में निवास करते थे। शब्द के आधुनिक अर्थ में ये स्थान न तो विद्यालय थे, न ही मठ या विहार। इनमें वे धर सम्मिलित थे जहां परिवार के साथ वे लोग रहते थे जिनका लक्ष्य ईश्वर में संसार को देखना और उस ईश्वर में अपने जीवन का अनुभव करना था। यद्यपि वे समाज के बाहर रहते थे, लेकिन समाज के लिए उनका वही महत्व था जो विभिन्न ग्रहों के लिए सूर्य का है - जिस केन्द्र से वे जीवन और प्रकाश ग्रहण करते हैं। यहां छात्र बहुत निकट से जीवन के ध्रुव सत्य को देखते-समझते थे और उसके बाद ही गृहस्थ के रूप में समाज में प्रवेश करते थे।

इस तरह से प्राचीन भारत में विद्यालय वहीं था जहां जीवन का स्रोत था। छात्रों का पालन-पोषण न तो मात्र पढ़ने-सीखने और शैक्षिक वातावरण के बीच विद्वता प्राप्त करते बीतता था, न ही अपूर्णता के साथ अलग-थलग मठों के बीच में, वे तो जीवित आकांक्षाओं के वातावरण के बीच रहते थे। वे पशुओं को चराने ले जाते थे, लकड़ियां बीनते थे, फल इकट्ठा करते थे, सब प्राणियों के प्रति अपने हृदय में दया की अनुभूति करते थे और अपनी भावनाओं को अपने शिक्षक की भावनाओं से मिलाकर अपना आध्यात्मिक विकास करते थे। ऐसा इसलिए सम्भव था क्योंकि इन स्थानों का मुख्य उद्देश्य पढ़ाना नहीं वरन् ऐसे लोगों को संबल देना था जो ईश्वर के सापेक्ष अपना जीवन जीते थे।

गुरु और शिष्यों का ये परम्परागत पारस्परिक संबंध किसी प्रेम-कथा का अंश नहीं है क्योंकि हमारी देशज शिक्षा व्यवस्था में आज भी उसके अवशेष यह सिद्ध करते हैं। ये विश्वविद्यालय जो संस्कृत में 'चालुसपथियां' कहलाते थे, इनमें वर्तमान की 'स्कूल' कही जाने वाली संस्थाओं की गंध नहीं है। छात्र अपने गुरु के धर में परिवार के बच्चों की तरह रहते थे जहां उन्हें रहने, खाने और शिक्षा ग्रहण करने के लिए किसी प्रकार का शुल्क नहीं देना पड़ता था। शिक्षक सादगी का जीवन व्यतीत करते हुए अपना स्वाध्याय जारी रखते थे और साथ ही छात्रों की भी व्यवसाय से परे, जीवन की सहज प्रक्रिया के रूप में सहायता करते थे। इस तरह अपने गुरु के साथ जीवन की ऊँची महत्वांकाक्षाओं की साझेदारी करने के आदर्श ने मेरे विचारों को पूर्ण रूप से प्रभावित किया। दूसरे देशों के वे लोग जो असीमित सांसारिक इच्छाओं को पूरा करने के पक्षधर हैं, वे शिक्षा का उद्देश्य उन वस्तुओं की प्राप्ति मान सकते हैं। परन्तु हमारे लिए अपने आत्म सम्मान और अपने सृष्टिकर्ता के सम्मान के प्रति आभार मानने के लिए शिक्षा का उद्देश्य

मानव जीवन के सर्वोच्च उद्देश्य से कम नहीं हो सकता - अर्थात सम्पूर्णतम विकास और आत्मा की स्वतंत्रता। यदि अल्प दौलत के लिए छीना-झपटी करनी पड़े, तो यह बड़ी दयनीय बात है। हमें उस जीवन को प्राप्त करना है जो मृत्यु के परे भी अस्तित्व में रहता है और सब परिस्थितियों में उच्चता प्राप्त करता है। हमें अपने ईश्वर को प्राप्त करना चाहिए। हमें उस परम सत्य के लिए जीना चाहिए जो हमें सब सांसारिक बंधनों से मुक्त करता है और हमें पदार्थों और शक्ति की नहीं वरन् आंतरिक प्रकाश एवं प्रेम की दौलत देता है। इस प्रकार की आत्मा की स्वतंत्रता हमने अपने देश के उन लोगों में भी देखी है जिनका जीवन बिना किताबी शिक्षा के अत्यंत गरीबी में बीता। भारत में आत्मीय ज्ञान का यह खज़ाना हमें विरासत में मिला है। हमारी शिक्षा का उद्देश्य इस ज्ञान को जानकर अपने जीवन में वह शक्ति प्राप्त करना होना चाहिए जिसका हम अपने जीवन में सही उपयोग कर सकें और समय आने पर उसे अपने अवदान के रूप में संसार को उसके स्थाई हित के लिए दे सकें।

जिस समय विद्यालय बनाने के विचार ने बड़ी गहरी वेदना के साथ मेरे मस्तिष्क (विचारों) को उद्वेलित किया, उस समय मैं पूरी तरह साहित्यिक गतिविधियों में लिप्त था। मुझे अचानक ऐसा लगा जैसे मैं किसी भयानक स्वप्न में घुटन महसूस करके कराह रहा हूँ। यह घुटन केवल मेरी आत्मा की नहीं थी वरन् मेरे देश की आत्मा की भी थी जो लगता था मानो मेरे माध्यम से साँस लेने के लिए छटपटा रही हो। मुझे स्पष्ट आभास हुआ कि इस समय किसी भौतिक पदार्थ की आवश्यकता नहीं है - न धन की, न आराम की, न शक्ति की, वरन् ज़रूरत है तो हमारी आत्मा की मुक्ति के प्रति चेतना के पूरी तरह जागृत होने की, जीवन की स्वतंत्रता को ईश्वर में देखने की, जहाँ हमारी उनसे कोई शत्रुता नहीं जो लड़ना चाहते हैं, उनसे कोई स्पर्धा नहीं जो पैसा पैदा करना चाहते हैं, हमें वहाँ पहुँचना है जहाँ हम इन सब आक्षेपों व अपमान से ऊपर उठ चुके हों।

अंत में मैं अपने श्रोताओं को सावधान करना चाहूँगा कि वे यहाँ से इस आश्रम की कोई गलत या अतिरंजित छवि लेकर न जाएं। जब विचारों को कागज़ों पर अभिव्यक्त किया जाता है तो वे पूर्ण और बड़े सरल मालूम होते हैं और लगता है कि हम बड़ी आसानी से उन्हें पूरा कर लेंगे, लेकिन वास्तविकता यह है कि उसकी अभिव्यक्ति जिनके माध्यम से होनी है वे इंसान जीवित हैं, विभिन्न प्रकार के हैं, निरन्तर बदलते रहने वाले हैं जिस वजह से वह अभिव्यक्ति उतनी स्पष्ट और पूर्ण नहीं होती। मानव स्वभाव में भी बाधाएं हैं और बाह्य परिस्थितियों में भी। हम में से कुछ लोग लड़कों के दिमाग को जीवित अवयव (living organism) मानने में कम ही विश्वास रखते हैं तो कुछ स्वभावतः मानते हैं कि बलपूर्वक ही अच्छे काम कराए जा सकते हैं। दूसरी ओर लड़कों में भी अलग-अलग मात्रा में ग्रहणशीलता होती है और कई लड़के अपरिहार्य रूप से असफल भी होते हैं। कभी उनमें अचानक ही अपराध वृत्ति दिखाई पड़ने लगती है और हम स्वयं ही अपने विचारों के परिणामों के प्रति आशंकित होने लगते हैं। हम शंकाओं और प्रतिक्रियाओं के अंधेरे के बीच से गुज़रते हैं। लेकिन यह संघर्ष और विचलन वास्तविकता का ही एक पहलू है। जिन लोगों को अपने विचारों पर दृढ़ विश्वास है, उन्हें रास्ते में भटकाने वाली विसंगतियों और असफलताओं के बीच अपने विचारों की सत्यता का परीक्षण करना होगा। जहाँ तक मेरा प्रश्न है, मैं जीवन के सिद्धांत में विश्वास करता हूं, तरीकों की अपेक्षा मनुष्य की आत्मा में विश्वास करता हूँ। मेरा विश्वास है कि शिक्षा का उद्देश्य विचारों की स्वतंत्रता है, जिसे स्वतंत्रता के मार्ग से ही

पाया जा सकता है। हालांकि जीवन के समान ही स्वतंत्रता के खतरे भी हैं और ज़िम्मेदारियां भी। यद्यपि अधिकतर लोग यह भूल चुके हैं, परन्तु मैं इसे अच्छी तरह जानता हूँ कि बच्चे जीवित प्राणी हैं, वे उन बड़े लोगों की अपेक्षा अधिक जीवंत हैं जिन्होंने अपने चारों ओर अपनी आदतों की खोल ओढ़ रखी है, इसलिए उनके मानसिक स्वास्थ्य और विकास के लिए यह नितांत आवश्यक है कि स्कूल केवल पाठ पढ़ने के लिए न हो वरन् एक संपूर्ण दुनिया के रूप में हो जो प्यार पर आधारित हो। यह एक ऐसा आश्रम होना चाहिए जहाँ लोग जीवन के उच्चतम उद्देश्य के लिए एकत्रित हों। शांत प्रकृति के बीच जीवन केवल चिंतन करने के लिए न हो, वरन् उसकी गतिविधियों में पूरी तरह जागृति हो, जहाँ दिमाग में लगातार ठोक-ठोककर यह न भरा जाए कि उनके लिए केवल राष्ट्र की मूर्तिपूजा को स्वीकार करना ही उच्चतम आदर्श है, जहाँ उन्हें यह अनुभव करने के लिए अभिप्रेरित किया जाए कि मनुष्यों की यह दुनिया ईश्वर का साम्राज्य है और इसकी नागरिकता की उन्हें आकांक्षा करनी चाहिए। यह दुनिया वह है जहां सूर्योदय, सूर्यास्त और तारों की नीरव शोभा को रोज़ उपेक्षा से नहीं देखा जाता, जहाँ मनुष्य प्रकृति के फूलों और फलों के उत्सवमय अस्तित्व का प्रसन्नतापूर्वक स्वागत करता है और जहां बच्चे और वयस्क, शिक्षक और छात्र एक ही मेज़ पर बैठकर अपने दैनिक भोजन के साथ-साथ अमरतापूर्ण जीवन के लिए भी भोजन ग्रहण करते हैं।

(रवीन्द्रनाथ टैगोर द्वारा अमेरिका में दिए गए इस व्याख्यान को 1933 में मैकमिलन द्वारा प्रकाशित किया गया। अंग्रेज़ी से अनुवादः ऊषा चौधरी।)

रवीन्द्रनाथ टैगोर की विज्ञान कविता

परमाणु
उप परमाणु रचते हैं उनका नृत्य-वृत्त
असीम अंतरिक्ष व समय में
एक सीमा से दूसरी तक नाचते
बनाते हैं अगण्य रूपाकार

•

तारकों की आकाशगंगा के सुदूर पथ-सा
जलीय रश्मियों के मध्य रहस्य में ढँका
मुझे लगा अपना विजन एकांत जैसे एक अदम्य रंगभूमि
मैं आया था
अग्नि की एक अल्प प्रमात्रा के साथ
दिक् एवं काल के एक कोने में।

•

मैं प्रविष्ट होता हूँ अपने अस्सीवें जन्मदिन में
एक विष्मय भर रहा है मस्तिष्क में मेरे
जहाँ अग्नि की आंधी की किरणें
एक अचिन्त्य वेग से
लबालब करती है शून्य को
दसों दिशाओं में
असीम अंबर के अंक में
एक अनित्य चिनगारी
शताब्दी के क्रमिक इतिहास के निस्सीम
सृजन-समारोह में
सहसा होती है प्रकट।

(कवितांश)

नेहरू का उदय और भारतीय विज्ञान पर उनका प्रभाव

शुकदेव प्रसाद

भारतीय विज्ञान का नेहरू युग वस्तुतः भारतीय विज्ञान के उत्कर्ष का युग कहा जा सकता है। स्वाधीनता की संधि बेला में भारतीय राजनीतिक क्षितिज पर पंडित जवाहर लाल नेहरू उदित हुए और उन्होंने विज्ञान के मूलभूत और सम्प्रयुक्त प्रौद्योगिकियों के अनुसंधान कार्यों को त्वरित किया, निर्णय लेने की प्रक्रिया में वैज्ञानिकों की भागीदारी को आवश्यक माना, भारतीय विज्ञान की समुन्नति में इसे नया मोड़ माना जा सकता है। राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं का देशव्यापी जाल, राष्ट्रीय विज्ञान नीति और भारी उद्योगों की स्थापना आदि नेहरू के मौलिक उद्भाव हैं जिनसे भारतीय विज्ञान में तेजी से अनुसंधान आरम्भ हुए और उससे एक सुदृढ़ आधारशिला निर्मित हुई, जो कि भावी शोधकर्ताओं के लिए पथप्रदर्शक की भूमिका निभाने में सक्षम थी।

नेहरू का मानना था कि भविष्य में उन्हीं के साथ है जो विज्ञान को बढ़ावा देते हैं और वैज्ञानिकों से मित्रता रखते हैं। वस्तुतः नेहरू विज्ञान और प्रौद्योगिकी को भारतीय जन-जीवन और भारतीय संस्कृति का अभिन्न और अनिवार्य अंग बना देना चाहते थे। सच यही है कि नेहरू स्वाधीन भारत में वैज्ञानिक क्रांति के अग्रदूत और वैज्ञानिक संस्कृति के जनक थे। उन्हीं के अथक प्रयासों की आधारशिला पर ही आज वैज्ञानिक भारत का भव्य प्रासाद निर्मित हो सका है। वर्तमान भारत में वैज्ञानिक ज्ञान के प्रसार और प्रौद्योगिक विस्तार का जो ढांचा निर्मित हो पाया है, उसकी समूची आयोजना भारत के पहले प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने तैयार की थी। आजादी के पूर्व तक अंग्रेजों की यही चेष्टा और मंशा रही कि भारत उनके लिए कच्चे माल का आपूर्तिकर्त्ता तथा ब्रिटिश निर्माताओं के उत्पादनों का उपभोक्ता बना रहे। इस नाते ब्रिटिशकालीन भारत में ऐसे उद्योग पनपने ही नहीं दिए गए जो आत्मनिर्भरता की ओर भारत की गतिशीलता में अपनी कोई भूमिका निबाहें और इसी नाते जब-जब देशवासियों ने औद्योगिक तानाबाना बुना तो उन्हें कदम-कदम पर मुसीबतें झेलनी पड़ीं फिर भी भारत शनैः-शनैः विकास की राहें खोजता रहा। उद्योग ही नहीं, शिक्षा, अनुसंधान आदि सभी क्षेत्रों में भारतवासियों की न तो सराहना ही की जाती थी और न कोई प्रोत्साहन मिलता था। लेकिन जब, 1947 में ब्रिटिश उपनिवेश का ध्वंस हो गया तो भारत ने आजादी की नई हवा में सांस ली और विकास के लिए अपने पंख पसारे। ऐसी संक्रमण बेला में महान् स्वप्नदर्शी नेहरू ने देश में औद्योगिक विस्तार का ताना-बाना बुना और आजाद भारत में औद्योगिक क्रांति के बीज बोए। नए-नए उद्योगों को उन्होंने न सिर्फ प्रश्रय दिया, अपितु देश में वैज्ञानिक शिक्षा और अनुसंधान का खासा माहौल भी बनाने की हर संभव चेष्टा की। उन्होंने देश में विज्ञान की जो अलख जगायी, उससे जो 'साइंटिफिक टेम्पो' बना, वह निरन्तर आगे बढ़ता ही गया और दो दशकों के अन्दर ही विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भारत की अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर खासी धाक जम गयी।

वैज्ञानिक क्रांति के अग्रदूत नेहरू

नेहरू जानते थे कि अंग्रेजों की लूट-खसोट, प्राकृतिक संपदाओं के अंधाधुंध दोहन, छिन्न-भिन्न अर्थव्यवस्था की विरासतों के साथ भारत को अपनी मंजिल पानी है। अतः बिना औद्योगिक प्रसार के दरिद्र भारत विकास कर ही नहीं सकता, इसलिए उन्होंने इसके लिए ठोस ढांचा निर्मित किया। विज्ञान के देशव्यापी विस्तार के लिए सबसे पहले 'वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान परिषद' (Council of Scientific and Industrial Research - CSIR) की स्थापना की गई, जिसके प्रथम निदेशक थे प्रो. शांति स्वरूप भटनागर और पंडित नेहरू अध्यक्ष थे। सी.एस.आई.आर. के अन्तर्गत देश भर में 'राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं' ;National Laboratories) की शृंखला फैलायी गई। पंडित नेहरू ने वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं को 'विज्ञान मन्दिरों' की संज्ञा दी थी।

1939 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने पंडित जवाहर लाल नेहरू की अध्यक्षता में एक 'राष्ट्रीय योजना समिति' का गठन किया था। समिति ने देश के आर्थिक और सामाजिक उत्थान के लिए योजना बनाने हेतु देश के गणमान्य वैज्ञानिकों का आह्वान किया कि वे भावी भारत के निर्माण में अपनी अग्रणी भूमिका निभायें। इस तरह एक ही मंच पर राजनयिकों और वैज्ञानिकों के साथ-साथ विचार-विमर्श के उपरांत पंडित नेहरू ने 1958 में देश की संसद से भारत के लिए 'विज्ञान और प्रौद्योगिकी नीति' पारित की। सारी दुनिया के लिए यह सर्वप्रथम उदाहरण था, जब किसी देश की संसद ने विज्ञान नीति का प्रस्ताव पारित किया हो। पंडित नेहरू की दूर दृष्टि का ही यह सुखद परिणाम था कि देश में वैज्ञानिक अनुसंधान और वैज्ञानिक ज्ञान के प्रसार का माहौल बना। इतना ही नहीं, नेहरू ने विज्ञान नीति के कार्यान्वयन के लिए कई कदम उठाये थे :

- वैज्ञानिकों के समक्ष उन्होंने सामाजिक समस्याओं को रखा तथा उनके हल ढूंढ़ने के लिए वैज्ञानिकों को प्रेरित किया।
- विभिन्न समितियों में वैज्ञानिकों को सम्मिलित करके प्रशासकों को विज्ञान की उपयोगिता के बारे में सजग किया।
- निर्णय लेने की प्रक्रिया में वैज्ञानिकों की सहभागिता की परम्परा उन्होंने ही आरम्भ की।
- देश के सुधार कार्यों में वैज्ञानिक ज्ञान का उपयोग यथा-मीट्रिक प्रणाली का चलन, भारतीय कैलेन्डर (राष्ट्रीय पंचांग) का निर्माण आदि उन्होंने कराया।
- विज्ञान और प्रौद्योगिकी को उन्होंने भरपूर समर्थन दिया। उद्योगपतियों, प्रशासकों और अपनी पार्टी के कई विरोधियों के बावजूद देश के लिए पर्याप्त वैज्ञानिक आधार तैयार करने में खासा श्रम किया। प्रयोगशालाओं में खुद जा-जा कर वे शोध-कार्यों और वहाँ हो रही प्रगति का जायजा लेते रहते थे।

वस्तुतः नेहरू विश्व के उन थोड़े से राजनयिकों में से एक थे जिनकी विज्ञान में गहन आस्था थी। उनका मानना था कि राष्ट्रीय उत्थान में प्रौद्योगिकी अपनी महती भूमिका निभा सकती है। नेहरू अक्सर कहा करते थे - 'भविष्य उन्हीं के साथ है, जो विज्ञान को बढ़ावा देते हैं और वैज्ञानिकों से मित्रता रखते हैं।' नेहरू इस बात के भी कायल थे कि अंधविश्वासों से ग्रस्त समाज में केवल संस्थान स्थापित करने या शोध सुविधाएँ प्रदान कर देने मात्र से विज्ञान नहीं पनपेगा। उनका मानना था कि उसके लिए देश में वैज्ञानिक अभिरूचि जागृत करनी होगी और उन्होंने इसका प्रयास भी किया। बार-बार उन्होंने वैज्ञानिकों का ध्यान भी इस ओर आकर्षित किया। वस्तुतः नेहरू विज्ञान और प्रौद्योगिकी को भारतीय जन-जीवन और भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग बना देना चाहते थे और इस ज्ञान-यज्ञ में उन्होंने भरपूर हामी भी दी। उन्हीं के अथक प्रयासों की आधारशिला पर ही आज वैज्ञानिक भारत का शानदार भवन निर्मित हो सका है।

वैज्ञानिकों के प्रति मैत्री भावना

नेहरू राजनीति की दुनिया के जीव थे लेकिन उनकी विज्ञान के प्रति अनन्य अभिरूचि थी। नेहरू संसार की एक ऐसी राजनीतिक विरल विभूति थे जो अपनी व्यस्तताओं के बीच भी समय निकाल कर देश की प्रयोगशालाओं में जाते और वहाँ हो रही प्रगति का जायजा लेते रहते थे। इस मायने में नेहरू विश्व की राजनीतिक विभूतियों में दुर्लभ और विलक्षण व्यक्तित्व थे। प्रयोगशालाओं में देश के युवा प्रातिभ विज्ञानियों का काम देखकर आह्लादित हो जाते और उनकी हौसला अफजाई करके उन्हें भी रोमांच से लबरेज कर देते थे - 'मैं जब अपने युवकों और युवतियों के चेहरों को देखता हूँ तो मुझे उनमें कल के भारत की झलक मिलती है। वे ही रिएक्टर और ऐसी ही अनेक चीजों को आगे चलकर बनाएंगे और भारत का नक्शा बदल देंगे, भारत की विचारधारा बदल देंगे। जब मुझे कभी ट्रांबे आने का अवसर मिला है, मुझे यहाँ काम करने वाले वैज्ञानिकों को देखकर खुशी हुई है, संतोष मिला है, क्योंकि मुझे अपनी दृष्टि में भारत का भविष्य नज़र आता है- उस भारत का जिसमें आत्मा के प्रति, विज्ञान में सत्य की खोज के प्रति, घिसी-पिटी लीकों और पुरानी रूढ़ियों को छोड़कर आगे बढ़ने के प्रति आस्था होगी।'

नेहरू की इस विज्ञान-मैत्री भावना की पूर्ण अभिव्यक्ति उनके उस उद्बोधन में है जो उन्होंने जनवरी 1961 में ट्रांबे स्थित परमाणु ऊर्जा रिएक्टरों के उद्घाटन के अवसर पर व्यक्त किया था- 'यह सत्य है कि हम वर्तमान के लिए काम कर रहे हैं क्योंकि हम वर्तमान में रहते हैं किंतु अपने इस कार्य द्वारा हम भविष्य पर भी काबू पा लेंगे और वह स्वयं ही खुलकर हमारे सामने स्पष्ट हो जायेगा। इसलिए जब मैं इस शानदार गुंबज को देखता हूँ तो मुझे आनंद मिलता है, उत्साह का अनुभव होता है। इस विशाल गुंबज के अतिरिक्त जिन्हें देखकर मुझे और भी अधिक आनंद और उत्साह का अनुभव होता है, वह हैं यहाँ पर काम करने वाले हजारों नौजवान वैज्ञानिक। जब मैं उनके श्रीपूर्ण दमकते चेहरों को देखता हूँ तो मुझे उनमें शक्ति के, उत्साह के और खोज के लिए इच्छुक दृष्टि के दर्शन होते हैं। ऐसी थी नेहरू की विज्ञान और विज्ञानियों के प्रति गहन आस्था। सच यही है कि अप्रतिम थी नेहरू की विज्ञान भावना और विज्ञान के प्रति उनका समर्पण भाव।'

हरित क्रांति के सपने

यह कहना तो गैर मुनासिब होगा कि नेहरू भारत में हरित क्रांति के अग्रदूत थे लेकिन यह जरूर सच है कि नेहरू ने स्वाधीन भारत में हरित क्रांति के सपने जरूर देखे थे। देश में हरित क्रांति के सपने को साकार करने में प्रेरक की भूमिका निभायी डॉ. नार्मन बोरलॉग ने और आगे चलकर एम. एस. स्वामीनाथन् और उनके सहयोगी कृषि विज्ञानियों ने। पर यहाँ इस बात का उल्लेख अवश्य किया जाना लाजिमी है कि नेहरू ने देश में हरित क्रांति के बीज का वपन किया था ताकि देश को भुखमरी के

अभिशाप से मुक्त किया जा सके।

18 जनवरी, 1948 को आकाशवाणी से 'अधिक अन्न उपजाओ' कार्यक्रम की उद्घोषणा करते हुए नेहरू ने कहा था- 'दरअसल एक भूखे इंसान के लिए या बहुत गरीब मुल्क के लिए आजादी का कोई मतलब नहीं है। इसलिए हमें उत्पादन बढ़ाना चाहिए।' नेहरू का आह्वान था- 'बाकी सब कुछ रुक सकता है पर खेती इंतजार नहीं कर सकती।' दरअसल बंग विभाजन, दुर्भिक्ष-अकाल, भारत-पाक विभाजन से उपजे आर्थिक अधिभार से दम तोड़ते कोटि-कोटि भारतीयों के लिए उनके मन में गहन पीड़ा था। वह दरिद्र भारत को नवीन त्वरा देकर देश को आत्मनिर्भर बनाने के पक्षधर थे और इसके लिए उन्होंने प्रयास भी किए। परिणाम यह है कि जो भारत अपनी जनता को दो वक्त की रोटी देने को कभी मुंहताज था, आज वह अन्न निर्यातक राष्ट्र बन गया है। कदाचित यहाँ सुप्रसिद्ध कृषि विज्ञानी स्वामीनाथन् की टिप्पणी समीचीन होगी, 'गरीबी-अमीरी के बीच की खाई को मिटाने के लिए नेहरू ने विज्ञान का मुँह गाँवों की ओर मोड़ा। आजादी के बाद ही सिंदरी में पहला उर्वरक कारखाना खुला, सिंचाई योजनाएँ शुरू हुईं और कृषि के लिए नए रास्ते खुले। उन्हीं की डाली बुनियाद का फल है कि हम खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता प्राप्त कर पाए हैं।'

देश का पहला कृषि विश्वविद्यालय उत्तर प्रदेश (अब उत्तराखण्ड) के पंतनगर (नैनीताल) में स्थापित किया गया था। 17 नवंबर, 1960 को इसके उद्घाटन के अवसर पर पूरे देश के किसानों को इसे समर्पित करते हुए पंडित नेहरू ने कहा था- 'यह विश्वविद्यालय तो किसानों के घर जैसा होना चाहिए।' निस्संदेह 'लैब टू लैंड' की संकल्पना के प्रथम खोजी नेहरू ही थे। विज्ञान की जन-जीवन में पैठ होनी चाहिए, तभी एक नव संस्कृति विकसित होगी, नेहरू की स्पष्ट धारणा थी। वह अक्सर कहा करते थे कि अंधविश्वासों से ग्रस्त समाज में केवल संस्थान स्थापित करने या कि शोध सुविधाएं प्रदान कर देने मात्र से विज्ञान नहीं पनपेगा। भारत वस्तुतः एक खेतिहर समाज है जहाँ कृषि 'मानसून का जुआ' है। इस चुनौती के लिए नेहरू ने समांतर प्रयास किए। एक तरफ उन्होंने कृषि में वैज्ञानिक निवेश की आवश्यकता पर बल दिया- 'हमें अपनी खेती को वैज्ञानिक रूप देना है, विज्ञान से लाभ उठाना है। जैसी अन्य मुल्कों में कृषि में तरक्की हुई है, वैसा ही अपने देश में करना है।' और दूसरी तरफ उन्होंने एक और सपना देखा - 'हर खेत को पानी'। शनैः-शनैः भाखड़ा नांगल, गांधी सागर, गंडक, कोसी, नागार्जुन सागर, हीराकुंड, तुंगभद्रा, महा प्रभा और घट प्रभा बांध जैसी विशाल सिंचाई परियोजनाओं ने नेहरू के इस सपने को रूपाकार प्रदान किया और इसी का सुफल है कि आज भारत खाद्यान्न निर्यातक राष्ट्र बन गया है।

ग्रामीण भारत का पुनर्निर्माण

प्रथम पंच वर्षीय योजना में ही नेहरू ने गाँवों के पुनर्निमाण हेतु सामुदायिक योजनों का शुभारंभ किया क्योंकि उनका मानना था- 'मेरे लिए सामुदायिक योजनाएँ बहुत अहमियत रखती हैं। सिर्फ इनसे होने वाले भौतिक लाभों की वजह से नहीं बल्कि बहुत कुछ इस वजह से कि इनका उद्देश्य इंसान और समुदाय का निर्माण करना है और इंसान को इस लायक बनाना है कि वह अपने गाँव और व्यापक अर्थ में समूचे भारत का निर्माण कर सके।' उक्त संदर्भ में उनका दृढ़ विश्वास था कि 'सामुदायिक योजनाएं यदि ठीक से लागू की जाएँ तो ये क्रांतिकारी सिद्ध होंगी। हमने पहले गाँवों की ओर ज्यादा ध्यान नहीं दिया और जब तक हम उनका विकास नहीं करेंगे, हम पिछड़े रह जायेंगे।'

नेहरू की तमाम कोशिशों के बावजूद ये चीजें मंथर गति से चलती रहीं। योजनागत विकास भी भारत के लिए नया-नया अनुभव था। आरंभ में खेती ने जोर नहीं पकड़ा तो उसे नेहरू ने तुरंत भांप लिया और पिछड़ती खेती को देखकर उनके धीरज का बांध टूट गया। तभी तो उन्होंने कहा था कि सब कुछ इंतजार कर सकता है पर खेती नहीं। नेहरू खेती में त्वरा लाने के लिए उसमें आधुनिकता का, वैज्ञानिकता का निवेश चाहते थे जिसका विरोध भी हुआ पर उन्होंने इसका दृढ़ प्रतिवाद करते हुए कहा- 'मैं उन लोगों से सहमत नहीं हूँ जो यह कहते हैं कि भारतीय किसान आधुनिक तरीकों को नहीं अपना सकते। समस्या केवल यह है कि उन तक नए तौर-तरीकों को कैसे पहुंचाया जाए?' नेहरू युग धर्म के कायल थे। खेती में नयी तकनीकों और उपकरणों के निवेश के बारे में किसानों को उनकी राय थी- 'हर युग का अपना धर्म होता है। यदि आप युग धर्म का पालन नहीं करेंगे तो निर्बल हो जायेंगे, विफल हो जायेंगे।' खेती हमारी मेरूदंड है और नेहरू उसकी आभा को और प्रखर बनाने के सदैव हिमायती थे। विज्ञान में उनकी प्रबल आस्था थी। खेती ही क्या, उनकी धारणा थी कि विज्ञान हमारी हर समस्याओं का समाधान कर सकता है। भले ही समस्या भूख, गरीबी, जड़ता या कि अंधविश्वास निवारण की ही क्यों न हो?

नेहरू की वैज्ञानिक अवधारणाओं, उनकी मनोवृत्ति और उनके मानस पर भारतीय परमाणु कार्यक्रम के पितामह डॉ. होमी जहांगीर भाभा की टिप्पणी सर्वथा समीचीन है- 'जवाहर लाल नेहरू के लिए युग का सबसे बड़ा काम था, मनुष्य को युगों पुरानी गरीबी के जीवन से ऊपर उठाकर एक ऐसे सामाजिक जीवन के स्तर पर पहुँचा देना, जहाँ सुरक्षा, सुख, साधन और इन सबसे भी अधिक जीवन के उच्चादर्शों को पूरित करने का अवसर प्राप्त हो सके। वह जानते थे कि इन उद्देश्यों को केवल विज्ञान और उसके व्यावहारिक पक्षों से ही प्राप्त किया जा सकता है। उनका विश्वास था कि आधुनिक विज्ञान को' आधार बना कर ही भारत फिर से एक महान राष्ट्र बन सकता है।'

परमाणु आयुध नहीं, वांछनीय है परमाणु ऊर्जा

स्वदेश आगमन के बाद डॉ. होमी जहांगीर भाभा ने टाटा ट्रस्ट के अनुदान से मुंबई में 'टाटा आधारभूत अनुसंधान संस्थान' की स्थापना की जो डॉ. भाभा के लिए एक निजी प्रयोगशाला थी जिसका निमित्त था- 'अब से कुछ वर्षों बाद जब परमाणु ऊर्जा का बिजली उत्पन्न करने में सफलतापूर्वक उपयोग होने लगेगा तब मुझे विश्वास है कि भारत को अपने लिए विशेषज्ञ बाहर से नहीं बुलाने पड़ेंगे वरन् वे अपने देश को तैयार मिलेंगे।'

जब उक्त प्रयोगशाला की जानकारी नेहरू को हुई तो उन्होंने बड़ी शिद्दत से महसूस किया कि सार्वजनिक क्षेत्र में परमाणु ऊर्जा प्रतिष्ठान खड़े किए जाने चाहिए। अतः उन्होंने डॉ. भाभा की अध्यक्षता में 1948 में परमाणु ऊर्जा आयोग का गठन किया। आगे चलकर 1954 में 'परमाणु ऊर्जा प्रतिष्ठान' की ट्राम्बे में स्थापना की गई, (डॉ. भाभा के निधन के बाद 1967 में इसका नाम भाभा परमाणु अनुसंधान केंद्र कर दिया गया) उसी वर्ष परमाणु ऊर्जा विभाग भी अस्तित्व में आया। साथ ही साथ

'अप्सरा (1956), साइरस (1960), जरलीना (1961) जैसे परमाणु रिएक्टरों की स्थापना का भी काम चलता रहा। जब भारत में परमाणु ऊर्जा संबंधी प्रतिष्ठानों के निर्माण का काम जोर-शोर से चल रहा था तो इनकी आलोचनाएं भी की गईं। नेहरू ने इसका पुरजोर विरोध करते हुए 10 मई 1954 को लोकसभा में उद्घोषणा की- 'मैं सदन को इस बात की याद दिलाना चाहता हूँ कि शांतिपूर्ण उद्देश्यों के लिए परमाणु शक्ति का उपयोग भारत जैसे देश के लिए, जहाँ कि ऊर्जा के स्रोत सीमित हैं, ज्यादा महत्वपूर्ण हैं, बनिस्बत फ्रांस जैसे औद्योगिक दृष्टि से विकसित देश के लिए।' नेहरू की दृष्टि में परमाणु ऊर्जा कार्यक्रमों का लक्ष्य शांतिमूलक होना चाहिए। वे परमाणु विद्युत तो चाहते थे पर परमाणु आयुध नहीं। कदाचित यही कारण है कि नेहरू के अवसान काल तक भारत ने परमाणु परीक्षण नहीं किया यद्यपि वह सक्षम था। विचारणीय है कि जो देश 1956 में परमाणु रिएक्टर की स्थापना कर सकता है, वह परमाणु परीक्षण नहीं कर सकता था? दोनों युक्तियों की तकनीक तो एक ही है। अमेरिका (1945), सोवियत संघ (1949), ब्रिटेन (1952), फ्रांस (1960) परमाणु विस्फोट करके परमाणु शक्तियाँ बन बैठी थीं और यहां तक कि चीन भी 1964 में इन्हीं की बिरादरी में शामिल हो गया। भाभा आरंभ से परमाणु परीक्षण के लिए नेहरू पर जोर देते रहे लेकिन उन्होंने हमेशा इसकी अनसुनी की लेकिन जब चीन परमाणु शक्ति बन गया तो भाभा से न रहा गया और उन्होंने नेहरू से कहा- अब तो आपकी अनुमति मिल ही जानी चाहिए। लेकिन नेहरू ने सदा की भाँति निर्विकार भाव से फिर उन्हें मना कर दिया।

नेहरू की परमाणु अवधारणा पर डॉ. भाभा ने टिप्पणी की है- 'पंडित जी यह अनुभव करते थे कि विज्ञान का एकमात्र उपयोग मानव के हित के लिए होना चाहिए न कि युद्ध के लिए, अत्यधिक शक्तिशाली और विनाशकारी अस्त्र बनाने में। यद्यपि जवाहर लाल नेहरू पेशे से वैज्ञानिक नहीं थे किंतु उनके व्यक्तित्व से सदैव एक पूर्ण वैज्ञानिक के सभी अनिवार्य गुणों की आभा प्रस्फुटित होती रही। वह विज्ञान को बहुत बड़ा बौद्धिक अनुशासन मानते थे जो मनुष्य के व्यक्तित्व को प्रस्फुटित करता है और जिसके कारण प्रत्येक बात में उसके वास्तविक रूप को देखने की क्षमता उत्पन्न होती है।'

नेहरू में यह क्षमता अपनी संपूर्णता और सर्वांगता के साथ विद्यमान थी। वह वैज्ञानिक तो नहीं थे पर उन्हें विज्ञान की खासी समझ थी और विज्ञान तथा वैज्ञानिकों के सामाजिक सरोकारों तथा उत्तरदायित्वों का उन्हें पूरी तरह भान था, इसीलिए वे विज्ञान के विवेक सम्मत अनुप्रयोगों की ही अनुशंसा करते थे जो समूची मानव जाति के लिए कल्याणकारी हो। यही कारण है कि भारत और अन्य शक्ति राष्ट्रों की परमाणु आयोजनाओं में एक बुनियादी अंतर विद्यमान है। भारत ने जहां शांतिमूलक संधानों पर जोर दिया, वहीं दूसरी ओर इन राष्ट्रों ने परमाणु आयुधों के भंडारण में अपनी पूरी ताकत लगा दी और दुनिया को विश्वयुद्ध की आग में झोंक दिया। यह खतरा आज भी मंडरा रहा है। गौरतलब है कि जिस भारत ने 1956 में परमाणु भट्टी बनायी, वह 1974 में परमाणु परीक्षण करता है और जिस चीन ने 1964 में परमाणु परीक्षण किया, वह 1998 में परमाणु विद्युत जनन के लिए एक प्रोटोटाइप रिएक्टर की स्थापना करता है। यही बुनियादी अंतर है भारत और शेष विश्व के परमाणु कार्यक्रमों में। परमाणु संधान के शांतिमूलक प्रयोजनों की नीतिगत अवधारणा नेहरू की ही देन थी जिस पर भारत आज भी कायम है। आज भारत परमाणु शक्ति सम्पन्न राष्ट्र है लेकिन 'नो फर्स्ट यूज' पर अपनी प्रतिबद्धता के लिए वह वचनबद्ध भी है।

अंतरिक्ष कार्यक्रमों को भी समर्थन

जिस प्रकार डॉ. भाभा के निजी प्रयासों से परमाणु क्षेत्र में संधान कार्यक्रम आरंभ हुए, उसी तरह डॉ. विक्रम अंबालाल साराभाई के निजी प्रयासों से देश में अंतरिक्ष संधानों का शुभारंभ हुआ। 1948 में महात्मा गांधी विज्ञान संस्थान, अहमदाबाद के तीन कमरों में साराभाई ने भौतिक अनुसंधान प्रयोगशाला की स्थापना के साथ अंतरिक्ष अनुसंधान की आधार पीठिका निर्मित की। नेहरू ने इसे सराहा ही नहीं अपितु इस कार्यक्रम को और व्यापक तथा भव्य रूप दिया। 1962 में साराभाई की ही अध्यक्षता में परमाणु ऊर्जा विभाग की देख-रेख में बाह्य अंतरिक्ष के शांतिपूर्ण उपयोग के लिए 'अंतरिक्ष अनुसंधान की भारतीय राष्ट्रीय समिति (इनकोस्पार) गठित की। आगे चलकर इसी का पुनर्गठन किया गया और 'भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन' (इसरो)' 1969 में अस्तित्व में आया जिसने नेहरू, भाभा और साराभाई के सपनों को संपूरित किया और भारत ने विश्वमंच पर अपनी एक प्रतिष्ठ राष्ट्र का छवि निर्मित की।

यद्यपि भारत के परमाणु और अंतरिक्ष कार्यक्रमों का बहुत विरोध किया गया लेकिन नेहरू टस से मस न हुए और वे इन दोनों कार्यक्रमों को अपना समर्थन और सहयोग देते रहे। इन कार्यक्रमों के प्रत्यक्षदर्शी प्रातिभ इंजीनियर और देश के पूर्व राष्ट्रपति डॉ. कलाम अपनी आत्मकथा में उन संशयपूर्ण लम्हों को याद करते हुए लिखते हैं- 'भारत में राकेट विज्ञान के पुनर्जन्म का श्रेय प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू की नई प्रौद्योगिकी के विकास की दृष्टि को जाता है। उनके इस सपने को साकार करने की चुनौती प्रो. साराभाई ने ली थी। हालांकि कुछ संकीर्ण दृष्टि के लोगों ने उस समय यह सवाल उठाया कि हाल में स्वाधीन हुए जिस भारत में लोगों को खिलाने के लिए अन्न नहीं है, उस देश में अंतरिक्ष कार्यक्रमों की क्या प्रासंगिकता है? लेकिन न तो प्रधानमंत्री नेहरू और न ही प्रो. साराभाई में इस कार्यक्रम को लेकर कोई अस्पष्टता थी। उनकी दृष्टि अत्यंत स्पष्ट थी- 'अगर भारत के लोगों को विश्व समुदाय में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है तो उन्हें नई से नई तकनीक का प्रयोग करना होगा, तभी जीवन में आने वाली समस्याएं हल होंगी।' इसके माध्यम से उनका अपने शक्ति प्रदर्शन का कोई इरादा न था। यह नेहरू की वैज्ञानिक दृष्टि और दूरंदेशी थी और जब उसने रंग दिखाया तो दुनिया दंग रह गयी। आज यह सब जग जाहिर है।

इस विहंगावलोकन के उपरांत निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि आधुनिक भारत के वैज्ञानिक नवनिर्माण में नेहरू के अवदानों की अवहेलना की ही नहीं जा सकती है। वस्तुतः पंडित नेहरू आधुनिक भारत के विज्ञान शिल्पी थे। अस्तु!

sdprasad24oct@yahoo.com

डॉ. कृष्ण कुमार मिश्र ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय से रसायन विज्ञान में पीएच-डी. की उपाधि प्राप्त की। आप टाटा मूलभूत अनुसंधान संस्थान, मुंबई के होमी भाभा विज्ञान शिक्षा केन्द्र में एसोशिएट प्रोफेसर हैं। लोकप्रिय विज्ञान लेखक के रूप में आपकी अपार ख्याति है जो कि हिन्दी में आपके व्यापक लेखन से निर्मित हुई है। आपके 300 से अधिक लेख तथा 24 पुस्तकें प्रकाशित हैं। के.एन. भाल नामित पुरस्कार, राजभाषा गौरव पुरस्कार, होमी जहाँगीर भाभा स्वर्ण पुरस्कार, विज्ञान परिषद् प्रयाग शताब्दी सम्मान, राजभाषा भूषण पुरस्कार सहित अनेक अलंकरणों से सम्मानित डॉ. मिश्र मुंबई में निवास करते हैं।

डॉ. कृष्ण कुमार मिश्र

बाल कथा-साहित्य और विज्ञान एक शैक्षणिक विमर्श

हमारे प्रथम प्रधानमंत्री पं.जवाहर लाल नेहरू बच्चों से बहुत प्रेम करते थे। बच्चे उन्हें चाचा नेहरू कहते थे इसलिए चाचा नेहरू ने अपने जन्मदिन को 'बालदिवस' के रूप में मनाने का उपहार दिया। उनका मानना था कि बच्चे किसी राष्ट्र का भविष्य होते हैं। कोई भविष्य का देश कैसा बनेगा, वह उसकी वर्तमान शिक्षा पर निर्भर करता है। व्यक्ति निर्माण में शिक्षा तथा साहित्य की अहम् भूमिका होती है। शिक्षा तथा साहित्य परस्पर जुड़े हुए हैं। साहित्य की दुनिया में बाल साहित्य की अपनी खास अहमियत होती है। यह वह विधा है जिसमें बच्चों के धरातल तथा भावभूमि पर उतर साहित्य सृजन करना पड़ता है। जाहिर है, यह कोई आसान काम नहीं है। आज बाल केंद्रित शिक्षा पर बहुत जोर है। ऐसी शिक्षा, जो बच्चों की जरूरतों तथा उनके चिंतन संसार को ध्यान में रखकर दी जाए। वह शिक्षा जो बाल सुलभ कौतूहल तथा बालमनोविज्ञान को ध्यान में रखते हुए तैयार की गयी हो। यानी बच्चों की पाठ्यचर्या में उनकी जरूरतों, अभिरुचियों, विचारों तथा चिंतन को ध्यान में रखते हुए सामग्रियां तथा अध्यापन पद्धतियों का विकास किया गया हो। कथा संभवतः मानव इतिहास की सबसे पुरानी विधा है। आदिमानव ने जब भाषा सीखी होगी तो उसने अपने जीवनानुभवों को किस्से-कहानियों के रूप में अपने परिजनों या निकटवर्तियों से साझा किया होगा। भाषाविज्ञानियों का ऐसा ही मानना है। विज्ञान साहित्य को यदि हम लोकप्रिय बनाना चाहते हैं तो विज्ञान कथाओं पर सर्वाधिक बल दिया जाना चाहिए। उसका हर तरह से संवर्धन किया जाना चाहिए। बच्चों के बीच यदि विज्ञान को रोचक तरीके से ले जाना हो तो विज्ञान कथाओं से बेहतर माध्यम दूसरा नहीं हो सकता।

कहानियाँ जीवन का हिस्सा

किस्से-कहानियां बच्चों को हमेशा से लुभाती रही हैं। शिक्षाशास्त्रियों ने कहानियों को सम्मोहन का शास्त्र बताया है। वैसे कहानियां बच्चों ही नहीं, बड़ों को भी उतना ही पसन्द आती हैं। पहले के समय में देश की आबादी का अधिकांश हिस्सा हमारे गांवों में बसता था। लोगों का मुख्य व्यवसाय खेती थी। परिवार सामूहिक होते थे। एक कुटुंब में माता-पिता, भाई-बहन, चाचा-चाची, दादा-दादी, ताऊ-ताई, तथा उन सभी के बाल-बच्चे साथ रहते थे। एक परिवार में प्रायः एक साथ तीन या चार पीढ़ियां रहती थीं। तब मनोरंजन के आज जैसे साधन न थे। उस समय में खेती-बारी के कामों से फुरसत पाने पर प्रायः शाम को बड़े बुजुर्ग बच्चों को पास बैठाकर किस्से सुनाते थे। ये किस्से जाहिर है, वे भी अपने दादा-दादी या नाना-नानी से सुने हुए रहते थे। इस तरह समाज में लोकसाहित्य की एक वाचिक धारा पीढ़ी दर पीढ़ी प्रवाहित होती रहती थी।

भारत में कथा परम्परा

भारत में कहानियों की सुदृढ़ परम्परा रही है। पंचतंत्र तथा जातक कथाएं हजारों साल से हमारे समाज में लोकप्रिय रही हैं। पं. विष्णु शर्मा रचित पंचतंत्र की गिनती दुनिया की श्रेष्ठतम बालकथाओं में की जाती है।

इसका दुनिया की अनेक भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। हमारे देश में स्कूल स्तर पर हिन्दी, संस्कृत तथा अंग्रेजी की किताबों में ये कहानियां हमेशा से पाठ्यक्रम का हिस्सा रही हैं। दुनिया के अन्य देशों में भी इन कहानियों को उतना ही आदर प्राप्त है जितना हमारे देश में है। आज दुनिया भर के शिक्षाशास्त्री तथा बालमनोविज्ञानी इस बात को स्वीकार करते हैं कि बच्चों के कल्पना जगत में पशुओं, पक्षियों का अप्रतिम स्थान होता है। वे स्वाभाविक रूप से इनकी ओर आकृष्ट रहते हैं। जानवरों की दुनिया में उनमें रुचि, कौतूहल तथा जिज्ञासा होती है। पंचतंत्र में प्रायः इन्हीं की चर्चा है। इनमें पशु पक्षी एक दूसरे से बात करते हैं। उनमें उसी तरह संवाद होता है जैसे कि मानव समाज में होता है। इन कथाओं में नैतिक मूल्य निहित है। इन कहानियों के जरिये, सच्चाई, त्याग, सेवा, अपरिग्रह, दया, क्षमा, करुणा, स्नेह, जैसे जीवन मूल्यों को संप्रेषित करने की कोशिश की गयी है। ये सभी मूल्य मानव समाज के लिए नितांत जरूरी हैं। इन कथाओं के जरिये वास्तव में बालमन में जीवन मूल्यों का बीजारोपण होता है।

आज से करीब दो हजार साल पहले लिखी गयी पंचतंत्र की कहानियां कालजयी हैं। माना जाता है कि यह दुनिया की सर्वाधिक भाषाओं में अनूदित भारतीय साहित्य है। कहा जाता है कि उस समय एक राजा थे। उन्होंने पं. विष्णु शर्मा को अपने बेटे के लिए सुन्दर-सुन्दर शिक्षापरक कहानियां रचने तथा सुनाने के किए अपने दरबार में नियुक्त किया था। राजा की कोशिश थी कि अच्छी अच्छी कहानियों से बचपन से ही राजकुमार में मानवीय गुण संप्रेषित तथा संपुष्ट होंगे। पंचतंत्र में वे ही कहानियां संग्रहीत हैं। ये कहानियां पांच खण्डों में विभक्त हैं जिन्हें तंत्र कहा गया है। पांच तंत्रों के समावेश के कारण इन्हें पंचतंत्र कहा गया। विश्वविख्यात लेखक, रुडयार्ड किपलिंग की पुस्तक 'जंगल बुक' पर बनी फिल्म दुनिया में करोड़ों बच्चों के बीच कितना लोकप्रिय हुई, यह हम सबके सामने है। इस फिल्म की पटकथा वन्य प्राणियों पर ही आधारित है। इस फिल्म को तमाम भाषाओं में डब करके जारी किया गया। इस फिल्म ने रिकहर्ड सफलता पायी।

आज से करीब दो हजार साल पहले लिखी गयी पंचतंत्र की कहानियां कालजयी हैं। माना जाता है कि यह दुनिया की सर्वाधिक भाषाओं में अनूदित भारतीय साहित्य है। कहा जाता है कि उस समय एक राजा थे। उन्होंने पं. विष्णु शर्मा को अपने बेटे के लिए सुन्दर-सुन्दर शिक्षापरक कहानियां रचने तथा सुनाने के किए अपने दरबार में नियुक्त किया था। राजा की कोशिश थी कि अच्छी अच्छी कहानियों से बचपन से ही राजकुमार में मानवीय गुण संप्रेषित तथा संपुष्ट होंगे। पंचतंत्र में वे ही कहानियां संग्रहीत हैं।

जातक कहानियाँ भारत की अमूल्य धरोहर हैं।

जातक का शाब्दिक अर्थ होता है जन्म-सम्बन्धी। ये कहानियां भगवान बुद्ध के पूर्व जन्म की कथाएं हैं। ऐसी मान्यता है कि कोई व्यक्ति केवल एक जन्म के सत्कार्यों से बुद्धत्व को प्राप्त नहीं हो सकता। बल्कि बुद्ध बनने के लिए जन्म जन्मान्तर के संचित पुण्य की आवश्यकता होती है। जातक कथाओं में भगवान बुद्ध के पूर्व जन्मों की धटनाओं का उल्लेख मिलता है, जिनमें मानव तथा मानववेतर प्राणियों के रूप में उनका धरती पर आविर्भाव होता है। इस सभी कथाओं में श्रेष्ठ जीवन मूल्यों की बात स्थापित की गयी है। ये कथाएं करीब 300 ईसापूर्व से लेकर ईसा के बाद चौथी सदी, तक कुल 700 वर्ष के दौरान लिखी गयी हैं। जातक कथाओं के तमाम संग्रह अलग-अलग प्रकाशकों द्वारा मिलते हैं। जन साहित्य के व्यापक प्रसार हेतु सस्ता साहित्य मंडल ने काफी काम किया है। इसने जातक कथाओं का एक संकलन भदन्त आनन्द कोसल्यायन के संपादकत्व में तैयार कराकर प्रकाशित किया है। सस्ता साहित्य मंडल एक धर्मार्थ संस्था है। इसकी स्थापना सन् 1925 में महात्मा गांधी जी की प्रेरणा से हुई थी। इसके गठन में जमनालाल बजाज तथा धनश्यामदास बिड़ला की मुख्य भूमिका थी। मंडल का उद्देश्य उच्चस्तरीय साहित्य को बिना मुनाफा कमाये लोगों तक पहुंचाना रहा है।

अतीत बनती किस्सागोई वैश्वीकरण, उदारीकरण के साथ

शहरीकरण के चलते संयुक्त परिवार की इकाई धीरे-धीरे टूटती गयी है। युवा वर्ग रोजी-रोटी की तलाश में शहर की तरफ पलायन कर रहा है। गांव में वही लोग रुके हुए हैं जिनके पास स्थानीय स्तर पर कोई कारोबार हो, नियमित आय का जरिया हो, या फिर निहायत मजबूरियां हों। कई प्रांतों, विशेष करके पर्वतीय प्रदेशों में ऐसी स्थिति है कि वहां गांव के गांव खाली हो चुके हैं। वहां सभी धरों में ताले लटके पड़े हैं। गांव की समूची आबादी विस्थापित हो चुकी है। उत्तराखंड में ऐसा कई जगह हुआ है। ऐसे हालात में जब शहर तेजी से विस्तार पा रहे हों, तथा गांवों की कीमत पर तरक्की कर रहे हों, हमारे लोकजीवन की बहुत सारी चीजें छूटती जा रही हैं। किस्से कहानियों की परंपरा उन्हीं में से एक है। अतः जरूरत है कि हम उस प्राचीन विरासत की ओर लौटें तथा अपनी थाती को सहेज कर रखें।

विज्ञान कथाओं की भूमिका

लोककथा के साथ-साथ हमें बाल विज्ञान कथाओं के विकास पर भी ध्यान देना होगा। साहित्य या विज्ञान के प्रति अनुराग का भाव बचपन में सरलता जगाया जा सकता है। हिन्दी में विज्ञान कथाओं की बहुत सुदृढ़ परम्परा नहीं बन सकी है। ये कथाएं देश में आम जन में पहुंच नहीं सकी हैं। ये सिर्फ सुशिक्षित तथा अकादमिक लोगों में ही पढ़ी जाती हैं। बालकों के लिए विज्ञान कथा साहित्य बहुत कम है। पिछले करीब तीन दशकों के दौरान शिक्षा के क्षेत्र में पसन्द के एक विषय के तौर पर विज्ञान की लोकप्रियता दुनिया भर में कम होती रही है। इसका एक मुख्य कारण है

पाठशालाओं में विज्ञान पढाने की शैली बहुत अच्छी तथा रोचक नहीं रही है। रुचिकर शैली में विज्ञान पढाने वाले शिक्षक भी बहुत कम मिलते हैं। विज्ञान को रोचक बनाने के लिए उसे रोजमर्रा के जीवन से जोड़ना आवश्यक है। विज्ञान जानने के लिए उसके सिद्धान्तों को जानना जरूरी माना जाता है जो शायद बहुत उचित नहीं है। जीवन की आम धटनाओं में विज्ञान भरा पड़ा है। किसी वृक्ष से फल जमीन पर क्यों गिरता है, यह समझाने के लिए न्यूटन के गति के नियम की व्याख्या जरूरी नहीं। प्राइमरी के विद्यार्थी को इतना बताना काफी होगा कि पृथ्वी में आकर्षण शक्ति है। वह हर वस्तु को अपनी ओर खींचती है।

विज्ञान कथा, यानी यथार्थ एवं कल्पना का सम्मिश्रण महान कथाकार प्रेमचंद ने कहा है कि इतिहास सच होकर भी असत्य है क्योंकि वह तमाम शत, प्रतिशत, युद्ध तथा नरसंहारों से भरा पड़ा है। जबकि कहानियाँ कल्पित होते हुए भी सत्य हैं क्योंकि वे हमारे जीवन के करीब हैं। इस दृष्टि से विज्ञान कथाएं, खास कर के बाल विज्ञान कथाएं भी जीवन की हकीकत के निकट हैं।

विज्ञान कथा, यानी यथार्थ एवं कल्पना का सम्मिश्रण महान कथाकार प्रेमचंद ने कहा है कि इतिहास सच होकर भी असत्य है क्योंकि वह तमाम धात, प्रतिधात, युद्ध तथा नरसंहारों से भरा पड़ा है। जबकि कहानियां कल्पित होते हुए भी सत्य हैं क्योंकि वे हमारे जीवन के करीब हैं। इस दृष्टि से विज्ञान कथाएं, खास कर के बाल विज्ञान कथाएं भी जीवन की हकीकत के निकट हैं। वे आज के विज्ञान के बुनियादी बातों के साथ हमें भविष्य की कल्पना में ले जाती हैं जो सब कुछ वास्तविक लगता है। कथाएं आनन्द प्रदान करती हैं। इसलिए विज्ञान को देश के कोटि-कोटि बच्चों तक पहुंचाने में विज्ञान साहित्यकारों की भूमिका बड़ी महत्वपूर्ण हो जाती है। हिन्दी में विज्ञान लेखकों को साहित्य की मुख्यधारा में वाजिब स्थान नहीं मिल सका है। यह वास्तव में बहुत खेदजनक स्थिति है। यद्यपि एक समय साहित्यिक पत्रिकाओं में विज्ञान आधारित लेख तथा कहानियां खूब लिखी जाती थीं। यह आजादी के पहले का समय था। स्वातंत्रोत्तर काल में स्थिति बदल गयी। इसमें विज्ञान लेखकों को वह स्थान नहीं मिला, जिसका वे हकदार रहे। बाल विज्ञान लेखन भी इसका अपवाद नहीं है। वैसे हिन्दी में विपुल मात्रा में बाल साहित्य की रचना हुई है, और आज भी हो रही है। लेकिन बाल विज्ञान साहित्य पर उतना काम नहीं हुआ, जितना अपेक्षित था। डिजिटल युग में प्रिंट माध्यमों के सामने व्यावहारिक चुनौतियां हैं। पत्र-पत्रिकाओं में विज्ञान के लिए स्थान सीमित ही रहा है। रविवारीय अंकों या वर्ष में एक बार, या फिर किसी बड़ी वैज्ञानिक धटना को लेकर विशेषांक भले निकले हों। लेकिन विज्ञान के नियमित स्तम्भ मुश्किल से ही मिलते हैं। हिन्दी साहित्य में बाल विज्ञान कथा लेखन जैसी बहुत स्पष्ट परंपरा का स्थापित होना अभी शेष है। हिन्दी में सरल भाषा में छोटी-छोटी विज्ञान कथाएं लिखने की जरूरत है। इन विज्ञान कथाओं में पात्रों की संख्या सीमित होनी चाहिए जिससे कि कथानक आसानी से समझ में आए। ये विज्ञान कथाएं वास्तविकता की भावभूमि पर खड़ी हों, वे सिर्फ कपोल कल्पना मात्र न हों।

दरअसल, बाल विज्ञान कथा-साहित्य का उद्देश्य बाल पाठकों का मनोरंजन करना ही नहीं अपितु उन्हें आज की जीवन की सच्चाइयों से परिचित कराना है। कहानियों के माध्यम से हम बच्चों को शिक्षा प्रदान करके उनका व्यक्तित्व निर्माण कर सकते हैं। तभी ये बच्चे भावी जीवन के तैयार हो सकेंगे। इन बच्चों को बड़े होकर अंतरिक्ष यात्राएं करनी हैं, चाँद पर जाना है, कृत्रिम बुद्धि पर काम करना है। इन्हें अंतरग्रहीय यानों के मिशन पर काम करना है। भावी पीढ़ी के बच्चों को तरह-तरह के शैक्षिक मल्टीमीडिया प्रोग्राम, तथा ऐप तैयार करना है। उनके मानस को तैयार करने में विज्ञान कथाएं अप्रतिम भूमिका निभाएंगी। उन्हें तरह तरह के कौशल सीखने हैं। बाल-विज्ञान कथा-लेखक को बच्चों के मनोविज्ञान की बारीक जानकारी होनी चाहिए। तभी वह बाल मानस पटल पर उतर कर बच्चों के लिए कोई कहानी, या फिर कविता या बाल उपन्यास लिख सकता है। विज्ञान लेखक वास्तव में साहित्य की कलम से विज्ञान लिखता है। जाहिर है, यह एक श्रमसाध्य कार्य है।

उपसंहार

आज देश में मध्यवर्गीय समाज में बच्चों के हाथों में स्मार्ट फोन, लैपटहप, जैसी युक्तियां सुलभ हैं। इनके जरिये वे अपने आसपास की दुनिया के बारे में जानते है, समझते हैं। वे तमाम चीजों के अर्थ ग्रहण करते हैं, तथा दुनिया के बारे में अपनी समझ विकसित करते हैं। शिक्षा का अर्थ तथ्यों तथा आंकड़ों को जानना, या फिर याद कर लेना भर नहीं होता है। अलबर्ट आइंस्टाइन के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य संगत ढंग से सोचने-समझने की आदत विकसित करने से है। कुछ लोगों का मानना है कि दादी मांओं के मुख से सुनी हुई परियों, तथा परीलोक की कथाओं का आज के वैज्ञानिक युग में कोई मतलब नहीं है। उन्हें विज्ञान सम्मत जानकारी दी जानी चाहिए। परी कथाएं उनके मन में अवैज्ञानिक अवधारणा को जन्म देंगी। लेकिन शिक्षा से वास्ता रखने वाले तमाम लोगों का मत है कि वास्तव में ये कहानियां बच्चों के चिंतन को विस्तार देती हैं, उनमें कल्पनाशीलता जगाती हैं तथा उनके समझ के क्षितिज को विस्तृत करती हैं। बच्चे बड़े होने पर अपने सहजबोध से इस बात से वाकिफ हो जाते हैं कि क्या यथार्थ है, और क्या काल्पनिक। इसलिए बच्चों के संपूर्ण संज्ञानात्मक विकास के लिए कहानियां बेहद जरूरी हैं। इन कहानियों के संदर्भ में बच्चों के लिए विज्ञान कथाओं की भी एक अनिवार्य भूमिका बनती है। लेकिन इस दिशा में अभी बहुत कुछ किया जाना शेष है।

vigyan-sahityakaar@gmail.com

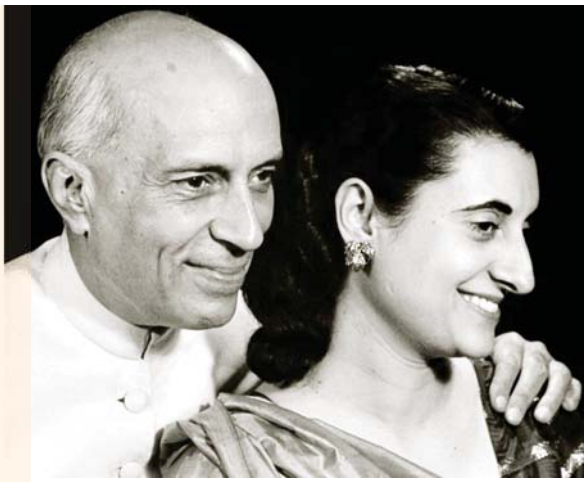

विज्ञान और सभ्यता के बारे में

नेहरू का इंदिरा के नाम पत्र

मैं आज तुम्हें पुराने जमाने की सभ्यता का कुछ हाल बताता हूँ। लेकिन इसके पहले हमें यह समझ लेना चाहिए कि सभ्यता का अर्थ क्या है? कोश में तो इसका अर्थ लिखा है अच्छा करना, सुधारना, जंगली आदतों की जगह अच्छी आदतें पैदा करना। और इसका व्यवहार किसी समाज या जाति के लिए ही किया जाता है। आदमी की जंगली दशा को, जब वह बिल्कुल जानवरों-सा होता है, बर्बरता कहते हैं। सभ्यता बिल्कुल उसकी उलटी चीज है। हम बर्बरता से जितनी ही दूर जाते हैं उतने ही सभ्य होते जाते हैं। लेकिन हमें यह कैसे मालूम हो कि कोई आदमी या समाज जंगली है या सभ्य? यूरोप के बहुत-से आदमी समझते हैं कि हमीं सभ्य हैं और एशियावाले जंगली हैं। क्या इसका यह सबब है कि यूरोपवाले एशिया और अफ्रीकावालों से ज्यादा कपड़े पहनते हैं? लेकिन कपड़े तो आबोहवा पर निर्भर करते हैं। ठंडे मुल्क में लोग गर्म मुल्कवालों से ज्यादा कपड़े पहनते हैं। तो क्या इसका यह सबब है कि जिसके पास बंदूक है वह निहत्थे आदमी से ज्यादा मजबूत और इसलिए ज्यादा सभ्य है? चाहे वह ज्यादा सभ्य हो या न हो, कमजोर आदमी उससे यह नहीं कह सकता कि आप सभ्य नहीं हैं। कहीं मजबूत आदमी झल्ला कर उसे गोली मार दे, तो वह बेचारा क्या करेगा? तुम्हें मालूम है कि कई साल पहले एक बड़ी लड़ाई हुई थी! दुनिया के बहुत से मुल्क उसमें शरीक थे और हर एक आदमी दूसरी तरफ के ज्यादा से ज्यादा आदमियों को मार डालने की कोशिश कर रहा था। अंग्रेज जर्मनी वालों के खून के प्यासे थे और जर्मन अंग्रेजों के खून के। इस लड़ाई में लाखों आदमी मारे गए और हजारों के अंग-भंग हो गए कोई अंधा हो गया, कोई लूला, कोई लंगड़ा। तुमने फ्रांस और दूसरी जगह भी ऐसे बहुत-से लड़ाई के जख्मी देखे होंगे। पेरिस की सुरंगवाली रेलगाड़ी में, जिसे मेट्रो कहते हैं, उनके लिए खास जगहें हैं। क्या तुम समझती हो कि इस तरह अपने भाइयों को मारना सभ्यता और समझदारी की बात है? दो आदमी गलियों में लड़ने लगते हैं, तो पुलिसवाले उनमें बीच बचाव कर देते हैं और लोग समझते हैं कि ये दोनों कितने बेवकूफ हैं। तो जब दो बड़े-बड़े मुल्क आपस में लड़ने लगें और हजारों और लाखों आदमियों को मार डालें तो वह कितनी बड़ी बेवकूफी और पागलपन है। यह ठीक वैसा ही है जैसे दो वहशी जंगलों में लड़ रहे हों। और अगर वहशी आदमी जंगली कहे जा सकते हैं तो वह मूर्ख कितने जंगली हैं जो इस तरह लड़ते हैं? अगर इस निगाह से तुम इस मामले को देखो, तो तुम फौरन कहोगी कि इंग्लैंड, जर्मनी, फ्रांस, इटली और बहुत से दूसरे मुल्क जिन्होंने इतनी मार-काट की, जरा भी सभ्य नहीं हैं। और फिर भी तुम जानती हो कि इन मुल्कों में कितनी अच्छी-अच्छी चीजें हैं और वहां कितने अच्छे-अच्छे आदमी रहते हैं।

अब तुम कहोगी कि सभ्यता का मतलब समझना आसान नहीं है, और यह ठीक है। यह बहुत ही मुश्किल मामला है। अच्छी-अच्छी इमारतें, अच्छी-अच्छी तस्वीरें और किताबें और तरह-तरह की दूसरी और खूबसूरत चीजें जरूर सभ्यता की पहचान हैं। मगर एक भला आदमी जो स्वार्थी नहीं है और सबकी भलाई के लिए दूसरों के साथ मिल कर काम करता है, सभ्यता की इससे भी बड़ी पहचान है। मिल कर काम करना अकेले काम करने से अच्छा है और सबकी भलाई के लिए एक साथ मिल कर काम करना सबसे अच्छी बात है।

गंगा की वैज्ञानिक उत्पत्ति और उसके जल का आयुर्वेदिक महत्व

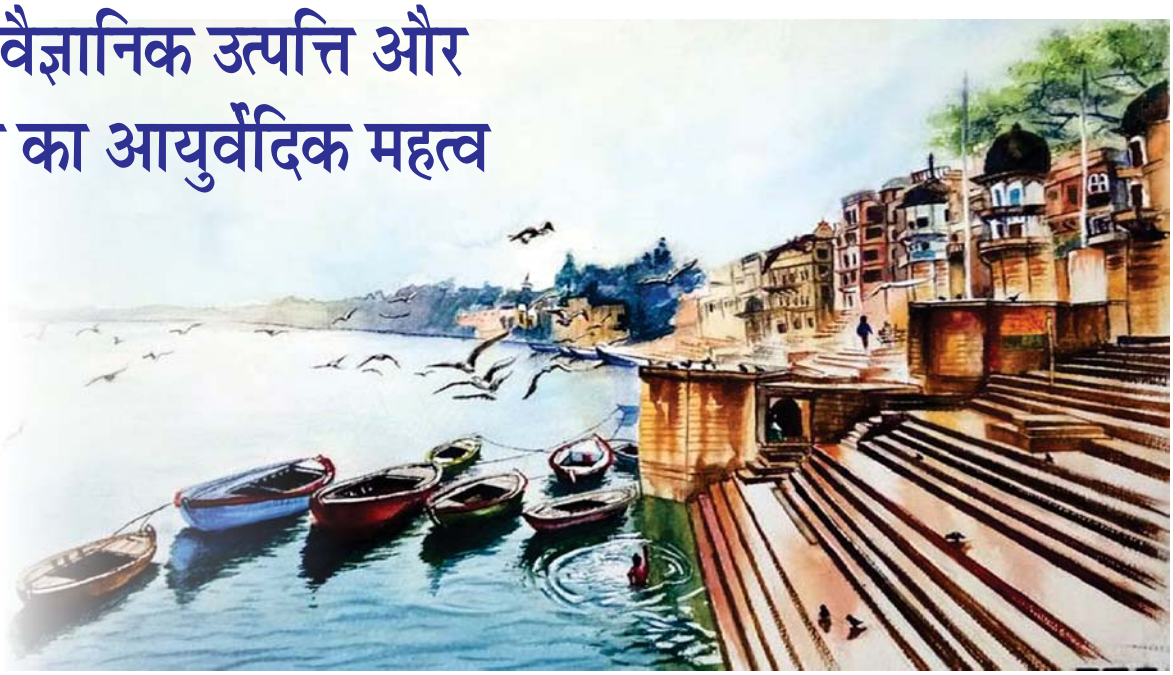

पं.कन्हैयालाल मिश्र
'प्रभाकर'

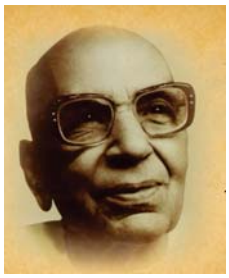

कवि-कथाकार और पत्रकार पंडित कन्हैयालाल मिश्र प्रसिद्ध स्वतंत्रता सेनानी थे। उन्होंने कलम के माध्यम से देश के युवाओं में राष्ट्र प्रेम का भाव जगाया। वे भारतीय परंपरा एवं मूल्यबोध के प्रति सजग लेखक थे। उन्हें पद्मश्री सहित अनेक सम्मानों से विभूषित किया गया। साहित्य की कृतियाँ - ज़िन्दगी मुस्कुराई, बाजे पायलिया के घुंघरू, ज़िन्दगी लहलहाई - एक अनुशासित व्यक्ति के निर्माण की पुस्तकें, महके आंगन - चहके द्वार, दीप जले-शंख बजे, माटी हो गई सोना के साथ ही महत्वपूर्ण विज्ञान लेखन किया।

कलि-कल्मष-हारिणी भगवती भागीरथी की उत्पत्ति के विषय में, भारतीय साहित्य के अगाध भण्डार 'पुराणों' में, विविध उल्लेख पाये जाते हैं। विद्वत्मण्डल की अकर्मण्यता एवं आलस्य-प्रियता का स्वाभाविक कुपरिणाम यह हुआ है कि, साधारण जन अपनी प्राचीन सभ्यता, संस्कृति एवं साहित्य के प्रति अरुचि एवं दूसरों की सभ्यता, संस्कृति तथा साहित्य के प्रति अनुराग रखने को विवश हुए हैं। प्रसन्नता की बात है कि वेद के जगद्विख्यात विद्वान भारत-भूषण पूज्यचरण श्रीमान पंडित मधुसूदन झा जी इधर 25 वर्षों से वेद-विज्ञान के सम्बन्ध में अथक श्रम कर रहे हैं। लाहौर की एक विराट सभा में ''वेद और वर्तमान साइंस'' पर भाषण करते हुए आपने 'गंगा की वैज्ञानिक उत्पत्ति' के सम्बन्ध में जो विश्लेषण किया है, वह बहुत ही विवेचना-पूर्ण एवं सुन्दर है। आशा है, उसका उद्धरण पाठकों के लिए ज्ञान'वर्धक सिद्ध होगा।

पाश्चात्य विज्ञान के साथ वैदिक विज्ञान की तुलना करने के बाद वे कहते हैं- 'अब मैं वैदिक विज्ञान के अनुसार इस पृथ्वी की उत्पत्ति का थोड़ा सा विवरण आप लोगों के सामने रखता हूँ। पृथ्वी की उत्पत्ति हमारे यहाँ जल से मानी जाती है। भूतों में अर्थात दृश्य पदार्थों में सबसे पहले 'जल' ही उत्पन्न होता है। इससे पहले के जितने तत्व हैं, वे गैस के रूप में हैं। इस बात पर आज कल के वैज्ञानिक हमारी हँसी उड़ाते हैं कि हमने जल को तत्व मान रखा है। वे सिद्ध करते हैं कि, जल दो तत्वों के संयोग से बनने वाला यौगिक पदार्थ है। उसे तत्व कहना भारी भूल है। किन्तु आश्चर्य की बात है कि वे हमारा सिद्धान्त नहीं समझते। जिस जल को आप यौगिक सिद्ध करते हैं उसे हमने तत्व कब मान रखा है? जब कि, हम इस जल को पंचीकृत पंच महाभूतों में से एक महाभूत मानते हैं, तब इसी से यह सिद्ध है कि इसमें कई पदार्थों का संयोग हमारे यहाँ स्पष्ट बताया गया है। जिस मौलिक जल के आधार पर यह यौगिक महाभूत जल उत्पन्न होता है, वैदिक विज्ञान में उस जल की चार अवस्थाएं मानी जाती हैं- (1) अम्भः, (2) अरीचिः, (3) मरः, (आपः)।

इमें ''अम्भः'' पहली अवस्था है। यही सबसे पहले उत्पन्न कहा जाता है। इसे ही हम 'तत्व' कहते हैं, यही आज कल का 'हाइड्रोजन' है। यह सर्वत्र आकाश में व्याप्त है। इसको वेद में 'महासमुद्र' कहते हैं। इसी समुद्र के भीतर जब सूर्य का गोला पैदा हुआ, तब सूर्य की किरणों से एक

गुम्बज के आकार का प्रकाश-मंडल भी सिद्ध हो गया। इसी महामंडल को ब्रह्माण्ड कहते हैं। इसे ही पाश्चात्य विद्वान 'सोलर सिस्टम' कहते हैं। यह ब्रह्माण्ड से बाहर वह अधिक मात्रा में परिव्याप्त है, उस प्रकार इस ब्रह्माण्ड में नहीं है। ब्रह्माण्ड के बाहरी प्रदेश से उस ब्रह्माण्ड में ज्यों ही यह अम्भः प्रवेश करता है, त्यों ही सूर्य के प्रचंड उत्तप से उत्तप्त होकर हल्का होने से बाहर निकल जाता है। अथवा, यों कहिये कि सूर्य अपनी किरणों के प्रत्याघात से उस अम्भो जल को बड़ी प्रबलता से बाहर ढकेलता रहता है। यदि सूर्य ऐसा न करता, तो यह पृथ्वी उस अम्भोजल के महासमुद्र में सर्वथा निमग्न होकर विलीन हो जाती।

किन्तु, इस प्रकार सूर्य के प्रयत्न करने पर भी, थोड़ी बहुत मात्रा में वह अम्भोजल उस ब्रह्माण्ड-कटाह को फोड़कर भीतर प्रवेश कर ही जाता है। वह सूर्य-ताप से हल्का होता हुआ शीत-प्रधान चन्द्र-मंडल में प्रवेश करके संचित होता है। उसी जल से चन्द्रमा चारों ओर घिरा हुआ है। जैसा कि वेद कहता है ''चन्द्रमा अप्स्वन्तरा-सुवर्णो धावते दिवि'' (ऋ.सं.) आजकल के साइंस वाले बड़ी भूल पर हैं जो यह कहते हैं कि, चन्द्रमा में न पानी है, न वायु है, न कोई प्राणी है। अब उनको वेद से शिक्षा लेनी चाहिये कि, चन्द्रमा में परिपूर्ण जल है, वायु है और वृक्ष तथा प्राणी भी वहाँ नाना प्रकार के बसते हैं। यदि उनके दूरबीन से वे नहीं दीखते, तो उनसे भी अधिक दूरदर्शक वा सूक्ष्मदर्शक यंत्र का निर्माण करना चाहिये। इस ब्रह्माण्ड में कोई भी पिण्ड जल-वायु से शून्य नहीं हो सकता। जब कि, इस पृथ्वी पर पूर्ण मात्रा में जल-वायु है, तब उसके अत्यन्त समीपवर्ती इस चन्द्रमा में जल और वायु सर्वथा न हों- इसमें कोई विशेष कारण प्रतीत नहीं होता। वैदिक काल के अत्यन्त सूक्ष्मदर्शी यंत्रों से यह देखा जा चुका है कि, चन्द्रमा में नाना प्रकार के जल होते हुए भी दो प्रकार क`जल अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में हैं- एक श्रद्धा-जल औरदूसरा वही अम्भोजल, जो ब्रह्माण्ड के बाहर से आकर सोलर सिस्टम में चक्कर खाता हुआ इस चन्द्रमा में संचित होता है। इसी कारण चन्द्रमा इतना शीतल है।

सूर्य में समधरातल में पृथ्वी का विषुव-मंडल है। पृथ्वी अपनी विषुव रेखा के समधरातल से 23 1/2 अंश ऊपर-नीचे चढ़ा-उतरा करती है, किन्तु उसका साथी यह चन्द्रमा करीब 28 अंश तक ऊपर चला जाता है। इसी कारण सूर्योत्तप से हल्का होकर ऊपर उठा हुआ यह 'अम्भोजल' चन्द्रमा पर जमा हो जाता है। उसी चन्द्रमा के द्वारा सूर्य-रश्मि-विहीन उस समय की पृथ्वी के उत्तर सुमेरु पर वह जल अवतीर्ण होता रहता है। उसी को भारत वर्ष के पुराणों में 'गंगा-जल' कहते हैं।

वही जल, उत्तर मेरु-प्रान्त में शीतलता पाने से जमकर बर्फ के रूप में आता है। निरन्तर इसी प्रकार ऊपर से जलावतरण होते रहने के कारण नीचे की बर्फ दबकर पानी के रू॰ में पृथ्वी के भीतर कुछ प्रवेश करती है, कुछ गरमी से गल कर नदी के रू॰ में तिरछा पृथ्वी पर बहती है, कुछ ऊपर को उड़ा भी करती है। इस प्रकार तीन मार्ग का अनुसरण करने से वहीं गंगा ''त्रिपथगा'' कहीं जाती है।

सूर्य के रश्मि-मंडल में रहने से वह 'स्वर्गगामिनी', चन्द्रमा में व्याप्त होने से 'अन्तरिक्षगामिनी' और पृथ्वी पर आने से 'मर्त्यलोकगामिनी' है। इस हेतु भी यह 'त्रिपथगा' है।

ध्रुव से पृथ्वी के उत्तर-मेरु पर नीचे आती है। पृथ्वी में उत्तर-मेरु से गंगासागर तक बहती है। पृथ्वी वा समुद्र से उड़ कर पश्चात् ऊपर को चढ़ती है। इस कारण भी वह ''त्रिपथगा'' कही जाती है।

यद्यपि यह गंगा जल अब उस अम्भोजल क असली रूप में नहीं है; क्योंकि सूर्य, चन्द्र, पृथ्वी आदि नाना स्थानों में भ्रमण करने से उसमें जो अन्यान्य कतिपय पदार्थों का रासायनिक संयोग होता रहता है, उससे उसकी अवस्था कुछ-की-कुछ परिवर्तित हो गयी है; तथापि इसमें सन्देह नहीं कि, यह गंगाजल इस ब्रह्मांड में बाहर से आया हुआ है; और इसका मूल कारण वही अम्भोजल है। इसमें जो कुछ पवित्रता पायी जाती है, वह इसमें ब्रह्मांड में बाहर से आया हुआ है; और इसका मूल कारण वही अम्भोजल है। इसमें जो कुछ पवित्रता पायी जाती है, वह इसमें ब्रह्मांडस्पति के रस के रासायनिक संयोग से उत्पन्न हुई है।

ब्रह्मणस्पति और अम्भोजल-इन दोनों का उत्पत्ति-स्थान एक ही है, जिसको वेद में 'परमेष्ठी' कहते हैं। इस ब्रह्मणस्पति को पाश्चात्य साइंस वाले अभी तक नहीं जान पाये हैं। वह भी 'हाइड्रोजन' के अनुसार एक मौलि रूढ पदार्थ है। उसकी पवित्रता के विषय में वेद कहता है कि, 'पवित्रं ते विततं ब्रह्मणस्पते प्रभुर्गात्रणि पर्पेष्टि विश्वतः' इत्यादि। इसी पवित्र पदार्थ, रासायनिक संयोग के द्वारा, युक्त रहने के कारण हमारे महर्षियों ने परीक्षा करके निश्चय किया था कि, वह गंगा जल अन्य जलों से विलक्षण है। केवल हिमालय की औषधियों का क्षालन-जल अथवा बर्फ का पानी होने से ही इसमें विलक्षणता नहीं, किन्तु स्वभावतः हीयह औरों से विलक्षण है। यह 'अम्भ' का साक्षात परिणाम है।

पुराणों में गंगा जल को इस ब्रह्मांड में

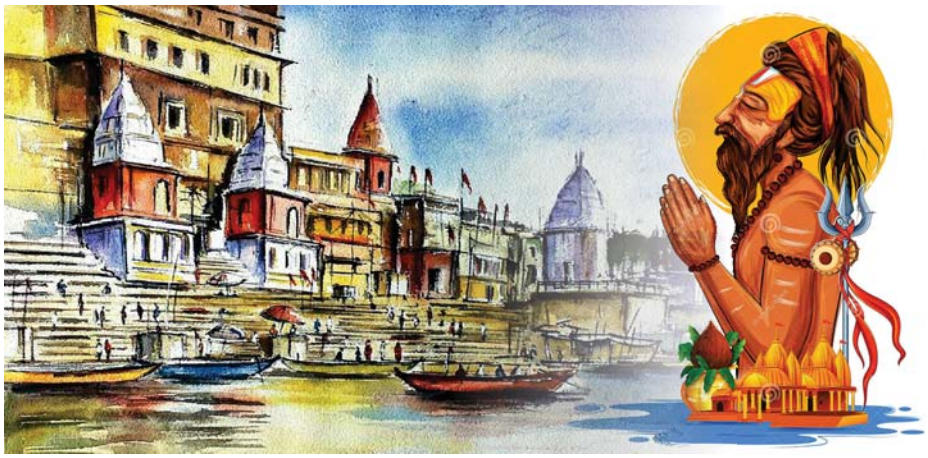

बाहर से आया हुआ जल कहा है। ध्रुव-मंडल, सप्तर्षि-मंडल, चन्द्रमंडल आदि में भ्रमण कर पृथ्वी की उत्तरीय सीमा 'सुमेरु' पर इसका प्रपात, श्रीमद्भागवत के पंचम स्कन्ध में तथा अन्यान्य पुराणों में विस्तार से स्पष्ट कहा गया है, जिसकी उत्पत्ति समझना अब कठिन नहीं होगा।

गंगा जल में स्वाभाविक विशेषता यह है कि, इसक साथ जो भी जल मिलता जाए, उसे यह अपना ही रूप बना लेता है। गंगोत्तरी से उतरते ही इसके साथ सैकड़ों नदियों का मेल शुरू हो जाता है। किन्तु जो भी नदी इसमें मिलती है, उसमें यह अपने गुण देता जाता है। गंगा सागर तक पहुँचने पर असली गंगोत्तरी के जल की अपेक्षा दूसरे जलों का परिमाण कितना अधिक हो जाता है, यह आप लोग सोच सकते हैं। किन्तु यही गंगा जल की महिमा है कि, जो शोधकता और अविकृत रहने का गुण गंगोत्तरी के पास है, वहीं गंगा सागर तक बराबर बना रहता है। अपने साथ मिलने वाले जल में वह अपना गुण बराबर भरता चला जाता है। जो जल इसके साथ मिलता है, उसमें वजल भी इसी के समान हो जाता है।

भगवान जाने, किस सुदूर अतीत से, कुल-परम्परा के सूत्र का अवलम्बन कर, यह ज्ञान हिन्दु-जाति में चला आ रहा है और आज क आस्तिकता-शून्य भारतीय हिन्दुओं में भी 'औषधं जह्नवी-तोयम्' की भावमयी किम्वदन्ती प्रचलित है। किम्वदन्ती ही नहीं, आज भी हम मृत्यु की आसन्नावस्था-विशेषतः आशुजीवन-हारी प्ले, हैजा आदि रोगों के प्रकोप-काल-में गंगा जल का अनुपान लेकर अपने को कृत-कृत्य समझते हैं। अपनी इस भोली भावना के लिये हमें उपहास एवं व्यंग्य का ही नहीं, अपमान का भी पात्र होना पड़ा है। पर यह भावना का ही नहीं, उथल-पुथल-कारी विज्ञान का युग है। इसमें संसार की प्रत्येक बात-वह लौकिक हो या पारलौकिक-विज्ञान की तीव्र कसौटी पर कसी जा रही है। वैज्ञानिक मंडल आज प्रकृति का ही नहीं, प्रकृति के अधिष्ठाता का भी परीक्षण करने को सन्नद्ध है। ऐसी दशा में किसी विज्ञान-विरुद्ध बात की स्थिरता शक्य ही नहीं है। प्रसन्नता की बात है कि, हमारी उक्त भावना इस परीक्षा में, सम्मान के साथ, सफलता की विजय-माला, एक बार ही नहीं, अनेक बार, अपने कंठ देश में धारण कर चुकी है। उन सभी परीक्षा परिणामों का यहाँ उल्लेख कर सकना न सम्भव है और न आवश्यक ही। अतएव इस स्थल पर एक ही उज्ज्वल निकष रेखा प्रदर्शित की जा रही है।

अमेरिका के एक परम यशस्वी लेख 'मिस्टर मार्क टोयन' अपने भारत-यात्रा-वृत्तांत में लिखते हैं -

'हम अब आगरे में पहुँचे, तब एक चमत्कारिक वैज्ञानिक आविष्कार हुआ। जगत में सबसे बलवान मल का निवारक गंगा जल है, यह आश्चर्यजनक सत्य उस समय वैज्ञानिक आविष्कार के रूप में निरूपित होकर प्रकाशित हुआ। बहुत बार देखा गया है कि, जिस समय बनारस में अनेक लोग हैजे से मरते हैं, उस समय बनारस की सीमा के बाहर रोग नहीं फैलता। इसका कारण समझ में नहीं आता था।'

'मिस्टर हैनकेन' आगरे में सरकारी वैज्ञानिक विभाग में कर्मचारी हैं। वे गंगा जल की परीक्षा करने लगे। बनारस जाकर उन्होंने परीक्षा आरम्भ की। जिस स्थान में स्नान के घाट के पास पनाले से बनारस की गन्दगी आकर गंगा में गिरती है, उस स्थान का जल उन्होंने लिया। परीक्षा से जाना गया कि, उस जल में हैजे के लाखों कीड़े भरे पड़े हैं। छः घंटे के बाद देखा गया कि, वे कीड़े सब-के-सब मर गये। गंगा के जल से एक शव बहता आता था। उसको उठाकर वे ऊपर ले गये और शव के बगल में जल को लेकर जाँचने लगे। उस जल में हैजे के अन-गिनत कीड़े थे। छः घंटे बाद देखा गया कि, वे कीड़े भी मर गये। गंगा के जल में उन्होंने लाखों कीड़े छोड़े। छः घंटे में वे सब-के-सब मर गये। किन्तु जब दूसरे विशुद्ध जल में हैजे के कीड़ों को ढाल कर जाँचा, तब देखाकि संख्या में कीड़े बढ़ रहे हैं - छः घंटे में ही असंख्य कीड़े हो गये।

युग-युग से हिन्दू यह मानते आये हैं कि गंगा का जल पवित्र है। यह पवित्रता किसी कभी तरह नहीं बिगड़ती। उस जल के स्पर्श से सभी पवित्र होते हैं। हिन्दू अभी तक ऐसा विश्वास रखते हैं। इसी विश्वास के हेतु गंगा जल में बहते हुए शव और नाना प्रकार के गन्दे पदार्थों को अग्राह्य कर गंगा जल को स्नान-पान के काम में लाते हैं। अपने इस विश्वास के लिये हिन्दु, पूर्व-पुरुषों की परंपरा से, दूसरों की हंसी सहते आये हैं। किन्तु अब दूसरों के लिये यह समय आया है कि, वे व्यंग्य करना छोड़ दें।

हिन्दुओं ने इतने अधिक पूर्व काल में गंगोदक के इस गुण का कैसे आविष्कार किया था? क्या उन दिनों हिन्दुओं में ऐसे वैज्ञानिक थे, जो रोगों के कीटाणु-सम्बन्धी ज्ञान रखते थे? हमको इस विषय का पता नहीं है। किन्तु यह जानते हैं कि, जब तक हम बर्बरता की दशा से पार नहीं पा सके थे, उसके बहुत पहले से ही हिन्दुओं की अपनी पुरानी सभ्यता थी।

आशा है, इन विदेशी विद्वान लेखक की इस सत्य-गुम्फित उक्ति से 'जैसा और जल, तैसा गंगा जल' की थ्योरी के प्रवर्तक लोग कुछ शिक्षा ग्रहण करेंगे।

vijnananparishad_prayag@rediffmail.com

साभार : गंगा, मई 1931

स्पेस एक्स
का मंगलमय अंतरिक्ष सफर

विजन कुमार पाण्डेय

धरती पर दौड़ने वाली कार अब अंतरिक्ष में दौड़ेगी। अमेरिका की एक मशहूर टेसला कंपनी ने ऐसी इलेक्ट्रिक कार बना डाली जो रोड पर नहीं बल्कि अंतरिक्ष में सैर करेगी। उन्होंने ऐसी कार दो साल पहले बना डाली थी। इसका नाम टेस्ला बूस्टर है। इस कार में एक डमी ब्यक्ति को बैठा कर इसका आकाश में परीक्षण किया गया था। इसके बाद इसे अंतरिक्ष में लांच किया गया। यह विज्ञान का एक ऐसा चमत्कार है जिसके बारे में न तो आपने पहले कभी सुना होगा और न ही देखा होगा। इस मिशन की सबसे अहम बात यह है कि दुनिया की सबसे मशहूर कंपनी स्पेस एक्स ने इस पूरे प्रोजेक्ट को तैयार किया था। इसको किसी भी तरह की सरकारी मदद नहीं मिली थी। इस कार को बनाने का सबसे पहले ख्याल एलान मस्क के दिमाग में आया था और इसे फाल्केन 5 हैवी राकेट के जरिये अंतरिक्ष में भेजा गया था। इसका वजन बहुत ज्यादा था। इसलिए इस बात का खतरा था कि यह राकेट दुर्धटना ग्रस्त हो सकता है। ऐसी स्थिति में कार भी नष्ट हो सकती थी और पूरा मिशन फेल हो सकता था। लेकिन ऐसा नहीं हुआ। इस राकेट की ऊँचाई करीब 23 मंजिली इमारत के बराबर था। इसका वजन 2500 टन था। यह संयोग की बात है कि फाल्केन 5 रॉकेट को उसी जगह से लांच किया गया था जहाँ से 40 साल पहले चंद्रमा पर जाने वाला राकेट शैटर 5 नामक राकेट को लांच किया गया था।

यहाँ आपको टेस्ला रोस्टर कार के बारे में भी जरूर जानना चाहिए। यह कार एक इलेक्ट्रिक कार है जो सोलर एनर्जी से चार्ज होती है। सिर्फ दो सेकेंड में यह करीब 100 किलोमीटर प्रति घंटे की रफ्तार हासिल कर लेती है। इसकी अधिकतम रफ्तार 400 किलोमीटर प्रति घंटा है। इस कार को एक बार चार्ज कर लेने पर करीब 1000 किलोमीटर दूरी तक चलाया जा सकता है। हालांकि इस कार की सारी ताकत और खूबियां जीरो ग्रैविटी पर काम नहीं आयी। इस कार को पृथ्वी और मंगल ग्रह के बीच एक आर्बिट में स्थापित किया जाना था लेकिन इसे कुछ ज्यादा ही जोश के साथ फेंक दिया गया जिसकी वजह से यह कार मंगल ग्रह से आगे निकल गई। अब इस तरह की कार की अंतरिक्ष में यात्रा शुरू हो चुकी है। फल्कन हैवी राकेट का मुख्य मकसद इसे दुबारा इस्तेमाल करना है जिसमें ऐलन मस्क काफी हद तक सफल होते नजर आ रहे हैं। अभी दो अमरीकी अंतरिक्ष यात्रियों की धरती पर वापसी हुई है। यह इंटरनेशनल स्पेस स्टेशन का पहला वाणिज्यिक क्रू मिशन है जो धरती पर लौटा है। स्पेसएक्स ड्रैगन कैप्सूल डॉग हर्ले और बॉब बेहेनकेन को लेकर मेक्सिको की खाड़ी में उतरा। जिसके बाद एक रिकवरी पोत से दोनों को लाया गया। 45 साल बाद ऐसा हुआ है, जब नासा के अंतरिक्ष यात्री समुद्र में उतरे है। इससे पहले अपोलो कमांड मॉड्यूल समुद्र में उतरा था।

विजन कुमार पाण्डेय लोकप्रिय विज्ञान लेखक हैं और शिक्षा के क्षेत्र से जुड़े हैं। उन्होंने विगत तीन दशकों में तीन सौ से अधिक लेख लिखते हुए पाठ्यक्रमों के लिए लेखन किया है। 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' में आप नियमित रूप से प्रकाशित होते रहे हैं। देश के प्रतिष्ठित विज्ञान पत्रिकाओं में आपकी रचनाओं के कई-कई पाठक हैं।

स्पेसएक्स एक अमरीकी कंपनी है जो कि फाल्कन 9 और फ़ाल्कन हैवी रॉकेट्स पर कमर्शियल और सरकारी लॉन्च सेवाएं देती है। आंत्रप्रेन्योर एलन मस्क ने 2002 में इस कंपनी की नींव रखी थी। इसका मक़सद अंतरिक्ष में ट्रांसपोर्टेशन की लागत को कम करना है। साथ ही इसका एक मक़सद मंगल ग्रह पर इंसानी बस्तियां बनाना भी है। स्पेसएक्स दुनिया की अकेली ऐसी निजी कंपनी है जो कि नियमित तौर पर धरती पर रॉकेट को वापस लौटाती है ताकि इनको फिर से लॉन्च किया जा सके।

समान ले जाने वाला सबसे पहला स्पेस ड्रैगन बना। तब से यह ड्रैगन यही सब काम कर रहा है। लेकिन सामान ले जाना उतना जोखिम नहीं होता जितना इंसान को अंतरिक्ष में ले जाना होता है, क्योंकि यहाँ एस्टरोनेट के जीवन मौत का सवाल हो जाता है। समान का क्या है टूट जाएगा, फट जाएगा, खराब हो जाएगा, बस इतना ही हो सकता है। लेकिन इंसान के लिए तो यह जीवन मौत का सवाल हो जाता है। इसलिए इंसान को अंतरिक्ष में भेजना एक चुनौती भरा काम है।

क्रूड्रैगन जैसा बना एयरक्राफ्ट पहले कभी नहीं बनाया गया। इसे दोबारा इस्तेमाल किया जा सकता है। नासा अभी तक इसे समान ले जाने और ले आने में ही कर रहा था। यह पहली बार दो एस्टरोनेट को अंतरिक्ष में ले गया और उसे फिर वापस लेकर आया। यह स्पेस क्राफ्ट बहुत कम लागत में बना है तथा पूरी तरह से आटोमेटिक है। इसमें बस आपको बैठना है और ये अपने आप आपको अंतरिक्ष में पहुँचा देगा। इसमें बैठने के अलावा आपको कुछ भी नहीं करना होगा। इसमें सब कुछ आटोमेटिक है। यह अपने आप आपको अंतरिक्ष में पहुंचा देगा। इससे एस्टरोनेट का कार्य बहुत ज्यादा आसान हो जाता है। इससे मिशन का फोकस उन्हीं बातों पर होगा जिस काम के लिए इसे भेजा जा रहा है।

क्रूड्रैगन का क्लू

क्रूड्रैगन को बाहर से देखने पर इसे दो हिस्सों में बांटा जा सकता है। इसके नाम हैं कैप्सूल और ट्रंक। इसका ऊपरी हिस्सा कैप्सूल कहलाता है। यह बहुत महत्वपूर्ण हिस्सा है। इसी हिस्से में कार्बो ड्रैगन और एस्टरोनेट को भेजा जाता है। इसके बाहर ट्रिपो प्रोपेल लगे होते हैं जो क्राफ्ट को प्रोपेल करते है। यह राकेट कि तरह ही होते हैं जैसे राकेट में चार पत्तियाँ लगी होती हैं उसी तरह ये भी होते हैं। निचला हिस्सा ट्रंक है जिसके चारों तरफ सोलर मौड्यूल लगे होते हैं जो क्राफ्ट को आगे जाने के लिए सौर ऊर्जा इकट्ठा करते हैं। इसके अंदर कैप्सूल में बढ़िया बैठने की व्यवस्था होती है। इसी में अंतरिक्ष यात्री रहते हैं और अपना काम करते हैं।

इस मिशन को अंजाम स्पेस एक्स और नासा दोनों ने मिलकर दिया है। स्पेस एक्स का आगे अंतरिक्ष में मानव कालोनी बनाने का लक्ष्य है जबकि नासा इसकी सहायता से मंगल पर जाने की तैयारी कर रहा है। इनका 2024 तक मनुष्य को दोबारा चांद पर भेजने का प्लान है। इस मिशन का अंतरिक्ष में और गहरे खोज करने का उद्देश्य है। इसके लिए अमेरिका के सरकारी और प्राइवेट कंपनियां दोनों मिलकर काम करेंगे। फिलहाल नासा ने इन कामों के लिए दो प्राइवेट कंपनियों को चुना है पहला स्पेस एक्स और दूसरा है ब्लू ओरिजिन। ये दोनों नासा के साथ मिलकर काम करेगी।

निजी कंपनी की किफायती यात्रा

इसी साल जब कैप्सूल को लॉन्च किया गया था उस वक़्त अमेरकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप भी मौजूद थे। उन्होंने भी इस मिशन के कामयाब होने पर बधाई दी है तथा लिखा, “शुक्रिया आप सभी को। यह हमारे लिए बेहद खुशी की बात है कि नासा के अंतरिक्ष यात्री दो महीने के मिशन के बाद सुरक्षित धरती पर लौट आए हैं।” इस मिशन का कामयाब होना अमेरिकी अंतरिक्ष एजेंसी के लिए एक नए युग की शुरुआत होने जैसा है। इस मिशन के कामयाब होने से इस बात की संभावना भी बढ़ी है कि आने वाले समय में अंतरिक्ष में मानव को भेजने के लिए स्पेसएक्स जैसी कंपनियों से मदद ली जा सकती है। सरकारी एजेंसी नासा का कहना है कि इस तरह के सेवा देने वालों को अगर अनुबंधित किया जाता है तो इससे सरकार के अरबों डॉलर की बचत होगी। इस राशि का इस्तेमाल अंतरिक्ष यात्रियों को दूसरे प्रोजेक्ट्स के तहत मंगल या फिर चंद्रमा पर भेजने के लिए किया जा सकता है।

ड्रैगन कैप्सूल को मई महीने के अंत में इंटरनेशनल स्पेस स्टेशन के लिए लॉन्च किया गया था। इसे फैल्कन 9 रॉकेट की मदद से प्रक्षेपित किया गया था।इस मिशन के कामयाब होने के साथ ही धरती से अंतरिक्ष और अंतरिक्ष से धरती के सफल परिचालन की भी पुष्टि हो गई है। साथ ही ‘टैक्सी सर्विस’ कंपनी के मालिक एलन मस्क नासा को इसे बेच भी सकेंगे। बोईंग कॉर्पोरेशन भी एक क्रू कैप्सूल सॉल्यूशन तैयार कर रहा है लेकिन उसके स्टारलाइन कैप्सूल में कुछ सॉफ़्टवेयर संबंधी परेशानियां आने के कारण फिलहाल इसे टालना पड़ा है। नासा 2000 के दशक की शुरुआत से ही अंतरराष्ट्रीय अंतरिक्ष स्टेशन (आईएसएस) पर क्रू की आवाजाही का काम बंद करने की योजना बना रहा था। 2003 में कोलंबिया शटल के पृथ्वी पर वापसी के दौरान दुर्धटना का शिकार होने के बाद से ही नासा ने एक ऐसा स्पेसशिप विकसित करने पर ध्यान केंद्रित करना शुरू कर दिया था जो कि चंद्रमा तक जा सके। आईएसएस पर क्रू और कार्गो की आवाजाही के लिए निजी फ़र्मों को शामिल करना इस प्रोग्राम को चालू रखने की दिशा में एक अहम क़दम था। 2014 में आंत्रप्रेन्योर एलन मस्क की कंपनी स्पेसएक्स और एयरोस्पेस सेक्टर की दिग्गज कंपनी बोइंग क्रू ट्रांसपोर्ट सेवाओं के लिए नासा का कॉन्ट्रैक्ट हासिल करने में सफल रही। फिर अंतरिक्ष मे इंसान को भेजने तथा वहाँ बस्ती बनाने के काम में तेजी आयी।

एलन मस्क स्पेसएक्स कामयाबी की ओर

स्पेसएक्स एक अमरीकी कंपनी है जो कि फाल्कन 9 और फ़ाल्कन हैवी रॉकेट्स पर कमर्शियल और सरकारी लॉन्च सेवाएं देती है।

डेमो टू में आखिर ऐसा क्या है जो दुनिया इसे बेसब्री से देख रही है। दरअसल डेमो टू एक प्रदर्शन है जो यह देखने के लिए किया गया कि स्पेस एक्स एस्टरोनेट को धरती से आइएसएस और फिर वहाँ से उसे धरती पर वापस ला सकती है या नहीं। आईएसएस यानी इंटरनेशनल स्पेस स्टेशन, यह घर जैसी मानव निर्मित सेटेलाइट है जो पृथ्वी की सतह से 408 किलोमीटर ऊपर पृथ्वी की चक्कर लगाती है।

सेकंड हैंड राकेट भी उपयोगी

आपने सेकंड हैंड कार या स्कूटर के बारे में सुना होगा लेकिन सेकंड हैंड राकेट के बारे में कभी नहीं सुना होगा,आमतौर पर सेकंड हैंड चीजों को शक की निगाहों से देखा जाता है। ऐसा समझा जाता है कि सेकंड हैंड चीजें सस्ती होती हैं और बाद में बहुत परेशान भी करती हैं। लेकिन इस सोच को अमेरिका के वैज्ञानिकों ने बदल दिया है। यह टेक्नॉलॉजी का जमाना है और इस युग में राकेटों को दुबारा इस्तेमाल करने का तरीका खोज लिया है। अमेरिकी कंपनी स्पेस एक्स ने रीसाइक्लिंग राकेट अर्थात फिर से दुबारा फैल्कन 9 रॉकेट को इस्तेमाल करके सबको हैरान कर दिया है। कंपनी ने इस राकेट के जरिए दस सैटेलाइट को अंतरिक्ष में भेजने में सफलता हासिल की है। कोलीफोर्निया के समय के अनुसार 22 दिसंबर की रात 11:27 बजे फेल्कन 9 राकेट द्वारा इन दस सेटेलाइटों को अंतरिक्ष में भेजा गया था। यह पहली बार नहीं हुआ है इसके पहले भी इस कंपनी ने जून में ऐसा कारनामा कर के दिखाया था। कैलफोर्निया में जब इस राकेट को छोड़ा गया तो आकाश में अजीबोगरीब डिजाइन बनना शुरू हो गई। लोग रोड में अपनी गाड़ियों से निकलकर इसकी तस्वीरें लेने लगे। यहाँ तक कि लोगों ने धबड़ाकर इसे यूएफओ समझने लग गए। उन्हें लगा कि शायद दूसरे ग्रह के लोग इलियन ने हमला कर दिया है। कुल मिलाकर यह देखा जाय तो स्पेस एक्स कंपनी ने दुनिया को यह संदेश देने की कोशिश की है कि अब स्पेस के लिए बेकार राकेटों का दुबारा इस्तेमाल किया जा सकता है। यह एक बहुत अच्छी शुरुआत है। दूसरे आसान शब्दों में कहें तो इस कंपनी ने लांचिंग के बाद बेकार होने वाले राकेट की परिभाषा ही बदल कर रख दी है। इसका दूसरा पहलू यह भी है कि भविष्य में इस्तेमाल होने वाले राकेट के खर्चे में कमी आएगी। हालांकि स्पेस मार्केट में पहले से ही भारत ने बहुत कम खर्चे में स्पेस प्रोग्राम को सफल बनाने के लिए पूरी दुनिया में मशहूर है। ऐसे में अगर इस तकनीक का इस्तेमाल भारत में शुरू हो गया तो यहाँ पर स्पेस प्रोग्राम का खर्च और भी कम हो जाएगा।

हाल ही में दो अमेरिकी अंतरिक्ष यात्रियों की धरती पर वापसी भी इसी फैल्कन 9 राकेट द्वारा हुई है। यह इंटरनेशनल स्पेस स्टेशन का पहला वाणिज्यिक क्रू मिशन है जो धरती पर लौटा है। इतिहास में पहली बार ऐसा हुआ है जब एक प्राइवेट कंपनी इस काम को अंजाम दिया है। यह एलन मक्स के ड्रीम प्रोजेक्ट का अहम हिस्सा है। नासा के दो एस्ट्रोनॉट अंतरिक्ष में गए थे। इनके नाम डॉग हर्ले और बॉब बेहेनकेन है। स्पेस एक्स ड्रैगन कैप्सूल इनको लेकर मेक्सिको की खाड़ी में उतरा। जिसके बाद एक रिकवरी पोत से दोनों को लाया गया। 45 साल बाद ऐसा हुआ है, जब नासा के अंतरिक्ष यात्री समुद्र में उतरे हैं। इससे पहले अपोलो कमांड मॉड्यूल समुद्र में उतरा था। अमेरिका के स्पेस एजेंसी नासा के पास कई दशकों का अनुभव और अनुभवी एस्ट्रोनॉट हैं और एलन मस्क के पास बेहतरीन टैकनॉलॉजी से बने राकेट और स्पेस क्राफ्ट हैं। ये दोनों पहली बार किसी ह्यूमन स्पेस फ्लाइट डिमोस्टेसन के लिए साथ आए हैं। इस मिशन का नाम है डेमो टू। अमेरिका के इस डिमोस्टेसन टेस्ट फ्लाइट पर बहुत कुछ टिका हुआ था जो सफल हो गया है। इसे मानव की अंतरिक्ष यात्रा की एक एतिहासिक धटना बताया जा रहा है।

डेमो टू का प्रदर्शन

डेमो टू में आखिर ऐसा क्या है जो दुनिया इसे बेसब्री से देख रही है। दरअसल डेमो टू एक प्रदर्शन है जो यह देखने के लिए किया गया कि स्पेस एक्स एस्टरोनेट को धरती से आइएसएस और फिर वहाँ से उसे धरती पर वापस ला सकती है या नहीं। आईएसएस यानी इंटरनेशनल स्पेस स्टेशन, यह घर जैसी मानव निर्मित सेटेलाइट है जो पृथ्वी की सतह से 408 किलोमीटर ऊपर पृथ्वी की चक्कर लगाती है। यहाँ कुछ एस्ट्रोनाट भी रहते हैं जो स्पेस संबंधित महत्वपूर्ण रिसर्च करते हैं। आईएसएस सबसे नजदीक वाला स्पेस में ठहरने का स्थान है जहाँ कोई भी जा सकता है। डेमो टू को समझने के लिए इसके दो हिस्से को देखना होगा। पहला हिस्सा राकेट जिसका नाम है फेल्केन 9। दूसरा हिस्सा स्पेस क्राफ्ट जिसका नाम है क्रूड्रैगन। राकेट स्पेस क्राफ्ट का सबसे बड़ा हिस्सा होता है जिसका काम चंद मिनटों का होता है। राकेट का बस इतना काम होता है कि स्पेस क्राफ्ट जो उसके ऊपरी हिस्से में लगा होता है उसे स्पेस में ले जाकर छोड़ दे। अंतरिक्ष पृथ्वी की सतह से लगभग 100 किलोमीटर ऊपर से शुरू होता है। राकेट स्पेसक्राफ्ट को वहीं ले जाकर छोड़ता है। लेकिन फेल्केन9 राकेट इसे छोड़ने के बाद पृथ्वी की तरफ गिरता नहीं है बल्कि लौटता है।

इसे बड़ी सतर्कता से किसी लांच के बाद पहले किसी समुंदर में गिरा दिया जाता था क्योंकि उसका ज्यादातर हिस्सा काम का नहीं रहता था। लेकिन अब ऐसा नहीं है दिसंबर 2015 में पहली बार ऐसा हुआ जब किसी राकेट को सुरक्षित धरती पर लैंड कराया गया हो। वैसे किसी राकेट को सफलता पूर्वक धरती पर लैंड कराना आसान काम नहीं होता। इसमें बहुत खतरें होते हैं। अप्रैल 2016 में इसी राकेट फेल्कन 9 को एटलांटिक महासागर में तैनात एक जहाज पर लैंड कराया गया। यही राकेट आज डेमो टू मिशन के लिए उपयोग में लाया गया है।

डेमो 2 अपने साथ चार अंतरिक्ष यात्री को स्पेस में ले जा सकता है और वापस पृथ्वी पर ला भी सकता है। किसी भी स्पेस क्राफ्ट से दो तरह की चीजें भेजा जा सकता है। पहला क्रू और दूसरा कारबो। क्रू मतलब इंसान और कारबो मतलब सामान। जैसे आदमी को ले जाने वाला क्रूड्रैगन और दूसरा सामान ले जाने वाला कारबो ड्रैगन। अक्टूबर 2012 में स्पेस एक्स के कारबो ड्रैगन आइएसएस तक

आंत्रप्रेन्योर एलन मस्क ने 2002 में इस कंपनी की नींव रखी थी। इसका मक़सद अंतरिक्ष में ट्रांसपोर्टेशन की लागत को कम करना है। साथ ही इसका एक मक़सद मंगल ग्रह पर इंसानी बस्तियां बनाना भी है। स्पेसएक्स दुनिया की अकेली ऐसी निजी कंपनी है जो कि नियमित तौर पर धरती पर रॉकेट को वापस लौटाती है ताकि इनको फिर से लॉन्च किया जा सके। कंपनी आईएसएस पर नियमित रूप से कार्गो भेजती रही है और अब वह एस्ट्रोनॉट्स को लॉन्च कर रही है। अब मस्क की कंपनी स्टारशिप नाम से बड़े स्पेसक्राफ्ट भी विकसित कर रही है जिन्हें मंगल पर इंसानों की बस्तियां तैयार करने में इस्तेमाल किया जाएगा।

दक्षिण अफ्रीका में पैदा हुए एलन मस्क ईबे को अपनी ऑनलाइन पेमेंट सर्विस कंपनी पेपल को बेचकर 16 करोड़ डॉलर कमा चुके हैं। इंसानों को अंतरिक्ष में आवाजाही करते देखने की उनकी ख़्वाहिश के चलते ही स्पेसएक्स का जन्म हुआ है। लेकिन, वह कई तरह की दूसरी कंपनियों की नींव रखने में भी शामिल रहे हैं। इनमें इलेक्ट्रिक कार बनाने वाली कंपनी टेस्ला भी शामिल है। वह हाइपरलूप प्रोजेक्ट पर भी काम कर रहे हैं। यह एक हाई-स्पीड ट्रांसपोर्टेशन सिस्टम है जिसमें ट्यूब्स के एक सिस्टम के जरिए पॉड्स में बैठकर लोग ट्रैवल कर सकेंगे। एलन मस्क विवादों से भी अछूते नहीं रहे हैं। उनके ट्वीट्स क़ानूनी विवादों की वजह बने हैं और इस वजह से उन्हें टेस्ला के चेयरमैन पद को छोड़ने के लिए मजबूर होना पड़ा है। हालांकि, वह अभी भी टेस्ला के सीईओ हैं।

लॉन्च की अहमियत

साल 2011 में स्पेस शटल के रिटायर होने के बाद से ही नासा को अपने एस्ट्रोनॉट्स को लॉन्च करने के लिए रूस को लाखों डॉलर चुकाने पड़ रहे थे। रूस इन अंतरिक्ष यात्रियों को अपने सोयुज स्पेसक्राफ़्ट के ज़रिए स्पेस में भेजता था। इसके लिए अमेरिका को काफी पैसा खर्च करना पड़ रहा था। फ्लोरिडा से क्रू ड्रैगन से एस्ट्रोनॉट्स का लॉन्च होना इस लिहाज से भी एक अहम पड़ाव है क्योंकि नौ साल में पहली बार कोई इंसान अमरीकी धरती से अंतरिक्ष में गया है। इंसानों को अंतरिक्ष में भेजने के मामले में यह अमेरिका के लिए सम्मान की बात है। यह भी पहली बार है जबकि कोई निजी कंपनी एस्ट्रोनॉट्स को अंतरिक्ष की कक्षा में भेजा। भारत भी अब निजी कंपनियों का सहयोग अंतरिक्ष प्रोग्राम के लिए ले रहा है इससे एक नए युग की शुरुआत होगी। वैसे अब वे दिन दूर नहीं जब इंसान अंतरिक्ष में कार द्वारा सैर करेगा। यह सफर पृथ्वी से चंद्रमा और फिर मंगल तक होगी।

vijonkumarpanday@gmail.com

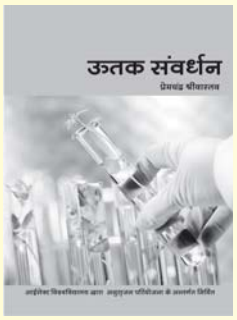

10 जुलाई 1939, झांसी जिला सिद्धार्थ नगर, उत्तरप्रदेश में जन्मे प्रेमचंद्र श्रीवास्तव ने (वनस्पति शास्त्र) एम.एस-सी उत्तीर्णझ करने के बाद पादप विषाणु एवं मृदा कवक पर शोध कार्य किया। अब तक लगभग 550 लेख विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए। विज्ञान पर अंटार्टिका, भारतीय सभ्यता के साक्षी, पेड़-पौधों का रोचक संसार, जीव प्रौद्योगिकी के बढ़ते कदम, वनस्पति विज्ञानी डॉ. जगदीशचंद्र बोस आदि पुस्तकें प्रकाशित, चर्चित और पुरस्कृत हुई। आपने कई पत्रिकाओं का संपादन भी किया। विज्ञान की गतिविधियों में आपका सक्रिय योगदान रहा। कोशिकाओं के ऐसे समूह जो संरचना और कार्य में एक जैसे होते हैं, उन्हें ऊतक या टिश्यू कहते हैं। जैव-विविधता के संरक्षण की दिशा में ऊतक संवर्धन तकनीक द्वारा विलुप्तप्रायः वनस्पतियों एवं जीवों की विभिन्न प्रजातियों का विकास किया जा रहा है। ऊतक संवर्धन तकनीक के बढ़ते प्रयोग एवं महत्व को ध्यान में रखते हुए पुस्तक रची गई है। हिंदी में ऊतक संवर्धन संबंधी साहित्य के अभाव को दूर करने का प्रयास प्रस्तुत प्रति के माध्यम से किया गया है।

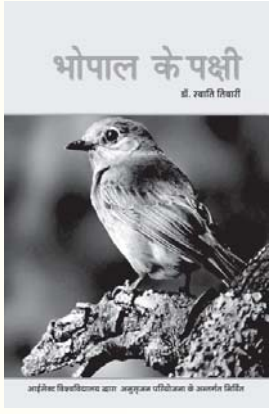

डॉ. स्वाति तिवारी का जन्म 17 फरवरी 1960 में धार म.प्र. में हुआ। एम.एस-सी (प्राणीशास्त्र), एलएलबी, एम.फिल तक शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात आपने समाजशास्त्र में शोधकार्य किया। कई संगठनों की संचालक डॉ. तिवारी का हिन्दी साहित्य में भी महत्वपूर्ण स्थान है। अब तक उनकी 15 से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी है जिसमें बैगनी फूलों वाला पेड़, अकेले होते लोग, स्वाति तिवारी की चुनिंदा कहानियां और सवाल आज भी जिन्दा हैं विशेष उल्लेखनीय है। आपको कई उल्लेखनीय सम्मान और पुरस्कार प्राप्त है जिसमें राष्ट्रीय मानवधिकार आयोग दिल्ली का सम्मान, वगेश्वरी सम्मान, राष्ट्रीय लाड़ली मीडिया पुरस्कार शामिल हैं। आप अफ्रीका और भारत के विश्व हिन्दी सम्मेलन में मध्यप्रदेश शासन का प्रतिनिधित्व कर चुकी हैं। भोपाल के पक्षी नामक पुस्तक में आपने प्रवासी पक्षियों के जीवन के वैज्ञानिक पक्ष उजागर किया है।

पक्षी सभी उम्र के व्यक्तियों के लिए आकर्षण का केंद्र बने रहते हैं। पक्षियों को जानने की जिज्ञासा जैसे - वे कहां से आते हैं और कहां पाए जाते हैं, उनका भोजन, अंडा और अन्य विशेषताओं से संबंधित जानकारी इस पुस्तक में उपलब्ध कराई गई है। लेखिका स्वयं जीव-विज्ञान की विद्यार्थी रही हैं और उन्होंने पक्षियों को अपने कैमरे में कैद कर पुस्तक के माध्यम से उपलब्ध कराया है। लेखिका को विश्वास है कि इसे पढ़कर पाठक स्वयं बर्ड वॉचिंग कर सकेंगे।

विनाशकारी भूकंप का मंडराता खतरा

योगेश कुमार गोयल

तीन दशकों से पत्रकारिता कॅरियर में। समसामयिक, सामरिक, पर्यावरण तथा सामाजिक विषयों पर देश के लगभग सभी प्रतिष्ठित समाचारपत्र-पत्रिकाओं में तेरह हजार से अधिक लेखों का प्रकाशन। लगभग अठारह वर्षों तक तीन समाचार-फीचर एजेंसियों का सम्पादन। अभी तक छह पुस्तकों का प्रकाशन।

पिछले करीब तीन महीनों में दिल्ली-एनसीआर में आए डेढ़ दर्जन से भी ज्यादा भूकम्प के झटकों के अलावा अंडमान निकोबार, गुजरात, जम्मू कश्मीर, मिजोरम इत्यादि कई राज्यों में आए भूकम्प के झटकों ने भय का माहौल बना दिया है। 10 जून को अंडमान निकोबार में 4.3 तीव्रता का, 15 जून को गुजरात में 5.5, उसी दिन जम्मू कश्मीर में तीन बार 3.5 तीव्रता और 16 जून को जम्मू कश्मीर में ही 5.8 तीव्रता का भूकम्प आया। 21 जून की शाम मिजोरम सहित पूर्वोत्तर के पांच राज्यों असम, मेधालय, मणिपुर, मिजोरम तथा त्रिपुरा में 5.1 तीव्रता के भूकम्प के झटके महसूस किए गए और 22 जून की सुबह फिर से आए 5.3 तीव्रता के मध्यम दर्जे के भूकम्प से मिजोरम में काफी नुकसान भी हुआ। 3 जुलाई को मिजोरम में 4.6 तथा दिल्ली में 4.7 तीव्रता के झटके महसूस किए गए। हालांकि अभी तक राहत की बात यही है कि मिजोरम के अलावा देश में बार-बार आ रहे भूकम्प के झटकों से जानमाल का कोई नुकसान नहीं हुआ है लेकिन कई भूगर्भ वैज्ञानिक आशंका जता रहे हैं कि भूकम्प के ये छोटे-छोटे झटके किसी बड़े भूकम्प का संकेत हो सकते हैं। कई विशेषज्ञ दिल्ली से बिहार के बीच 7.5 से 8.5 तीव्रता के बड़े भूकम्प की आशंकां भी जता रहे हैं। गुजरात और जम्मू कश्मीर के मध्यम तीव्रता वाले झटकों ने तो वर्ष 2001 के विनाशकारी भूकम्प की यादें ताजा करानी शुरू कर दी हैं। भूगर्भ वैज्ञानिकों के अनुसार भारत में वर्ष 1885 से 2015 के बीच कुल सात बड़े भूकम्प दर्ज किए गए हैं, जिनमें से तीन की तीव्रता 7.5 से 8.5 के बीच थी और अब वाडिया इंस्टीच्यूट ऑफ हिमालयन जियोलॉजी द्वारा कहा जा रहा है कि दिल्ली एनसीआर क्षेत्र में लगातार हो रही सिस्मिक गतिविधि के कारण इस क्षेत्र में बड़ा भूकम्प आ सकता है। इंडियन इंस्टीच्यूट ऑफ साइंस के वैज्ञानिक भी दिल्ली, कानपुर, लखनऊ और उत्तरकाशी के इलाकों में भयंकर भूकम्प आने की चेतावनी दे चुके हैं।

कुछ भूकम्प विशेषज्ञों के मुताबिक दिल्ली-हरिद्वार रिज में खिंचाव के कारण धरती बार-बार हिल रही है और ऐसे में आगे भी ऐसे झटकों का दौर जारी रहेगा। भूगर्भ वैज्ञानिकों के अनुसार दिल्ली एनसीआर में बार-बार आ रहे भूकम्पों से पता चल रहा है कि यहां के भू-गर्भीय फाल्ट सक्रिय हैं, जिसकी वजह से बड़ा विनाशकारी भूकम्प आ सकता है लेकिन उसका कोई पूर्वानुमान नहीं लगाया जा सकता। कई अध्ययनों के आधार पर कहा गया है कि 72 फीसदी मामलों में हल्के भूकम्प ही शक्तिशाली भूकम्प के संकेत होते हैं। नेशनल सेंटर ऑफ सिस्मोलॉजी (एनसीएस) के अनुसार इसी भू-गर्भीय फाल्ट में वर्ष 1700 से अभी तक 6 या उससे अधिक तीव्रता वाले कुल चार बड़े भूकम्प आ चुके हैं। हालांकि एनसीएस के निदेशक बी के बंसल का कहना है कि

धरती की ऊपरी सतह सात टेक्टोनिक प्लेटों से मिलकर बनी है और जहां भी ये प्लेटें एक दूसरे से टकराती हैं, वहीं भूकम्प का खतरा पैदा हो जाता है। विशेषज्ञों के अनुसार भूकम्प तब आता है, जब ये प्लेटें एक-दूसरे के क्षेत्र में घुसने की कोशिश करती हैं। प्लेटों के एक-दूसरे से रगड़ खाने से बहुत ज्यादा ऊर्जा निकलती है, उसी रगड़ और ऊर्जा के कारण ऊपर की धरती डोलने लगती है। कई बार यह रगड़ इतनी जबरदस्त होती है कि धरती फट भी जाती है।

दिल्ली एनसीआर क्षेत्र में आने वाले भूकम्प के झटकों से घबराने की जरूरत नहीं है बल्कि जोखिम कम करने के उपायों पर जोर देने की जरूरत है लेकिन साथ ही उनका यह भी कहना है कि ऐसी कोई तकनीक नहीं है, जिससे भूकम्प आने के समय, स्थिति और तीव्रता की भविष्यवाणी की जा सके अर्थात् भूकम्प को लेकर कोई पूर्वानुमान नहीं हो सकता। उनके मुताबिक निजी इमारतें यदि भूकम्प झेलने में कमजोर हैं तो उन्हें चरणबद्ध तरीके से मजबूत बनाया जाए और लोग भूकम्प जैसी स्थिति से निबटने को तैयार हो सकें, इसके लिए लगातार मॉक ड्रिल कराई जानी चाहिए। भूगर्भ विशेषज्ञों के अनुसार विगत दो वर्षों में दिल्ली क्षेत्र में करीब दो सौ भूकम्प के झटके आ चुके हैं, जिनमें 4 से 4.9 तीव्रता वाले 64 और 5 या उससे अधिक तीव्रता वाले 8 भूकम्प आए हैं लेकिन ढ़ाई महीने के अंतराल में धरती इतनी बार लगातार कभी नहीं काँपी, इसलिए भी बड़े भूकम्प का अंदेशा जताया जा रहा है।

वैज्ञानिक भूकम्प की चेतावनी देने में भले ही सक्षम नहीं हैं लेकिन भूकम्प के कारणों और उसे मापने का पैमाना 'रिक्टर स्केल' विकसित कर लिया गया है। भूकम्प विशेषज्ञों का कहना है कि भूकम्प की पूरी भविष्यवाणी तो संभव नहीं है लेकिन यह अवश्य पता लगाया जा सकता है कि धरती के नीचे किस क्षेत्र में किन प्लेटों के बीच ज्यादा हलचल है और किन प्लेटों के बीच ज्यादा ऊर्जा पैदा होने की आशंका है। दरअसल धरती की ऊपरी सतह सात टेक्टॉनिक प्लेटों से मिलकर बनी है और जहाँ भी ये प्लेटें एक दूसरे से टकराती हैं, वहीं भूकम्प का खतरा पैदा हो जाता है। विशेषज्ञों के अनुसार भूकम्प तब आता है, जब ये प्लेटें एक-दूसरे के क्षेत्र में घुसने की कोशिश करती हैं। प्लेटों के एक-दूसरे से रगड़ खाने से बहुत ज्यादा ऊर्जा निकलती है, उसी रगड़ और ऊर्जा के कारण ऊपर की धरती डोलने लगती है। कई बार यह रगड़ इतनी जबरदस्त होती है कि धरती फट भी जाती है। भूकम्प विशेषज्ञों के मुताबिक जिन क्षेत्रों में भूकम्प का खतरा ज्यादा होता है, उसका कारण सैकड़ों वर्षों में धरती की निचली सतहों में तनाव बढ़ना होता है। दरअसल भूकम्प आने का मुख्य कारण टेक्टॉनिक प्लेटों का अपनी जगह से हिलना है लेकिन तनाव का असर अचानक नहीं बल्कि धीरे-धीरे होता है। हिमालय के नीचे भारत तथा आस्ट्रेलिया की प्लेटें मिली हुई हैं, जिन्हें इंडो-आस्ट्रेलियन प्लेट कहा जाता है।

विशेषज्ञों के मुताबिक धरती के नीचे छोटे-मोटे एडजस्टमेंट होते रहते हैं, जिससे कभी-कभार भूकम्प के हल्के झटके महसूस होते रहते हैं लेकिन बार-बार लग रहे ऐसे झटकों को लेकर तीन तरह के अनुमान लगाए जा रहे हैं। पहला यह कि भूकम्प के हल्के झटके कुछ समय तक आते रहेंगे और फिर स्थिति सामान्य हो जाएगी। दूसरा, लगातार कुछ हल्के झटके आने के बाद फिर एक बड़ा भूकम्प आ सकता है। हालांकि विशेषज्ञों का कहना है कि प्रायः पाँच-सात छोटे भूकम्प आने के बाद ही एक बड़ा भूकम्प आता है। तीसरा अनुमान यह है कि संभव है दिल्ली एनसीआर में आ रहे हल्के भूकम्प किसी दूरस्थ इलाके में आने वाले बड़े भूकम्प का संकेत दे रहे हों। राष्ट्रीय भूकम्प विज्ञान केन्द्र के निदेशक (ऑपरेशन) जेएल गौतम के मुताबिक दिल्ली-एनसीआर में जमीन के नीचे दिल्ली-मुरादाबाद फाल्ट लाइन, मथुरा फाल्ट लाइन तथा सोहना फाल्ट लाइन मौजूद है और जहाँ फाल्ट लाइन होती है, भूकम्प का अधिकेन्द्र वहीं पर बनता है। उनका कहना है कि बड़े भूकम्प फाल्ट लाइन के किनारे ही आते हैं और केवल दिल्ली ही नहीं बल्कि पूरी हिमालयन बेल्ट को भूकम्प से ज्यादा खतरा है। हिन्दुकुश से अरूणाचल प्रदेश तक जाने वाले रेंज में ही बड़े भूकम्प आते हैं। हिमालय के केन्द्रीय हिस्से में 8 से 8.5 की तीव्रता के कई भूकम्प आ चुके हैं, जिनके कारण इस इलाके में गहरी दरारें पैदा हो गई हैं। भूवैज्ञानिकों के मुताबिक वर्ष 1934 में आए भूकम्प ने तो सतह पर 150 किलोमीटर लंबी दरार बना दी थी और हिमालय का यही हिस्सा ऐसे ही बड़े भूकम्पों की संभावनाएं संजोये हुए है।

मैक्रो सिस्मिक जोनिंग मैपिंग के अनुसार भूकम्प को मापने के लिए भारत को जोन-5 से जोन-2 तक कुल चार जोन में बांटा गया है। इनमें जोन-5 सर्वाधिक संवेदनशील और जोन-2 को सबसे कम संवेदनशील माना गया है। जोन-5 ऐसा क्षेत्र होता है, जहाँ भूकम्प आने की आशंका सर्वाधिक रहती है जबकि जोन-2 ऐसा क्षेत्र होता है, जहाँ भूकम्प आने की आशंका सबसे कम होती है। जोन-5 में गुजरात का भुज क्षेत्र, जम्मू कश्मीर का कुछ क्षेत्र, अंडमान निकोबार, उत्तराखण्ड तथा समस्त पूर्वोत्तर भारत आता है। देश की राजधानी दिल्ली और उसके आसपास के इलाके को इस दृष्टि से जोन-4 में रखा गया है,

जहाँ रिक्टर पैमाने पर 7.9 तीव्रता तक का भूकम्प आ सकता है। इस जोन में दिल्ली-एनसीआर, हरियाणा, पंजाब, जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तर-प्रदेश, बिहार, सिक्किम तथा पश्चिम बंगाल का कुछ क्षेत्र आता है। जोन-3 में उत्तर प्रदेश, बिहार तथा मध्य प्रदेश के कुछ इलाकों के अलावा, पश्चिम बंगाल, राजस्थान, महाराष्ट्र, गुजरात, तमिलनाडु तथा केरल के कुछ हिस्से आते हैं। रिक्टर पैमाने पर जितनी ज्यादा तीव्रता का भूकम्प आता है, उतना ही ज्यादा कम्पन होता है। रिक्टर पैमाने का हर स्केल पिछले स्केल के मुकाबले दस गुना ज्यादा ताकतवर माना जाता है। जहाँ रिक्टर पैमाने पर 2.9 तीव्रता का भूकम्प आने पर हल्का कम्पन होता है, वहीं 7.9 तीव्रता के भूकम्प से इमारतें धराशयी हो जाती हैं।

रिक्टर पैमाने पर भूकम्प की तीव्रता और उसके असर को समझना भी आवश्यक है। 1.9 तीव्रता तक के भूकम्प का केवल सिस्मोग्राफ से ही पता चलता है। 2 से 2.9 तीव्रता का भूकम्प आने पर हल्का कम्पन होता है जबकि 3 से 3.9 तीव्रता का भूकम्प आने पर ऐसा प्रतीत होता है, मानो कोई भारी ट्रक नजदीक से गुजरा हो। 4 से 4.9 तीव्रता वाले भूकम्प में खिड़कियों के शीशे टूट सकते हैं और दीवारों पर टंगे फ्रेम गिर सकते हैं। 5 से 5.9 तीव्रता के भूकम्प में भारी फर्नीचर भी हिल सकता है और 6 से 6.9 तीव्रता वाले भूकम्प में इमारतों की नींव दरकने से ऊपरी मंजिलों को काफी नुकसान हो सकता है। 7 से 7.9 तीव्रता का भूकम्प आने पर इमारतें गिरने के साथ जमीन के अंदर पाइपलाइन भी फट जाती हैं। 8 से 8.9 तीव्रता का भूकम्प आने पर तो इमारतों सहित बड़े-बड़े पुल भी गिर जाते हैं जबकि 9 तथा उससे तीव्रता का भूकम्प आने पर हर तरफ तबाही ही तबाही नजर आना तय है।

रिक्टर पैमाने का हर स्केल पिछले स्केल के मुकाबले 10 गुना ज्यादा ताकतवर माना जाता है। जहां रिक्टर पैमाने पर 2.9 तीव्रता का भूकम्प आने पर हल्का कम्पन होता है, वहीं 7.9 तीव्रता के भूकम्प से इमारतें धराशयी हो जाती हैं।

भूकम्प विज्ञान केन्द्र के पूर्व प्रमुख अतींद्र कुमार शुक्ला का कहना है कि भूकम्प जैसी प्राकृतिक घटनाएँ पृथ्वी की आंतरिक संरचना के कारण भूगर्भ में विशिष्ट स्थानों पर संचयित ऊर्जा के विशेष परिस्थितियों में उत्सर्जित होने से घटती हैं। भूकम्पीय तरंगों के माध्यम से यह ऊर्जा चारों ओर प्रवाहित होती है, जिससे सतह पर बनी इमारतों में कम्पन होता है। ये इमारतें जब इस कम्पन को झेलने में

समर्थ नहीं होती, तभी जान-माल का नुकसान होता है। कहने का तात्पर्य यही है कि वास्तव में यह नुकसान भूकम्प के कारण नहीं बल्कि भूकम्प नहीं झेल पाने वाली इमारतों के कारण होता है। अतींद्र शुक्ला के मुताबिक नई बनने वाली इमारतों को भूकम्परोधी बनाकर और पुरानी इमारतों में अपेक्षित सुधार कर इस नुकसान से बचा जा सकता है।

माना कि भूकम्प जैसी प्राकृतिक आपदाओं के समक्ष मनुष्य बेबस है क्योंकि ये आपदाएं प्रायः बगैर किसी चेतावनी के आती हैं, जिससे इनकी मारक क्षमता कई गुना बढ़ जाती है लेकिन जापान, अमेरिका, आस्ट्रेलिया, कनाडा इत्यादि कुछ देशों से सबक लेकर हम ऐसे प्रबंध तो कर ही सकते हैं, जिससे भूकम्प आने पर नुकसान की संभावना न्यूनतम रहे। जापान तो ऐसा देश है, जहाँ सबसे ज्यादा भूकम्प आते हैं लेकिन उसने भवन निर्माण और बुनियादी सुविधाओं का ऐसा मजबूत ढ़ांचा विकसित कर लिया है, जिससे वहाँ अब भूकम्पों के कारण बहुत कम नुकसान होता है। दूसरी ओर हम अभी तक इस मामले में बहुत पीछे हैं। दरअसल हमारे यहां भूकम्प से बचाव के लिए बने दिशा-निर्देशों की अनदेखी कर अनियोजित तरीके से लगातार बन रही नई इमारतों की बात हो या पुरानी जर्जर इमारतों में रह रहे करोड़ों लोगों की, सब भगवान भरोसे ही चल रहा है। भूकम्प जैसी प्राकृतिक आपदाओं से जान-माल की हानि को न्यूनतम करने के लिए सबसे जरूरी है कि जापान जैसे ही भूकम्परोधी प्रबंध करने की दिशा में ठोस कदम उठाए जाएँ।

mediacaregroup@gmail.com

विश्वमोहन तिवारी का जन्म 26 फरवरी 1935 को जबलपुर में हुआ। उन्होंने एमटेक, क्रेनफिल्ड इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नॉलॉजी, इग्लैंड तथा विशारद, हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग से शिक्षा प्राप्त की तथा एयर वाइसमार्शल हुए। उनकी प्रसिद्ध कृतियां विज्ञान का आनंद, बोधिवृक्ष के नीचे, आनंद पक्षी निहारन का, सरल वैदिक गणित, खाड़ी युद्ध 91, यात्राओं का आनंद, नई दिशा, सुनो मनु, हमारे कलाम, उपग्रह के बाहर भीतर, इलेक्ट्रॉनिकी युद्ध कला आदि हैं। उन्हें आत्माराम पुरस्कार, मेघनाथ साहा पुरस्कार, सहस्राब्दि हिन्दी सेवी सम्मान, इंदिरा गांधी राजभाषा पुरस्कार, रक्षा मंत्रालय पुरस्कार, राहुल सांस्कृत्यान पुरस्कार, राष्ट्र गौरव सम्मान, विवेकानंद पुरस्कार, मैथिलीशरण गुप्त पुरस्कार, आर्य भट्ट सम्मान, तकनीकी मौलिक लेखन पुरस्कार, विज्ञान भूषण सम्मान, हिन्दी संवाहक सम्मान आदि पुरस्कार प्राप्त हुए हैं।

प्रस्तुत किताब में उन्होंने भारत में विज्ञान की परंपरा और वर्तमान स्थिति पर गंभीरता से विचार किया है। भारत में विज्ञान की परंपरा का प्रारम्भ वैदिक युग से ही हो जाता है। सनातन धर्म मूलतः विज्ञान का विरोध नहीं करता, क्योंकि उसकी सोच विज्ञान संगत है। इस पुस्तक में विज्ञान तथा विज्ञान संचार के विभिन्न आयामों को विभिन्न दृष्टियों से प्रस्तुत किया गया है।

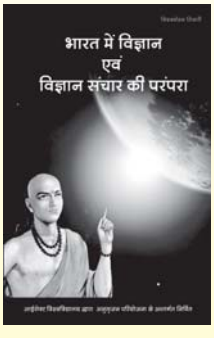

विज्ञान की कसौटी पर प्यार

डॉ. विजय कुमार उपाध्याय

डॉ. विजय कुमार उपाध्याय विज्ञान लेखन में एक बहुचर्चित नाम है। आप जियोलॉजी के पूर्व प्रोफेसर रहे हैं। आपके विज्ञान संबंधित आलेख देश भर की पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे हैं। विज्ञान की कई पुस्तकों का भी प्रकाशन हो चुका है। इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए पत्रिका के लिए पिछले दो दशकों से विज्ञान आलेख लिखते आ रहे हैं। आपके विज्ञान लेखन सरल भाषा में होने के कारण बहुत लोकप्रिय है। आप बोकारो में रहते हैं।

मानव जीवन का एक महत्वपूर्ण पहलू है प्यार अथवा प्रेम। प्यार हमारे जीवन को सरस, आनन्दमय तथा सार्थक बना देता है। सच पूछा जाये तो प्यार के बिना हमारा जीवन अधूरा तथा निरर्थक हो जाता है। वस्तुतः वह व्यक्ति भाग्यशाली माना जाता है जिसे अपने जीवन में किसी से सच्चा प्यार मिलता है। परन्तु अब एक महत्वपूर्ण प्रश्न उठता है कि प्यार है क्या? प्यार का स्रोत क्या है? प्यार हृदय से होता है या मस्तिष्क से? प्यार की भावना पैदा होने पर हमारे शरीर में किस प्रकार के परिवर्तन आते हैं। इन सारे प्रश्नों का उत्तर ढूँढने के लिए संसार के अनेक वैज्ञानिक गहन अध्ययन एवं शोध में लगे हुए हैं।

आज तक संसार में जितने भी कवि, लेखक तथा दार्शनिक हुए, उन सब ने यही माना कि प्रेम या प्यार का उद्‌गम हमारे हृदय से होता है। परन्तु वैज्ञानिकों ने साबित कर दिया है कि प्यार की उत्पत्ति हृदय से नहीं बल्कि मस्तिष्क से होती है। वस्तुतः प्यार हमारे मस्तिष्क से जुड़ी क्रिया प्रणाली का ही एक प्रमुख पक्ष होता है। वैज्ञानिकों के मतानुसार हमारे मस्तिष्क से ही सभी प्रकार की अच्छी तथा बुरी भावनाओं की उत्पत्ति होती है।

अब वैज्ञानक लोग इस बात को समझने तथा समझाने की स्थिति में आ गये हैं कि प्यार या प्रेम का हमारे मस्तिष्क से क्या संबंध है। आज से कुछ ही समय पूर्व ब्रिटेन के कुछ वैज्ञानिकों ने प्यार की सच्चाई तथा गहराई को मापने की विधि खोज निकाली। अब प्यार का विश्लेषण तथा सत्यापन ब्रेन स्कैनिंग विधि द्वारा काफी आसानी पूर्वक किया जा सकता है। ब्रिटिश वैज्ञानिकों द्वारा की गयी उपर्युक्त खोज ने उस धारणा को बिलकुल निर्मूल साबित कर दिया है जिसमें बताया जाता था कि प्रेम या प्यार की उत्पत्ति हृदय से होती है।

प्यार की सच्चाई तथा गहराई को मापने के लिये वैज्ञानिक लोग एक विशेष एक विशेष प्रकार की विधि अपनाते हैं। जिस व्यक्ति के प्यार की जाँच करनी होती है उसे ब्रेन स्कैन मशीन की समीप आने को कहा जाता है। अब उसे उस व्यक्ति का चित्र दिखाया जाता है जिससे वह प्यार का दावा करता है। जब वह व्यक्ति (पुरुष या महिला) अपने प्रेमी अथवा प्रेमिका का चित्र देख रहा होता है उसी दौरान उसके मस्तिष्क की स्कैनिंग कर ली जाती है। यदि वह व्यक्ति चित्र वाले व्यक्ति से सचमुच प्यार करता है तो उसके मस्तिष्क में चार ऐसे कोने पाये जाते हैं जो चित्र देखने के दौरान रक्त से पूरी तरह भर जाते हैं। अध्ययनों में देखा गया है कि प्यार की गहराई जितनी अधिक होगी, मस्तिष्क के उपर्युक्त चार क्षेत्रों रक्त से उतना ही अधिक भर जायेंगे।

प्यार की सच्चाई एवं गहराई की जाँच एवं माप संबंधी उपर्युक्त प्रयोग युनिवर्सिटी कॉलेज लन्दन में कार्यरत प्रोफेसर समीर जौकी तथा एंड्रियाज बर्टिज द्वारा संयुक्त रूप से किये गये। उनके

जब किसी लड़के को कोई भी सुन्दर लड़की दिखाई पड़ती है तो उसकी लार में टेस्टेस्टेरोन नामक हार्मोंस का स्तर काफी बढ़ जाता है। कई वैज्ञानिकों ने पुरुषों के मस्तिष्क के स्कैन का अध्ययन करने के बाद पता लगाया है कि लड़कियों की सुन्दरता सामान्य तौर पर लड़के के मस्तिष्क पर काफी गहराई से अपना प्रभाव डालती है।

द्वारा किये गये इस अध्ययन से संबंधित एक शोध पत्र कुछ ही समय पूर्व 'न्यू साइंटिस्ट' नामक जर्नल में प्रकाशित किया गया था। इस अध्ययन के लिये उपर्युक्त कॉलेज के ही कुछ छात्र तथा छात्राओं को सब्जेक्ट के रूप में चुना गया था। इस अध्ययन के दौरान देखा गया कि अपने प्रेमी अथवा प्रेमिका का चित्र देखते ही इन छात्र-छात्राओं के मस्तिष्क के कुछ क्षेत्र रक्त से भर जाने के कारण लाल हो उठे। मस्तिष्क के जो क्षेत्र प्रेमी या प्रेमिका का चित्र देखने पर रक्त से भर जाते थे उनमें से दो क्षेत्र मस्तिष्क के अधिक विकसित भाग 'सिरेब्रल कोर्टेक्स' में मौजूद पाये गये, जबकि दो अन्य क्षेत्र मस्तिष्क के कम विकसित भाग 'बेसल गैंग्लिया' में पाये गये।

उपर्युक्त शोध से जुड़ वैज्ञानिकों ने अपने अध्ययनों के दौरान पाया कि प्यार की उत्पत्ति के कारण जहाँ मस्तिष्क के कुछ भाग बहुत अधिक सक्रिय हो उठे, वहीं कुछ भाग ऐसे हैं जो प्रेम की उत्पत्ति के कारण कम सक्रिय अथवा निष्क्रिय हो उठे। उदाहरण के तौर पर प्यार के कारण मस्तिष्क के वे भाग निष्क्रिय हो जाते हैं जो उदासी से ग्रस्त लोगों में काफी सक्रिय होते पाये जाते हैं। ब्रिटिश वैज्ञानिकों द्वारा की गयी यह खोज बहुत ही महत्वपूर्ण मानी जा रही है। इस जानकारी के आधार पर चिकित्सा वैज्ञानिकों को उदासी या अवसाद (डिप्रेशन) से ग्रस्त रोगियों की चिकित्सा ढूँढ़ने में काफी सुविधा होगी। इसके अलावा उन लोगों की चिकित्सा को ढूँढ़ने में सहायता प्राप्त होगी जो प्रेम रोग से ग्रस्त पाये जाते हैं। अर्थात अनेक प्रकार के मानसिक रोगों की चिकित्सा ढूँढ़ने में सहायता प्राप्त होगी।

संयुक्त राज्य अमेरिका में शिकागो विश्वविद्यालय के इंस्टिट्यूट ऑफ माइंड एंड वायोलॉजी में कार्यरत कुछ वैज्ञानिकों ने हाल ही में अपने द्वारा किये गये शोधों एवं अध्ययनों से निष्कर्ष निकाला कि जब कोई लड़का किसी सुन्दर लड़की से मिलता है तो उसके मुँह में लार की मात्रा बढ़ जाती है तथा इस लार के रासायनिक संघटन में भी परिवर्तन आ जाता है। इस शोध दल के अगुआ थे जेम्स रोने। इस शोध दल ने अपने कॉलेज के कुछ छात्रों तथा छात्राओं पर एक प्रयोग किया। इस प्रयोग में सभी छात्र-छात्राओं की लार के नमूने लिये गये तथा उनका विश्लेषण किया गया। उसके बाद उन सभी छात्र-छात्राओं को अपने साथी से पाँच मिनट तक बात करने को कहा गया। उसके बाद पुनः उनकी लार का नमूना लिया गया। लार के विश्लेषण से पता चला कि जो लड़के किसी लड़के से ही बात कर रहे थे उनकी लार के रासायनिक संघटन में कोई परिवर्तन नहीं आया था। परन्तु जो लड़के किसी लड़की से बात कर रहे थे उनकी लार में टेस्टेस्टेरोन नाम पुरुष यौन हार्मोंस का स्तर काफी अधिक बढ़ गया था। जेम्स रोने ने अपने द्वारा किये गये अध्ययनों के आधार पर निष्कर्ष निकाला है कि जब किसी लड़के को कोई भी सुन्दर लड़की दिखाई पड़ती है तो उसकी लार में टेस्टेस्टेरोन नामक हार्मोंस का स्तर काफी बढ़ जाता है। कई वैज्ञानिकों ने पुरुषों के मस्तिष्क के स्कैन का अध्ययन करने के बाद पता लगाया है कि लड़कियों की सुन्दरता सामान्य तौर पर लड़के

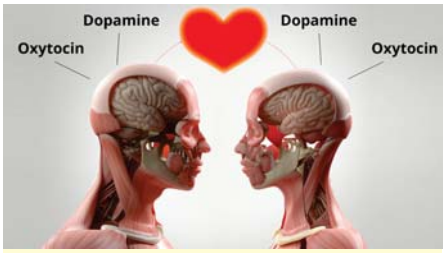

वैज्ञानिकों के मतानुसार जब किसी व्यक्ति में प्यार की भावना उत्पन्न होती है तो मस्तिष्क को आनन्द देने वाले कुछ रसायनों का स्राव होने लगता है। ऐसे रसायनों में शामिल हैं- डोपामाइन, ऑक्सीटॉसिन, ऐड्रेनालिन तथा इनसे मिलते-जुलते कुछ अन्य प्रकार के रसायन।

के मस्तिष्क पर काफी गहराई से अपना प्रभाव डालती है।

प्यार के वैज्ञानिक पहलू से संबंधित और भी कुछ अध्ययन किये गये हैं। उदाहरण के तौर पर एक अध्ययन में वैज्ञानिकों ने कुछ पुरुषों को कम्प्यूटर पर अनेक महिलाओं के चित्र दिखाये। चित्र देखने वाले के सामने की बोर्ड लगया था जिसकी सहायता से वे उन चित्रों को हटा सकते थे जिन्हें वे पसन्द नहीं करते थे। साथ ही वे किसी चित्र को कम अथवा अधिक समय तक देख सकते थे। इस अध्ययन से पता चला कि सुन्दर तथा आकर्षक महिलाओं में से प्रत्येक को पुरुषों ने औसत तौर पर 8.7 सेकंड तक देखा। जबकि अन्य स्त्रियों में से प्रत्येक के औसत तौर पर सिर्फ 5.2 सेकंड तक देखा गया। वैज्ञानिकों के मतानुसार जब किसी व्यक्ति में प्यार की भावना उत्पन्न होती है तो मस्तिष्क को आनन्द देने वाले कुछ रसायनों का स्राव होने लगता है। ऐसे रसायनों में शामिल हैं- डोपामाइन, ऑक्सीटॉसिन, ऐड्रेनालिन तथा इनसे मिलते-जुलते कुछ अन्य प्रकार के रसायन।

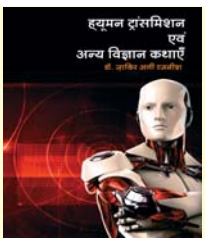

डॉ. जाकिर अली 'रजनीश' का जन्म 1 जनवरी 1975 को लखनऊ में हुआ। हिन्दी में स्नात्कोत्तर, पी.एच-डी. उपाधि प्राप्त की और इन दिनों राज्य कृषि उत्पादन मंडी परिसर उत्तरप्रदेश में कार्यरत हैं। आपने दूरदर्शन तथा आकाशवाणी के लिये भी लेखन किया। वैज्ञानिक उपन्यास, विज्ञान कथा संग्रह, पटकथा लेखन पुस्तक, वैज्ञानिकों की जीवनी सहित आपने अनेक वैज्ञानिक पुस्तकों का सृजन किया। आपको जर्मनी सहित देश-विदेश दो दर्जन संस्थाओं से सम्मानित - पुरस्कृत किया गया है। पुस्तक में नौ बाल विज्ञान कथाएँ एवं ह्यूमन ट्रांसमिशन नामक एक लधु बाल उपन्यास सम्मिलित हैं। विज्ञान कथाओं के माध्यम से समाज में व्याप्त अंधविश्वासों का खुलासा बड़े रोचक तरीके से किया गया है जबकि उपन्यास में एक वैज्ञानिक के स्थानांतरित होने का सजीव चित्रण किया गया है।

जून, 1969 को पिथौरागढ़ (उत्तरांचल) में जन्म। डॉ. दीपक कोहली वर्तमान में उ.प्र. सचिवालय, लखनऊ में उप सचिव के पद पर कार्यरत। आपके विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में लगभग 1000 से अधिक वैज्ञानिक लेख/शोध पत्र प्रकाशित) 50 से अधिक विज्ञान वार्ताएं प्रसारित। आप डॉ .गोरखनाथ विज्ञान पुरस्कार, एनवायरमेंटल जर्नलिज्म अवॉर्ड्, सचिवालय दर्पण निष्ठा सम्मान, साहित्य गौरव पुरस्कार, तुलसी साहित्य सम्मान, सोशल एनवायरमेंट अवॉर्ड, पर्यावरण रत्न सम्मान, विज्ञान साहित्य रत्न पुरस्कार से नवाज़े जा चुके हैं।

जीवन के लिए ओज़ोन

डॉ. दीपक कोहली

धरती पर ओजोन परत के महत्व और पर्यावरण पर पड़ने वाले उसके असर के बारे में जानकारी के लिए प्रत्येक वर्ष 16 सितम्बर को "विश्व ओजोन दिवस" मनाया जाता है। इस वर्ष आयोजित होने जा रहे "विश्व ओजोन दिवस 16 सितंबर, 2020" का थीम है, "जीवन के लिए ओजोनः ओजोन परत संरक्षण के 35 वर्ष" क्योंकि इस वर्ष हम वैश्विक ओजोन परत संरक्षण के 35 साल मना रहे हैं। विश्व ओजोन दिवस पहली बार साल 1995 में मनाया गया था। यह दिवस धरती पर पर्यावरण के प्रति जागरूकता तथा ओजोन परत के महत्व के कारण मनाया जाता है। विश्व ओजोन दिवस मनाने का मकसद ओजोन परत का संरक्षण है। ओजोन परत के क्षरण से और पराबैंगनी किरणों के दुष्परिणामस्वरुप त्वचा कैंसर, मोतियाबिंद, रोग प्रतिरोधक क्षमता में कमी, फसलों के उत्पादन में कमी के साथ पर्यावरण भी दूषित होता है।

उल्लेखनीय है कि सूर्य के प्रकाश के बिना पृथ्वी पर जीवन संभव नहीं है। लेकिन सूर्य से निकलने वाली ऊर्जा पृथ्वी पर जीवन के लिए बहुत अधिक होगी, यह ओजोन परत के लिए नहीं थी। यह स्ट्रैटोस्फेरिक परत पृथ्वी को सूरज की सबसे हानिकारक पराबैंगनी विकिरण से बचाती है। सूर्य का प्रकाश जीवन को संभव बनाता है, लेकिन ओजोन परत जीवन बनाती है। जैसा कि हम जानते हैं कि यह संभव है। इसलिए, जब 1970 के दशक के अंत में काम करने वाले वैज्ञानिकों को पता चला कि मानवता इस सुरक्षात्मक ढाल में एक छेद बना रही है, तो उन्होंने अलार्म उठाया। छेद - एयरोसोल और शीतलन में उपयोग किए गए ओजोन-घटने वाली गैसों (ओडीएस) के कारण, जैसे कि रेफ्रिजरेटर और एयर-कंडीशनर - त्वचा के कैंसर और मोतियाबिंद के मामलों को बढ़ाने और पौधों, फसलों, और पारिस्थितिक तंत्र को नुकसान पहुँचाने की धमकी दे रहे थे।

वैश्विक प्रतिक्रिया निर्णायक थी। 1985 में, दुनिया की सरकारों ने ओजोन परत के संरक्षण के लिए वियना कन्वेंशन को अपनाया। कन्वेंशन के मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल के तहत, सरकारों, वैज्ञानिकों और उद्योग ने सभी ओजोन-क्षयकारी पदार्थों के 99 प्रतिशत को काटने के लिए मिलकर काम किया। मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल के लिए धन्यवाद, ओजोन परत हीलिंग है और मध्य शताब्दी तक 1980 के पूर्व के मूल्यों पर लौटने की उम्मीद है। प्रोटोकॉल के समर्थन में, किगली संशोधन, जो 2019 में लागू हुआ, हाइड्रोफ्लोरोकार्बन (HFC) को कम करने, शक्तिशाली जलवायु वार्मिंग क्षमता वाले ग्रीनहाउस गैसों और पर्यावरण को नुकसान पहुँचाने की दिशा में काम करेगा।

16 सितंबर को आयोजित विश्व ओजोन दिवस, इस उपलब्धि का जश्न मनाता है। यह दर्शाता है कि सामूहिक निर्णय और कार्यवाही, विज्ञान द्वारा निर्देशित, प्रमुख वैश्विक संकटों को हल करने का एकमात्र तरीका है। कोरोनो वायरस महामारी के इस वर्ष में, जिसने इस तरह के सामाजिक और आर्थिक कष्ट को दूर किया है, ओजोन संधियों में सद्भाव और सामूहिक भलाई के लिए मिलकर काम करने का संदेश पहले से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है।

ओजोन परत की खोज फ्रांस के दो वैज्ञानिकों फैबरी चार्ल्स और होनरी बुसोन ने की थी। ओजोन परत गैस की एक ऐसी परत है जो पराबैंगनी किरणों से हमें बचाती है। यह परत हमारे लिए एक फिल्टर की तरह काम करती है जिसे मनुष्य तथा धरती पर मौजूद अन्य जीव की पैराबैंगनी किरणों के हानिकारक प्रभाव से बचाती है। ओजोन एक हल्के नीले रंग की गैस होती है। ओजोन परत आमतौर धरातल से 10 किलोमीटर से 50 किलोमीटर की

धरती पर ओजोन को नुकसान पहुँचाने वाले पदार्थों में सी.एफ.सी. गैस प्रमुख है। यह गैस घरों में इस्तेमाल होने वाले रेफ्रिजरेटर और एसी में सबसे ज्यादा इस्तेमाल होती है। साथ ही हैलोन्स और कार्बन टेट्राक्लोराइड भी ओजोन परत के लिए हानिकारक होते हैं। सूर्य का प्रकाश ओजोन परत से छनकर ही पृथ्वी पर पहुंचता हैं। यह खतरनाक पराबैंगनी विकिरण को पृथ्वी की सतह पर पहुँचने से रोकती है और इससे हमारे ग्रह पर जीवन सुरक्षित रहता है।

ऊंचाई के बीच पाई जाती है। ओज़ोन ऑक्सीजन के एक परमाणु से नहीं बल्कि तीन परमाणुओं से मिलकर बनने वाली एक गैस है जो कि वातावरण में बहुत कम मात्रा में पाई जाती है। यह गैस निचले वातावरण में पृथ्वी के पास रहने पर प्रदूषण को बढ़ावा देती है और इंसानों के लिए नुकसानदेह होती है। लेकिन वायुमंडल के ऊपरी सतह पर इसकी स्थिति आवश्यक है। यह गैस कुदरती तौर पर बनती है। जब सूर्य की किरणें वायुमंडल की ऊपरी सतह पर ऑक्सीजन से टकराती हैं तो उच्च ऊर्जा विकिरण से इसका कुछ भाग ओज़ोन में बदल जाता है। इसके अलावा विद्युत विकास क्रिया, आकाशीय विद्युत, बादल एवं मोटरों के विद्युत स्पार्क से भी ऑक्सीजन ओज़ोन में परिवर्तित हो जाती है।

अल्ट्रावायलट किरणों में बहुत ऊर्जा होती है जो ओजोन परत को पतला कर रही है। अल्ट्रावायलट किरणें बढ़ने पर धरती पर चर्म रोगों की मात्रा बढ़ती है। इसके अलावा लोगों की रोग प्रतिरोधक क्षमता भी कम हो जाती है। यही नहीं मनुष्यों में मोतियाबिंद की परेशानी बढ़ने के साथ जैव विविधता धटती है और मछलियों तथा अन्य प्राणियों से संख्या भी कम हो जाती है।

ओजोन क्षरण से मानवों के साथ पर्यावरण पर भी असर पड़ता है। जहां ओजोन क्षय के कारण मनुष्य जल्दी बूढ़े होते हैं और शरीर पर झुर्रियां पड़ती है। साथ ही पत्तियों के आकार छोटे जाते हैं, अंकुरण का समय बढ़ जाता है और मक्का, चावल, गेहूं, सोयाबीन जैसे फसलों का उत्पादन कम हो जाता है। पैराबैंगनी किरणें सूक्ष्म जीवों को प्रभावित करते हैं जिसका असर खाद्य शृंखला पर पड़ता है। इससे कपड़े को भी नुकसान पहुंचता है, उनके रंग जल्दी उड़ जाते हैं। प्लास्टिक के फर्नीचर और पाइप जल्दी ही खराब हो जाते हैं।

धरती पर ओजोन को नुकसान पहुँचाने वाले पदार्थों में सी.एफ.सी. गैस प्रमुख है। यह गैस घरों में इस्तेमाल होने वाले रेफ्रिजरेटर और एसी में सबसे ज्यादा इस्तेमाल होती है। साथ ही हैलोन्स और कार्बन टेट्राक्लोराइड भी ओजोन परत के लिए हानिकारक होते हैं।

सूर्य का प्रकाश ओजोन परत से छनकर ही पृथ्वी पर पहुँचता हैं। यह खतरनाक पराबैंगनी विकिरण को पृथ्वी की सतह पर पहुँचने से रोकती है और इससे हमारे ग्रह पर जीवन सुरक्षित रहता है। ओजोन परत के क्षय के मुद्दे पर पहली बार 1976 में संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम की प्रशासनिक परिषद (यूएनईपी) में विचार-विमर्श किया गया। ओजोन परत पर विशेषज्ञों की बैठक 1977 में आयोजित की गई। जिसके बाद 'यूएनईपी' और विश्व मौसम संगठन (डब्ल्यूएमओ) ने समय-समय पर ओजोन परत में होने वाले क्षय को जानने के लिए ओजोन परत समन्वय समिति (सीसीओएल) का गठन किया।

ओजोन-क्षय विषयों से निबटने के लिए अंतर्राष्ट्रीय समझौते हेतु अंतर-सरकारी बातचीत 1981 में प्रारंभ हुई और मार्च, 1985 में ओजोन परत के बचाव के लिए वियना सम्मेलन के रूप में समाप्त हुई। 1985 के वियना सम्मेलन ने इससे संबंधित अनुसंधान पर अंतर-सरकारी सहयोग, ओजोन परत के सुव्यवस्थित तरीके से निरीक्षण, सीएफसी उत्पादन की निगरानी और सूचनाओं के आदान-प्रदान जैसे मुद्दों को प्रोत्साहित किया। सम्मेलन के अनुसार मानव स्वास्थ्य और ओजोन परत में परिवर्तन करने वाली मानवीय गतिविधियों के विरूद्ध वातावरण बनाने जैसे आम उपायों को अपनाने पर देशों ने प्रतिबद्धता व्यक्त की। वियना सम्मेलन एक ढाँचागत समझौता है और इसमें नियंत्रण अथवा लक्ष्यों के लिए कानूनी बाध्यता नहीं है।

ओजोन परत को कम करने वाले विषयों पर मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल को सितम्बर, 1987 में स्वीकार किया गया। ओजोन परत के क्षय को रोकने वाले, ओजोन अनुकूल उत्पादों और जागरूकता जगाने के लिए मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल विषयों के कार्यान्वयन के महत्व का उल्लेख करते हुए ओजोन परत के संरक्षण के लिए 16 सितम्बर को अंतर्राष्ट्रीय दिवस घोषित किया गया। सभी सदस्य देशों को इस विशेष दिवस पर मॉन्ट्रियल प्रोटोकॉल के उद्देश्यों एवं लक्ष्यों और इसके संशोधन के साथ राष्ट्रीय स्तर पर ठोस गतिविधियों को प्रोत्साहित करने के लिए आमंत्रित किया जाता है।

सरकारें जब तक प्रोटोकॉल के साथ-साथ संशोधनों की अभिपुष्टि नहीं करती तब तक इससे कानूनी रूप से नहीं बंधती हैं। दुर्भाग्य से अनेक सरकारों ने प्रोटोकॉल की अभिपुष्टि तो की है मगर संशोधन और उनके कड़े नियंत्रण उपाय लक्ष्य से पीछे हैं। ओजोन समझौतों पर आज तक 193 देशों ने हस्ताक्षर किए हैं। 1985 के अंत में दक्षिण ध्रुव (एंटार्कटिक) के ऊपर ओजोन की परत में छेद का पता चलने के बाद सरकारों ने क्लोरोफ्लोरोकार्बन (सीएफसी-11, 12, 113, 114 और 115) और अनेक हैलॅन्स (1211, 1301, 2402) के उत्पादन और खपत को कम करने के कड़े उपायों की आवश्यकता को पहचाना। प्रोटोकॉल इस तरह से तैयार किया गया है ताकि समय-समय पर वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी आंकलनों के आधार पर इस प्रकार

की गैसों से निजात पाने के लिये इसमें संशोधन किया जा सके। इस प्रकार के आंकलनों के बाद इस प्रकार की गैसों से छुटकारा पाने की प्रक्रिया को तेज करने के लिये 1990 में लंदन, 1992 में कोपेनहेगन, 1995 में वियना, 1997 में मॉन्ट्रियल और 1999 में पेचिंग में चरणबद्ध बहिष्करण में तेजी लाने के लिए प्रोटोकॉल को समायोजित किया गया। अन्य प्रकार के नियंत्रण उपायों को शुरू करने और इस सूची में नये नियंत्रण तत्वों को जोड़ने के लिये भी इसमें संशोधन किया गया।

1990 में लंदन संशोधन के तहत अतिरिक्त क्लोरोफ्लोरोकार्बन (सीएफसी-13, 111, 112, 211, 212, 213, 214, 215, 216, 217) और दो विलायक (सॉल्वेंट) (कार्बन टेट्राक्लोराइट और मिथाइल क्लोरोफार्म) को शामिल किया गया जबकि 1992 में कोपेनहेगन संशोधन के तहत मिथाइल ब्रोमाइड, एचबीएफसी और एचसीएफसी को जोड़ा गया। 1997 में मॉन्ट्रियल संशोधन को अंतिम रूप दिया गया जिसके तहत मिथाइल ब्रोमाइड से निजात पाने की योजना बनायी गयी। 1999 में पेचिंग संशोधन के तहत ब्रोमोक्लोरोमिथेन के उपयोग से तुरंत छुटकारा पाने (चरणबद्ध ढंग से बाहर करने) के लिये इसे शामिल किया गया। इस संशोधन के तहत एचसीएफसी के उत्पादन पर नियंत्रण के साथ-साथ गैर-पक्षों के साथ इसके कारोबार पर लगाम लगाने की योजना भी बनाई गई।

ओजोन के अणुओं में ऑक्सीजन के तीन परमाणु होते हैं। यह जहरीली गैस है और वातावरण में बहुत दुर्लभ है। प्रत्येक 10 मिलियन अणुओं में इसके सिर्फ 3 अणु पाये जाते हैं। 90 प्रतिशत ओजोन वातावरण के ऊपरी हिस्से या समताप मंडल (स्ट्राटोस्फेयर) में पाई जाती है जो पृथ्वी से 10 और 50 किलोमीटर (6 से 30 मील) ऊपर है। क्षोभमंडल (ट्रोपोस्फेयर) की तली में जमीनी स्तर पर ओजोन हानिकारक प्रदूषक है जो ऑटोमोबाइल अपकर्षण और अन्य स्रोतों से पैदा होती है।

ओजोन की परत सूर्य से आने वाले ज्यादातर हानिकारक पराबैंगनी-बी विकिरण को अवशोषित करती है। यह घातक पराबैंगनी (यूवी- सी) विकिरण को पूरी तरह रोक देती है।

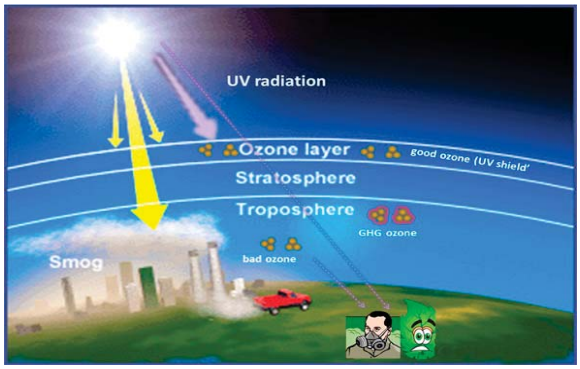

1980 के दशक के प्रारंभ में जब से इसका मापन शुरू हुआ तब से दक्षिण ध्रुव के ऊपर ओजोन की परत स्थिर रूप से कमजोर हो रही है। बेहद ठंडे वातावरण और ध्रुवीय समताप मंडलीय बादलों के कारण भूमंडल के इस भाग पर समस्या और गंभीर है। ओजोन की परत में क्षय वाला भू-क्षेत्र स्थिर रूप से बढ़ रहा है। यह 1990 के दशक में 20 मिलियन वर्ग किलोमीटर से अधिक हो गया और उसके बाद यह 20 और 29 वर्ग किलोमीटर के दायरे में फैल गया।

इस प्रकार ओजोन का सुरक्षा कवच हमारे जीवन के लिये बहुत जरूरी है और यह हम जानते हैं। ओजोन की परत की क्षति से पराबैंगनी विकिरण अधिक मात्रा में धरती तक पहुँचता है। अधिक पराबैंगनी विकिरण का मतलब है और अधिक मैलेनुमा और नॉनमैलेनुमा त्वचा कैंसर, आँखों का मोतियाबिंद अधिक होना, पाचन तंत्र में कमजोरी, पौधों की उपज घटना, समुद्रीय पारितंत्र में क्षति और मत्स्य उत्पादन में कमी।

1970 में जब प्रोफेसर पाल क्रुटजन ने ये संकेत दिया कि उर्वरकों और सुपरसोनिक एयरक्रॉफ्ट से निकलने वाली नाइट्रोजन ऑक्साइड से ओजोन की परत को नुकसान होने की आशंका है तो इसके बारे में वैज्ञानिक चिंतित हुए। 1974 में प्रोफेसर एफ शेरवुड रॉलेंड और मारियो जे मोलिना ने यह पता लगाया कि क्लोरोफ्लोरोकार्बन वातावरण में विभाजित होकर क्लोरीन के परमाणु जारी करते हैं और वे ओजोन क्षय का कारण बनते हैं। हेलेन्स के जरिए जारी होने वाले ब्रोमीन परमाणु भी ऐसा ही बुरा प्रभाव डालते हैं। इन तीन वैज्ञानिकों ने अपने महत्वपूर्ण कार्य के लिए 1995 में रसायन विज्ञान में नोबल पुरस्कार प्राप्त किया।

1980 के दशक के प्रारंभ में जब से इसका मापन शुरू हुआ तब से दक्षिण ध्रुव के ऊपर ओजोन की परत स्थिर रूप से कमजोर हो रही है। बेहद ठंडे वातावरण और ध्रुवीय समताप मंडलीय बादलों के कारण भूमंडल के इस भाग पर समस्या और गंभीर है। ओजोन की परत में क्षय वाला भू-क्षेत्र स्थिर रूप से बढ़ रहा है। यह 1990 के दशक में 20 मिलियन वर्ग किलोमीटर से अधिक हो गया और उसके बाद यह 20 और 29 वर्ग किलोमीटर के दायरे में फैल गया। उत्तरी ध्रुव के ऊपर ओजोन की परत 30 प्रतिशत जबकि यूरोप और अन्य उच्च अक्षांश वाले क्षेत्रों में ओजोन की परत में क्षय की दर 5 प्रतिशत से 30 प्रतिशत के बीच है।

हेलो कार्बन जो क्लोरोफ्लोरोकार्बन और हेलॅन्स के रूप में उल्लेखनीय है। 1928 में क्लोरोफ्लोरो कार्बन की खोज हुई और इन्हें आश्चर्यजनक गैस माना गया, क्योंकि ये लम्बे समय तक रहती है, और विषैली नहीं होती हैं। इनसे जंग नहीं लगता (असंक्षारक) और ये अज्वलनशील होती हैं। ये परिवर्तनशील है और 1960 के दशक से रेफ्रिजरेटरों, एयरकंडीशनरों, स्प्रे केंस, विलायकों, फोम और अन्य अनुप्रयोगों में इनका उपयोग बढ़ता जा रहा है। सीएफसी-11 पचास वर्षों तक वायुमंडल में रहती है, सीएफसी-12 एक सौ दो वर्षों तक और सीएफसी-115 सत्रह सौ वर्षों तक वायुमंडल में रहती है। हेलॅन-1301 प्राथमिक रूप से आग बुझाने में उपयोग की जाती है और यह वायुमंडल में 65 साल तक रहती है।

कार्बन टेट्राक्लोराइड विलायक के रूप में उपयोग की जाती है और वायुमंडल में विघटित होने में करीब 42 वर्ष लेती है। मिथाइल क्लोरोफोर्म (1,1,1-ट्राईक्लोरोइथेन) भी विलायक के रूप में इस्तेमाल की जाती है और विघटित होने में करीब 5.4 वर्ष लेती है। हाइड्रोब्रोमोफ्लोरोकार्बन (एचबीएफसी) का अधिक इस्तेमाल नहीं किया जाता है, परंतु किसी नये इस्तेमाल से बचने के लिए इनको भी प्रोटोकॉल के तहत शामिल किया गया है।

हाइड्रोक्लोरोफ्लोरोकार्बन (एचसीएफ-सी) सीएफसी के स्थान पर प्रयुक्त करने के लिए पहले प्रमुख विस्थापक के रूप में इसका विकास किया गया था। यह क्लोरोफ्लोरोकार्बन की

तुलना में बहुत कम विनाशक है। एचसीएफसी भी ओजोन की क्षय में योगदान देती है और वायुमंडल में करीब 1.4 से 19.5 वर्ष तक विद्यमान रहती है।

मिथाइल ब्रोमोइड (सीएच-3 बीआर) बहुमूल्य फसलों, कीट नियत्रंण और निर्यात के लिये प्रतीक्षित कृषि जिंसों के क्वेरेन्टाइन उपचार के लिये धूम्रक (फ्यूमिगैन्ट) के रूप में इस्तेमाल की जाती है। वायुमंडल में विघटित होने में इसे करीब 0.7 वर्ष लगते हैं।

ब्रोमोक्लोरोमीथेन (बीसीएम) ओजोन को क्षति पहुंचाने वाला नया तत्व है जिसे कुछ कम्पनियों ने 1998 में बाजार में उतारने की अनुमति मांगी थी। इसको इस्तेमाल से बाहर करने के लिये 1999 के संशोधन में शामिल किया गया। भारत को चार प्रमुख रसायन-क्लोरोफ्लोरा कार्बन, सीटीसी, हेलॅन्स और हाइड्रोक्लोरोफ्लोरोकार्बन इस्तेमाल से बाहर करने थे जिनमें से 2003 के प्रारंभ में हेलेन्स को इस्तेमाल से बाहर किया गया। 1 अगस्त 2008 तक सीएफसी को भी इस्तेमाल से बाहर कर दिया गया है। सीटीसी का इस्तेमाल 2009 के आखिर तक बंद करने की बात थी और हाइड्रोक्लोरोफ्लोरोकार्बन को बाहर करने की प्रक्रिया अभी जारी है। सभी पक्ष ओजोन को क्षति पहुंचाने वाले ऐसे नये तत्वों के विपणन से बचने के उपायों पर विचार कर रहे हैं जो अब तक प्रोटोकॉल में शामिल नहीं है।

विकसित देशों में हेलॅन्स और क्लोरोफ्लोरोकार्बन, कार्बन टेट्राक्लोराइड, मिथाइल क्लोरोफार्म और हाइड्रोब्रोमो-फ्लोरोकार्बन को इस्तेमाल से बाहर करने की प्रक्रिया क्रमशः 1994 और 1996 में पूरी कर ली गई है 1999 तक मिथाइलब्रोमोइड के इस्तेमाल में 25 प्रतिशत कमी की गयी। 2001 में 50 प्रतिशत और 2003 में 70 प्रतिशत कमी की गई। 2005 तक इसे इस्तेमाल से पूरी तरह बाहर कर दिया गया। इस दौरान 2004 तक हाइड्रोक्लोरोफ्लोरोकार्बन के इस्तेमाल में 35 प्रतिशत कमी की गई जिसके इस्तेमाल में २०१० तक 65 प्रतिशत, 2015 तक 90 प्रतिशत और 2020 तक 99.5 प्रतिशत कमी की जानी है। 2030 तक सिर्फ रख-रखाव के उद्देश्यों में ही इसके 0.5 प्रतिशत इस्तेमाल की अनुमति होगी। 1996 तक हाइड्रोब्रोमो-फ्लोरोकार्बन और बीसीएम को तुरंत इस्तेमाल

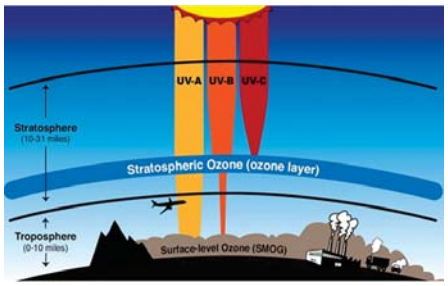

से बाहर करने का कार्यक्रम बनाया गया। विकासशील देशों को इन गैसों को इस्तेमाल से बाहर करने का कार्यक्रम शुरू करने से पहले कुछ समय की छूट दी गई। इससे इस बात का पता चलता है कि विकसित देश वायुमंडल में कुल उत्सर्जन के अधिकांश के लिए उत्तरदायी है और उनके पास इनके विस्थापकों को अपनाने के लिये अधिक वित्तीय और प्रौद्योगिकी संसाधन है। विकासशील देशों का कार्यक्रम इस प्रकार था-

- 1996 तक हाइड्रोब्रोमोफ्लोरोकार्बन और बीसीएम को तुरंत इस्तेमाल से बाहर करना।
- क्लोरोफ्लोरोकार्बन, हेलेन्स और कार्बनटेट्राक्लोरोइड को 1 जुलाई 1999 तक 1995 से 97 के औसत पर लाना, 2005 तक 50 प्रतिशत कमी, 2007 तक 85 प्रतिशत कमी और 2010 तक पूरी तरह इस्तेमाल से बाहर करना।
- 2003 तक मिथाइल क्लोरोफार्म के इस्तेमाल को 1998-2000 के औसत स्तर पर लाना, 2005 तक 30 प्रतिशत कमी और 2010 तक 70 प्रतिशत कमी और 2015 तक पूरी तरह इस्तेमाल से बाहर करना।
- मिथाइलब्रोमोइड के इस्तेमाल को 2002 तक 1995 से 98 के औसत स्तर पर लाना, 2005 तक इस्तेमाल में 20 प्रतिशत कमी और 2015 तक इस्तेमाल से पूरी तरह बाहर करना।
- 2016 तक हाइड्रोक्लोरोफ्लोरोकार्बन को 2015 के स्तर पर और 2040 तक इस्तेमाल से बाहर करना।

विश्व समुदाय ने ओजोन के अवक्षय, जलवायु परिवर्तन, जैव विविधता और अंतर्राष्ट्रीय पानी जैसी चुनौतियों से निपटने में विकासशील देशों की मदद करने के लिए वैश्विक पर्यावरण सुविधा (जीईएफ) की स्थापना की थी। जीईएफ परिवर्तनशील अर्थव्यवस्थाओं वाले देशों में ओजोन के अवक्षय के लिए जिम्मेदार पदार्थों को इस्तेमाल से बाहर करने की परियोजनाओं और क्रियाकलापों को बढ़ावा देती है! जीईएफ ने इन परियोजनाओं और कार्यकलापों के अंतर्गत 1996 और 2000 के बीच निम्नलिखित 17 देशों की सहायता के लिए 160 मिलियन डालर से अधिक की मंजूरी दी है।

वैज्ञानिकों ने अनुमान व्यक्त किया है कि अगले पांच वर्षों के दौरान ओजोन क्षय अपने सबसे बुरे स्तर पर पहुंच जाएगा और फिर धीरे-धीरे इसमें विपरीत रूझान आना शुरू होगा एवं करीब 2050 तक ओजोन परत सामान्य स्तर पर आ जाएगी। यह अनुमान इस आधार पर व्यक्त किया गया है कि मॉंट्रियल प्रोटोकोल को पूरी तरह लागू किया जाएगा। ओजोन परत फिलहाल बेहद संवेदनशील अवस्था में है। क्लोरोफ्लोरोकार्बन उत्सर्जन में कमी के बावजूद, समतापमंडलीय सांद्रण अब भी बढ़ रहा है (तथापि निचले वायुमंडल में वे कम हो रहे हैं) क्योंकि लम्बे समय तक बने रहने वाले क्लोरोफ्लोरोकार्बन का जो उत्सर्जन हो चुका है वह समताप मंडल में अब भी बढ़ना जारी है। कुछ निश्चित क्लोरोफ्लोरोकार्बन (जैसे सीएफसी-11 और सीएफसी-113), कार्बन टेट्राक्लोराइड और मिथाइल क्लोरोफार्म की प्रचुरता घट रही है। ज्यादातर हैलॅन्स की प्रचुरता में वृद्धि जारी है। वस्तुतः हाइड्रोक्लोरो-फ्लोरोकार्बन और हाइड्रोफ्लोरोकार्बन बढ़ रहे हैं, क्योंकि वे क्लोरोफ्लोरोकार्बन (जो इस्तेमाल से बाहर किए जा रहे हैं) के विकल्पों के रूप में इस्तेमाल किए जा रहे हैं। ओजोन सुरक्षा की सफलता संभव हुई है क्योंकि विज्ञान और उद्योग ओजोन का क्षय करने वाले रसायनों के विकल्पों को विकसित करने और उनका व्यावसायीकरण करने में सफल रहे हैं। इस ओजोन दिवस की थीम 'जीवन के लिए ओजोन' हमें याद दिलाती है कि न केवल पृथ्वी पर जीवन के लिए ओजोन महत्वपूर्ण है, बल्कि यह भी है कि हमें भविष्य की पीढ़ियों के लिए ओजोन परत की रक्षा करना जारी रखना चाहिए।

deepakkohli64@yahoo.com

समाचार एजेंसी : उद्भव और विकास

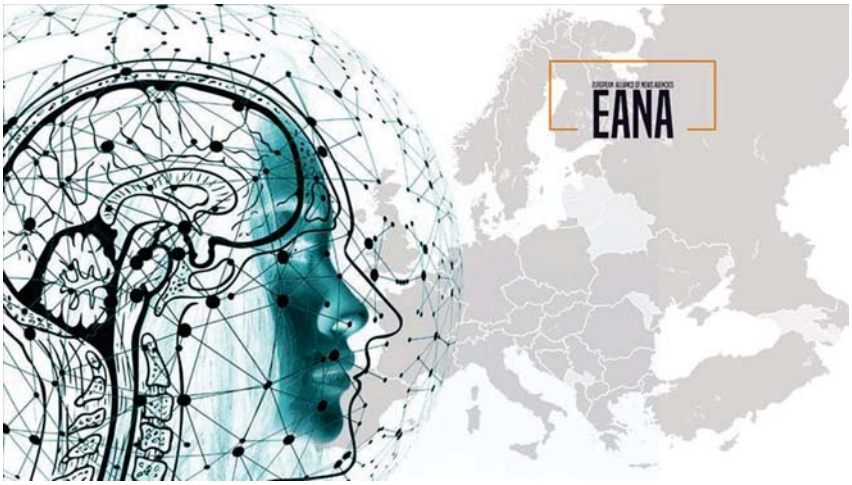

कुणाल सिंह

कुणाल सिंह हिन्दी के जाने-माने कथाकार। कहानियों की दो किताबें और एक उपन्यास प्रकाशित। ज्ञानपीठ नवलेखन पुरस्कार व साहित्य अकादेमी युवा पुरस्कार से सम्मानित। इधर इन्होंने विज्ञान लेखन की ओर रुख किया है और 'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए' में लगातार लिख रहे हैं। आप आईसेक्ट पब्लिकेशन्स, भोपाल से जुड़े हैं। अपने समकालीनों में कुणाल सिंह लगभग ऐसे अकेले लेखक हैं जो नए विषयों और क्षेत्रों की पड़ताल करते हैं।

माना जा सकता है कि 'मीडिया' का प्राचीनतम रूप 'मुनादी' है। प्राचीन काल में प्रजा के बीच राजाज्ञाओं की घोषणा मुनादी के रूप में की जाती थी। इसके लिए बाकायदा कारिन्दे रखे जाते थे जो रियाआ के बीच जाकर डुगडुगी पीटते हुए हाकिम का फरमान सुनाते थे। लेकिन तब समाचार के इस प्राचीनतम रूप का स्रोत निश्चित और सीमित हुआ करता था। राजा की तरफ से ही इन समाचारों का निर्माण और वितरण किया जाता था। कालान्तर में समाचार का न सिर्फ स्वरूप बदला, बल्कि इसका दायरा भी बढ़ा। अब आसपास की हर वह खबर 'समाचार' कहलाने लगी, श्रोताओं में जिसे जानने की लेशमात्रा भी उत्सुकता हो। निश्चित रूप से ऐसे समाचारों के स्रोत भी बढ़े और इस आवश्यकता का जन्म हुआ कि जैसे कहीं कोई घटना घटे, उसे त्वरित रूप से संकलित किया जाए और फिर समाचार के रूप में उसका वितरण हो।

क्या हैं समाचार एजेंसियाँ ?

निश्चित रूप से यह काम कतई आसान न था। यह किसी भी पत्र या पत्रिका के लिए व्यावहारिक रूप से सम्भव नहीं कि वह दुनिया के हर कोने में अपने प्रतिनिधियों को नियुक्त करे जो समाचार को तुरन्त उस तक पहुँचाते रहें। इस व्यावहारिक दिक्कत को देखते हुए ऐसी समितियों के निर्माण की आवश्यकता महसूस की गयी जो समाचारों का समुचित संकलन एवं उसका निष्पक्ष वितरण का कार्य करें। ऐसी ही समितियों को समाचार एजेंसी या न्यूज एजेंसी कहा गया। यूनेस्को ने समाचार एजेंसी को इन शब्दों में परिभाषित किया है- ''समाचार समिति एक उद्यम है जिसका प्रमुख उद्देश्य समाचार एवं समसामयिक जानकारी को एकत्रा करना और तथ्यों को प्रस्तुत करना है। साथ ही साथ उन्हें समाचार, प्रकाशन संस्थाओं को या अन्य उपभोक्ताओं को इस दृष्टिकोण से वितरित करना है कि उन्हें व्यावसायिक और नियमानुकूल स्थितियों में मूल्य चुकाकर सम्पूर्ण और निष्पक्ष समाचार मिल सकें।''

समाचार समितियाँ एक ही समाचार को अपने सभी उपभोक्ताओं को निष्पक्ष रूप से, बगैर किसी तरफदारी के, एक साथ पहुँचाने का कार्य करती हैं। इनकी मदद लिये बिना पत्र-पत्रिकाओं के लिए अपने प्रकाशन को नियमित रख पाना सम्भव नहीं है। संचार तकनीक में लगातार होते परिवर्तनों के साथ-साथ इन्होंने भी अपने तौर-तरीकों में बदलाव किया है। आज समाचार एजेंसियाँ सिर्फ खबरें ही नहीं देतीं, बल्कि फीचर और विशेष लेख, तस्वीरें आदि भी उपलब्ध कराती हैं। हालाँकि समाचार समितियों की भूमिका सीमित है, लेकिन इनके समाचार जनमत को प्रभावित करते रहते हैं क्योंकि उनका प्रकाशन एक से अधिक पत्रिकाओं में एक साथ होता है।

समाचार एजेंसियों का जन्म

समाचार एजेंसियों का जन्म बड़े अनौपचारिक रूप से हुआ। प्राचीन काल में समाचारों के आदान प्रदान के सबसे बड़े माध्यम वे व्यापारी हुआ करते थे जो व्यापार के सिलसिले में समुद्री यात्राएँ किया करते थे और इस क्रम में अपने साथ दूर देश की खबरें लाया करते थे। सन् 1686 में लन्दन में एडवर्ड लायड नामक एक आदमी ने कॉफी हाउस खोला। इस कॉफी हाउस में अलग-अलग इलाकों के व्यापारी आया करते थे। लायड इनसे मिली जानकारियों का संग्रह करता था और उन्हें ब्रिटेन के अखबारों को बेचता था। इस प्रकार एडवर्ड लायड नामक इस व्यक्ति ने अनौपचारिक रूप से ही सही, समाचार एजेंसी की नींव रखी। बाद में यूरोप और अमेरिका के 28 बन्दरगाहों में इसके प्रतिनिधि हो गये जो अपने-अपने बन्दरगाह में आने वाले जहाजियों और सौदागरों से खबरें प्राप्त करते थे। करीब डेढ़ सौ साल बाद अमेरिका के बोस्टन के एक कॉफी हाउस के संचालक सैमुनल टापलिफ ने भी अमेरिकी अखबारों के लिए सन् 1801 में समाचार संकलन का कार्य शुरू किया। बाद में वह यूरोप आया और उसने वहाँ भी अपना काम जारी रखा। कालान्तर में उसके इस काम की परिणति 'हारबर एसोसिएशन' के रूप में हुई। 'हारबर एसोसिएशन' का गठन वर्ष 1849 में कई समाचार पत्रों के आपसी सहयोग के आधार पर त्वरित रूप से खबरें प्राप्त करने के उद्देश्य से किया गया था। इसी दौर में फर्तगाल निवासी चार्ल्स हावा ने 'हावा एजेंसी' और जूलियस रायटर ने अपने नाम से एक समाचार समिति की स्थापना की। गौरतलब है कि हालाँकि समुद्री सौदागरों की भूमिका इस सन्दर्भ में बहुत महत्त्वपूर्ण रही, लेकिन समुद्री मार्गों के जरिए खबरों के पहुँचने में काफी समय लगता था। उदाहरण के लिए नेपोलियन बोनापार्ट की मृत्यु 5 मई 1821 को सेंट हेलेना द्वीप पर हुई, लेकिन इस खबर के पेरिस के अखबारों तक पहुँचने में दो महीने लग गये। हालाँकि यह भी है कि उन दिनों दो महीने की देरी समाचार की दुनिया में कोई खास मायने नहीं रखती थी।

विश्व की प्रमुख समाचार एजेंसियाँ

भूमंडलीकरण से पहले भी दुनिया में किसी भी देश में घटने वाली कोई घटना, बतौर समाचार, दूसरे देशों के लिए बहुत मायने रखा करती थी। अब भूमंडलीकरण के बाद तो देशों की परस्पर निर्भरता बढ़ी ही है, इससे दुनिया के मानचित्र में कोई देश ऐसा नहीं, जहाँ की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक घटनाओं का प्रकारान्तर से पूरी दुनिया पर असर न पड़े। ऐसी स्थिति में दुनिया की हर खबर को जानने की उत्सुकता में इजाफा हुआ है। इसी अनुपात में समाचार एजेंसियों की आवश्यकता और तदनुरूप भूमिका बढ़ती गयी है। वैसे तो देखा जाए तो पूरी दुनिया में आज कोई 1200 से ज्यादा समाचार एजेंसियाँ हैं और उनमें से तकरीबन 25 ऐसी कही जा सकती हैं जिन्हें वैश्विक स्तर पर जाना जाता है, लेकिन 5 एजेंसियाँ ऐसी हैं जिन्हें निर्विवाद रूप से दुनिया की सबसे विश्वसनीय समाचार समितियाँ कहा जा सकता है। वे हैं-

AP Associated Press

- **एसोसिएटेड प्रेस :** यह पहली समाचार समिति थी जिसने टेलीग्राफ की तकनीक का इस्तेमाल किया। शीघ्र ही इसने आर्थिक और वित्तीय समाचार सेवा (HPDJ) तथा डाउजोन (DJ) के साथ तालमेल स्थापित कर लिया और महत्त्वपूर्ण समाचार एजेंसी बन गयी। सन् 1900 में इसका पुनर्गठन किया गया। पहले यह मुख्यतः अमेरिकी समाचार पत्रों को ही अपनी सेवाएँ उपलब्ध कराती थी, लेकिन 1934 में इसने विदेश सेवा भी आरम्भ की। आज दुनिया भर में इसके 15000 से ज्यादा ग्राहक हैं और इसका अपना बड़ा संवाद तन्त्र भी है।

upi UNITED PRESS INTERNATIONAL

- **यूनाइटेड प्रेस इंटरनेशनल :** एसोसिएटेड प्रेस की ही तरह यूनाइटेड प्रेस इंटरनेशनल भी अमेरिकी समाचार एजेंसी है, जिसकी स्थापना 1907 में एडवर्ड विल्स स्क्रिप्स ने की थी। आरम्भ में यह छोटे समाचार पत्रों के लिए सायंकालीन सेवा थी। वर्ष 1918 में प्रथम विश्वयुद्ध खत्म होने की गलत खबर देने के कारण बीच में इसकी साख घट गयी थी, लेकिन बाद में पुनः इसने अपनी खोई हुई साख वापस पा ली। आज इसके ग्राहक न सिर्फ अमेरिका में, बल्कि यूरोप, लैटिन अमेरिका, एशिया और ऑस्ट्रेलिया में भी फैले हैं।

WRITER

- **रायटर्स :** इसकी स्थापना पॉल जूलियस रायटर ने सन् 1850 में की थी। इसने सर्वप्रथम कबूतरों के द्वारा समाचार भेजने का सफल प्रयोग किया था। बाद में इसने टेलीग्राफ का प्रयोग लम्बी दूरी तक खबरें भेजने के लिए किया। भारत समेत ब्रिटेन के समस्त उपनिवेशों में इसकी सेवाएँ उपलब्ध थीं। आज रायटर समाचारों के अतिरिक्त फोटो फीचर व टीवी समाचारों के क्षेत्रा में भी विश्व स्तर पर सबसे बड़ा नाम है। 20000 से भी ज्यादा नियमित संवाददाताओं के साथ इसका समाचार तन्त्र दुनिया भर में फैला हुआ है।

AFP

- **एजेंसी फ्रांस प्रेस :** रायटर के साथ ही जिस एजेंसी का जिक्र हुआ था, हावा एजेंसी, उसके खत्म होने के बाद एजेंसी फ्रांस प्रेस ने पूरी तरह से उसकी जगह ले ली। इसकी स्थापना वैसे तो सन् 1835 में हुई थी, लेकिन इसने प्रथम विश्वयुद्ध के बाद ही विस्तार पाना शुरू किया। 10000 से ज्यादा समाचार पत्र और 70 से अधिक संवाद समितियाँ इसकी नियमित ग्राहक हैं तथा 125 से अधिक देशों में इसकी सेवाएँ ली जाती हैं। एक अनुमान के मुताबिक फ्रेंच, पोर्तुगीज, अँग्रेजी, स्पेनिश, जर्मन और अरबी भाषाओं में यह हर रोज लगभग 35 लाख शब्दों का समाचार वितरण करती है।

- **टेलीग्रेफनोयिक एजेंसतवो सोवेट्सकनो सोइउजा (तास) :** इस अन्तरराष्ट्रीय समाचार समिति की स्थापना 1917 में पेट्रोग्राड टेलीग्राफ के नाम से हुई थी। प्रारम्भ से ही इस पर समाजवादी विचारधारा का प्रभाव था। सोवियत संघ के विघटन के साथ ही तास में भी संगठनात्मक बदलाव आया और आईटीएआर (The Information Telegraph Agency of Russia) नामक एक नयी समाचार एजेंसी का गठन हुआ। वर्तमान में इसे इतारतास (ITARTASS) के नाम से जाना जाता है। इसके 20000 से अधिक ग्राहक हैं।

भारत की प्रमुख समाचार एजेंसियाँ

उन्नीसवीं सदी के पहले दशक तक भारत में पायनियर, स्टेट्समैन, इंग्लिशमैन तथा इंडियन डेली न्यूज नामक चार प्रमुख समाचार पत्रा प्रकाशित होते थे। इन चारों में पायनियर का स्थान सबसे ऊपर था, इसलिए बाकी के तीनों- स्टेट्समैन, इंग्लिशमैन तथा इंडिया डेली न्यूज ने पायनियर को पछाड़ने की नीयत से मिलकर सन् 1905 में एसोसिएटेड प्रेस ऑफ इंडिया नामक समाचार समिति की स्थापना की। दस वर्ष बाद वर्ष 1915 में जब रायटर ने इसे अधिग्रहित कर लिया तो राष्ट्रवादी विचारधारा के कुछ लोगों ने मिलकर 1927 में फ्री प्रेस एजेंसी ऑफ इंडिया नामक समिति बनायी। लेकिन 1935 में यह बन्द हो गयी। सितम्बर 1933 में कोलकाता में यूनाइटेड प्रेस ऑफ इंडिया की स्थापना हुई। इसी ने सर्वप्रथम महात्मा गाँधी की हत्या की खबर प्रसारित की थी। आर्थिक संकट के कारण इसे भी 1958 में बन्द होना पड़ा।

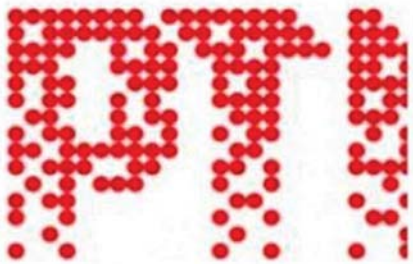

वर्तमान में भारतीय स्तर पर पाँच समाचार समितियाँ प्रमुख रूप से सक्रिय हैं। ये हैं-

- **प्रेस ट्रस्ट ऑफ इंडिया (पीटीआई) :** यह न सिर्पफ भारत, बल्कि एशिया की सबसे बड़ी अँग्रेजी समाचार समितियों में से एक है। भारत को आजादी मिलने के साथ ही इसका पंजीकरण (अगस्त 1947) हो गया था, लेकिन इसने 1 फरवरी 1949 से काम करना शुरू किया और तीन वर्षों तक रायटर के साथ अनुबन्ध में रहने के बाद 1951 में इसने स्वतन्त्रा रूप से काम करना प्रारम्भ कर दिया। आज विश्व के लगभग हर देश में इसके पूर्णकालिक संवाददाता नियुक्त हैं। इसका मुख्यालय मुम्बई में है।

- **यूनाइटेड न्यूज ऑफ इंडिया (यूएनआई) :** पीटीआई के बाद यह देश की दूसरी सबसे बड़ी अँग्रजी समाचार समिति है। इसका गठन प्रथम प्रेस आयोग की सिफारिशों के तहत किया गया था। पीटीआई के एकाधिकार के चलते समाचारों की निष्पक्षता पर सवालिया निशान न लगे, इसे मद्देनजर रखते हुए ही वर्ष 1961 में इसकी स्थापना की गयी थी। इसका मुख्यालय नयी दिल्ली में है।

- **यूनीवार्ता :** यह यूनाइटेड न्यूज ऑफ इंडिया (यूएनआई) की ही हिन्दी सेवा है जिसका आरम्भ 1 मई 1982 को हुआ। आम बोलचाल में वार्ता के नाम से जानी जाने वाली इस समाचार समिति का उद्देश्य हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाओं के लिए एक वैकल्पिक सेवा प्रदान करना था। यह मूलतः छोटे समाचार पत्रों को कम खर्च में हिन्दी भाषा में देश-विदेश के समाचार उपलब्ध कराती है।

- **भाषा :** यूएनआई की देखा-देखी पीटीआई ने भी 18 अप्रैल 1986 को भाषा नाम से अपनी हिन्दी सेवा का आरम्भ किया। भाषा ने देश के 15 हजार से अधिक नगरों और कस्बों के सही नामों की प्रामाणिक सूची तैयार की है और अब यह मात्रा एक अनुवादक एजेंसी न होकर मूल समाचार एजेंसी बन गयी है।

- **इंडिया एब्रॉड न्यूज सर्विस (आईएएनएस) :** मूल रूप से प्रवासी भारतीयों के लिए समाचार उपलब्ध कराने वाली इस समाचार समिति ने अब देश में भी अपना विस्तार करना शुरू कर दिया है। देश के सभी राज्यों की राजधानियों के साथ-साथ अन्य प्रमुख शहरों में भी इसके दफतर हैं। यह समाचारों के साथ ही कला, संस्कृति, साहित्य आदि पर छोटे-छोटे फीचर भी उपलब्ध कराती है।

इनके अतिरिक्त अन्य कई छोटी-छोटी समाचार एजेंसियाँ भी देश के अलग-अलग भागों से अपने अपने क्षेत्रों के समाचार उपलब्ध कराती हैं। हिन्दुस्तान समाचार, समाचार भारती आदि कुछ बड़ी न्यूज एजेंसियाँ जमाने की बदलती रफतार के साथ तालमेल न बिठा पाने के कारण बन्द भी हो चुकी हैं।

gorkysingh@gmail.com

डॉ. शुभ्रता मिश्रा

भारत का पहला
लाइकेन पार्क

अब तक 350 विज्ञान कथा और लेख लिखे। अंग्रेजी में पंद्रह तथा हिन्दी में पांच पुस्तकें लिखीं जिनमें 'भारतीय अंटार्कटिक संभारतंत्र' चर्चित। कई पुरस्कारों से सम्मानित।

भारत के उत्तराखंड राज्य के वन विभाग ने पिथौरागढ़ जिले में कुमाऊँ के मुनस्यारी क्षेत्र मेंदेश का पहला 'लाइकेन पार्क'स्थापित किया है, जिसे 27 जून 2020 को आम जनता के लिए खोल दिया गया है। मुनस्यारी क्षेत्र को जौहार क्षेत्र का प्रवेश द्वार कहा जाता है, क्योंकि मुनस्यारी तहसील के उत्तर पूर्व में गोरी नदी की घाटी से लगी जौहार धाटी के क्षेत्र को जौहार क्षेत्र कहा जाता है। भौगोलिक स्थिति के आधार पर गोरी नदी की शीर्ष उपत्यका को मल्ला जौहार तथा रामगंगा की शीर्ष उपत्यका को तल्ला जौहार क्षेत्र के नाम से जाना जाता है। सम्पूर्ण जौहार क्षेत्र समुद्रतल से 2200 मीटर से लेकर 4500 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है और इसी जगह लगभग दो एकड़ क्षेत्र में वन अनुसन्धान केंद्र हल्द्वानी द्वारा भारत का यह पहला लाइकेन पार्क विकसित किया गया है। लाइकेन को जुरासिक युग का जीवित जीवाश्म माना जाता है। मुख्य वन संरक्षक (अनुसंधान प्रकोष्ठ) संजीव चतुर्वेदी के मार्गदर्शन में विकसित किए गए इस पार्क को तैयार करने की परियोजना का काम जुलाई 2019 में स्वीकृति मिलने के बाद शुरू हो गया था।

इस परियोजना के बहुआयामी उद्देश्यों में उत्तराखंड में मिलने वाली विभिन्न लाइकेन प्रजातियों के वितरण, उनके निवास, उनके संरचनात्मक और क्रियात्मक गुणों, शोध,सर्वेक्षणों आदि की समीक्षा, प्रजातियों का संस्थापन, लाइकेनों के प्रति मानव जाति और जलवायु कारकों सहित विविध प्रतिकूल वातावरणीय खतरों का अध्ययन और उपयुक्त संरक्षण रणनीतियां तैयार करना शामिल था। फलतः मुनस्यारी क्षेत्र में लाइकेन की रक्षा, संरक्षण और खेती करने के उद्देश्य से उत्तराखंड के वन विभाग ने लाइकेन पार्क को जहां अनुसंधान केंद्र के रूप में विकसित किया है, वहीं इससे स्थानीय लोगों को आजीविका में सहायता भी मिल सकती है। देश के इस पहले लाइकेन पार्क में प्रवेश हेतु स्थानीय लोगों के लिए 25 रुपए और छात्रों के लिए दस रुपए प्रवेश शुल्क रखा गया है। इसके अलावा उत्तराखंड के शोधार्थियों को अनुसंधान हेतु 800 रुपए प्रतिवर्ष और राज्य से बाहरी शोधार्थियों के लिए 1000 रुपए प्रतिवर्ष का शुल्क निर्धारित किया गया है।

वनस्पति विज्ञान की दृष्टि से लाइकेन असाधारण पादपों का एक ऐसा समूह है, जिसमें शैवाल और कवक अत्यंत घनिष्ठ सहजीवी के रूप में रहते हैं। इनके शैवालीय घटक को शैवलांश तथा कवकीय धटक को कवकांश कहते हैं। लाइकेन शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग ग्रीक दार्शनिक थियोफ्रेस्टस ने किया था। लाइकेन का अध्ययन लाइकेनॉलॉजी कहलाता है। यद्यपि ये अधिकतर धवल रंग के होते हैं, तथापि लाल, नारंगी, बैंगनी, नीले एवं भूरे तथा अन्य चित्ताकर्षक रंगों के लाइकेन भी पाए जाते हैं। सर्वप्रथम श्वेडेनर ने 1867-68 ई। में यह प्रमाणित किया था कि लाइकेन वास्तव में ऐसे शैवाल हैं जिनमें कवक तंतु उलझे रहते हैं। इसके परीक्षण हेतु उपयुक्त शैवाल तथा कवक को मिलाकर लाइकेन का संश्लेषण किया गया था। यदि लाइकेन के दोनों जीवभाग अलग अलग कर दिए जाएं तो शैवाल भाग स्वतंत्र जीवनयापन कर सकता है, किंतु अनाश्रित होने पर कवक भाग जीवित नहीं रह सकता। यदि शैवाल को अलग से देखा जाए तोउसका रंग तथा अन्य गुण लाइकेन के गुणों से अलग होंगे, और यदि शैवाल के साथ कवक को मिला दिया जाए तो न तो उसका रंग वह रहेगा और न ही उसके अन्य गुण समान रहेंगे।

लाइकेन की द्विगुणधर्मिता के कारण बेसे नामक वनस्पतिज्ञ ने 1950 में इनको एस्कोमाइसिटीज़ वर्ग के लिकेनोरेल्स वंश में रखा था, जबकि बोल्ड ने 1959 में इन्हें एक नया नाम माइकोफाइकोफाइटा दिया था। हांलाकि लाइकेन के गुण शैवाल तथा कवक दोनों से भिन्न होते हैं। सभी लाइकेन अधिपादप होते हैं, जो अपने परपोषीपर मात्र सहारेके लिए ही आश्रित होते हैं। लाइकेन सहजीवन में अधिकांशतः कवक ही होता है, जो शैवालवाले अंग के ऊपर एक थैले की भाँति आवरण होता है तथा थैलस के आकार के लिए उत्तरदायी होता है। लाइकेन का मुख्य भाग कवक तंतुओं से ही निर्मित होता है, जो रेशों का एक जाल सा बना होता है। इस जाल में प्रायः ऐस्कोमाइ- सिटीज़ वर्ग के कवक होते हैं। परंतु कभी कभी कुछ लाइकेन में कवक

बेसिडियोमाइसिटीज़वर्ग के भी होते हैं। लाइकेन के ऊपरी स्तर में इन कवक तंतुओं से हरे रंग के क्लोरोफाइसी वर्गया नीले हरे रंग के मिक्सोफ़ाइसी वर्ग के शैवाल मिश्रित होते हैं। ये नीले-हरे रंग के शैवाल एककोशिक तथा बहुकोशिक तंतुवत् होते हैं, जिनमें प्रायः क्रोओकॉकस, साइटोनेमा अथवा नॉस्टॉक आदि होते हैं।

कवक के भाग और स्वरूप के अनुसार लाइकेन को दो वर्गों में विभाजित किया गया है : पहला ऐस्कोलाइकेनीज़, जिसमें कवक भाग ऐस्कोमाइसिटीज़ वर्ग का एकक होता है और दूसरा बेसिडियोलाइकेनीज़, जिसमें कवक भाग बेसिडियोमाइसिटीज़ वर्ग का एकक होता है। ऐस्कोलाइकेनीज़ को उसके फलकाय की संरचना के आधार पर पुनः दो भागों में विभाजित किया जाता हैः पहला पलिधकाय, जिसमें फलकाय पेरीथीसियम तथा दूसरा विवृतकाय, जिसमें फलकाय भाग विवृतकाय ऐपोथीसियम होता है।

समस्त विश्व में लाइकेन उच्च अल्पाइन ऊँचाई से लेकर समुद्र तल की गहराई तक विद्यमान हैं और लगभग किसी भी परिस्थिति और आधार में वृद्धि करने की क्षमता रखते हैं। अधिकांश लाइकेन ताप की चरम सीमाओं में भी जीवित रहने में समर्थ होते हैं। अतः ये ऐसे क्षेत्रों में प्रचुरता से पाए जाते हैं, जहाँ साधरणतया अन्य वनस्पतियाँ नहीं उग सकतीं। ये समुद्री तल से अधिक ऊँचाई पर उष्ण प्रदेश, ध्रुव प्रदेश, रेगिस्तान एवं जलीय स्थानों पर पाए जाते हैं। इस तरह लाइकेन विभिन्न प्रकार के आधारों पर उगते हुए पाए जाते हैं। इन आधारों में वृक्षों की पत्तियाँ एवं छाल, प्राचीन दीवारें, भूतल, चट्टान और शिलाएँ मुख्य हैं। वृक्षों की छालों पर उगने वाले लाइकेन को वल्कारोही या कोर्टीकोल्स तथा चट्टानों पर उगने वाले लाइकेन को शैलारोही या सेक्सीकोल्स कहते हैं। इनके बड़े वर्गों में छोटे छोटे समुदाय मिलते हैं, जिनका विभाजन छाल की प्रकृति, मिट्टी के स्वरूप, चट्टान की विशेषता तथा ताप, आर्द्रता एवं अनावरण पर निर्भर होता है। अधिक ठंडी जलवायु में लाइकेन शैलारोही बन जाते हैं, वहीं भूमध्यरेखिक क्षेत्रों में ये वल्कारोही ही रहते हैं। कुछ लाइकेन स्थलारोही और कुछ समुद्रारोही भी होते हैं। यद्यपि लाइकेन के उगने के लिए

प्रकाश आवश्यक है, तथापि कुछ प्रजातियां ऐसे स्थानों में भी उग सकती हैं, जहाँ पूर्णतया अंधकार होता है, जैसे फिसिआ घ्स्क्यूरा। लाइकेन की शारीरिक संरचना का रंग प्रकाश की किरणों की तीव्रता पर निर्भर होता है।

कोई भी कवक, शैवाल के साथ मिलकर लाइकेन का निर्माण कर सकते हैं, यही कारण है कि पूरी दुनिया में लगभग 80 वंशों के अंतर्गत लाइकेन की कुल 20,000 प्रजातियां पाई जाती हैं। इनमें से 2714 प्रजातियां भारत में पायी जाती हैं। भारत में लाइकेन की लगभग 386 प्रजातियां जम्मू और कश्मीर, 503 प्रजातियां हिमाचलप्रदेश और सबसे अधिक लगभग 600 प्रजातियां उत्तराखंड में पायी जाती हैं। ये सभी लाइकेन उत्तराखंड के मुनस्यारी, बागेश्वर, पिथौरागढ़, रामनगर, नैनीताल, देहरादून, चमोली और चम्पावत में मिलते हैं। उत्तराखंड में पाई जाने वाली कुछ प्रमुख लाइकेन प्रजातियाँ में परमोट्रीमा परटेटम, अस्नीया लॉगनीसीमा, लीकेनोरा सबफ्यूसीसीन्स, सारकोगाइना प्रिविज्ना, आर्थोनिया इंपोलिटेला, अकेरोस्पोरा फ्युस्का, अकेरोस्पोरा ऑक्सीटोना और पॉलीस्पोरिना दुबिया शामिल हैं।

उत्तराखंड छः माह हिमाच्छादित रहने वाली ऊर्ध्व पर्वत श्रेणियों, वनस्पतियों से समृद्ध निचली पर्वत श्रेणियों और नदी घाटियों जैसी तीन प्राकृतिक श्रेणियों में विभाजित है। यहां हिमालय में 5000 मीटर तक की ऊँचाई पर

उगने वाली लाइकेन की महत्वपूर्ण प्रजातियां उगती हैं। उत्तराखंड प्रदेश में 3000 मीटर की ऊँचाई तक वृक्षों की सधनता मिलती है और 3000 से 4000 मीटर के बीच बुग्याल क्षेत्रशुरु हो जाते हैं। उत्तराखण्ड के गढ़वाल हिमालय में हिमशिखरों की तलहटी में जहाँ वृक्ष रेखा अर्थात् वृक्षों की पंक्तियां समाप्त हो जाती हैं, वहां से हरी मखमली धास के मैदान आरम्भ होने लगते हैं। आमतौर पर ये 2400 से ३००० मीटर की ऊँचाई पर स्थित होते हैं। गढ़वाल हिमालय में इन मैदानों को बुग्याल कहा जाता है। बुग्याल हिम रेखा और वृक्ष रेखा के बीच का क्षेत्र होता है। उसके बाद लाइकेन की दुर्लभ प्रजातियां मिलनी शुरु होती हैं।

उत्तराखंड के नीति धाटी, तपोवन व चकराता के जंगलों में लाइकेन सबसे अधिक हैं। स्थानीय भाषा में लाइकेन को झूलाघास या 'पत्थर के फूल' भी कहते हैं। उत्तराखंड में जब बहुत बढ़िया बर्फवारी होती है, तब ओक (बांज) के वृक्ष पर लगने वाली झूला धास यानी लाइकेन काफी मात्रा में दिखाई देने लगती है। मध्य हिमालयी क्षेत्र में ओक की विभिन्न प्रजातियां (बांज, तिलौंज, रियांज व खरसू आदि) 1200 मीटर से लेकर 3500 मीटर की ऊंचाई के मध्य स्थानीय जलवायु, मिट्टी व ढाल की दिशा के अनुरुप पायी जाती हैं। ओक को उत्तराखंड का हरा सोना कहा जाता है। ओक वृक्ष के तने व शाखाओं में ऑरकिड, मॉस, फर्न और लाइकेनखूब फलते फूलते हैं। उत्तराखंड की पहाड़ियों से प्रतिवर्ष लगभग 750 मीट्रिक टन लाइकेन एकत्र किया जाता है, जिसे उत्तराखंड वन विकास निगम के तीन हर्बल मंडियों में खुली नीलामी के माध्यम से बेचा जाता है। लाइकेन में एंटीसेप्टिक और एंटीबेक्टीरिया जैसे औषधीय गुण भी होते हैं। इस कारण कुमाउं के रामनगर व टनकपुर से इसकी अवैध तस्करी की बातें भी सामने आती रहती हैं।

उत्तराखंड की केवल कुमाँऊ की पहाडियों में ही देखा जाए तो लाइकेन की 158 प्रजातियां पाई जाती हैं। इनमें से लगभग 60 प्रतिशत प्रजातियां ऐसी हैं जो मुनस्यारी में पाई जाती हैं। मुनस्यारी के खलियाटॉप ट्रैक में लाइकेन की 100 से अधिक प्रजातियां हैं। यही कारण है कि बर्फ से ढंकी चोटियों से धिरे

पिथौरागढ़ के मुनस्यारी क्षेत्र का चुनाव लाइकेन पार्क विकसित करने के लिये इसलिये किया गया क्योंकि यह क्षेत्र लाइकेन के पनपने के लिये बेहद अनुकूल पाया गया। भारत के इस पहले लाइकेन पार्क में भी लाइकेन की 80 से अधिक प्रजातियां उगाई गई हैं। हांलाकि प्रायः सभी लाइकेन प्रजातियों की सामान्य शारीरिक संरचना बाहरीतौर पर एक समान ही दिखती है, परंतु आंतरिक रुप से उनमें कई संरचनात्मक भिन्नताएं देखने को मिलती हैं। सामान्यतः लाइकेन के शरीर को थैलस कहते हैं, जो पूर्णतया जड़, पत्ती और शाखारहित होता है। थैलस के आकार एवं संरचना के आधार पर लाइकेन को हॉक्सवर्थ एवं हिल ने 1984 में पांच श्रेणियोंलेप्रोज, क्रस्टोस, फोलिओज, फ्रूटीकोज और फिलामेंटस लाइकेन में विभाजित किया है।

लेप्रोज सबसे सरल थैलस वाले लाइकेन होते हैं, इनमें कवकीय तंतुओं से बने जाल के अंदर कुछ या कभी-कभी केवल एक शैवाल कोशा ही होती है। इनमें कवकीय परत पूरे शैवाल को नहीं धेरती है। इस तरह बने अतिसाधारण लाइकेन आधार के ऊपर सतही तौर पर चिपके रहते हैं और सतह पर बिखरे हरे पावडर की भांति लगते हैं। इसे ही लेप्रोस लाइकेन कहते हैं। इसका सबसे उत्तम उदाहरण लेपरेरिया इंकाना लाइकेन है।

क्रस्टोस या पर्पटीमय प्रकार केलाइकेन का थैलस चपटा और थोड़ा उठा हुआ होता है। ऐसे लाइकेन पतले तथा लम्बे आधार वाले होते हैं ये लाइकेन वृक्ष की छालया शिलाओं से चिपके हुए उगते हैं। इनमें अधिकांश का तो कुछ भाग आधार के भीतर होता है। ये आधार पर अपने ऊपरी सतह पर लगे फलकायों के कारण भूरे रंग की धारियों तथा बिंदुओं की भाँति दिखाई देते हैं। इनकी विभिन्न प्रजातियाँ आधार के रंग से मिलती हैं, अतः ये चट्टानों के समान ही दिखाई देती हैं। क्रस्टोस लाइकेन की आंतरिक संरचना में अधः वल्कुट नहीं होता है। क्रस्टोस लाइकेन को उनके आधार से आसानी से नहीं अलग किया जा सकता है। ग्रेफिस स्क्रिप्टा, लेसीडिया, वेरुकैरिया आदि प्रमुख क्रस्टोस लाइकेन प्रजातियां हैं।

फोलिओज या पर्णिल लाइकेन के थैलस में शाखित पत्तियों के समान अतिवृद्धियाँ होती

हैं। प्रायः फोलिओज लाइकेन मुड़ी हुई पत्ती की भाँति होते हैं, जिनमें आरोह अवरोह होते हैं। ये पतले पतले मूलाभासों की सहायता से शिलाओंया शाखाओं से चिपके रहते हैं। मूलाभास इनके निचले भागों से निकलते हैं। अधिकांश फोलिओज लाइकेन की आंतरिक संरचना चार ऊतकों क्रमशः बाहरी कॉर्टेक्स, गोनीडियल, मैडुला और आंतरिक कॉर्टेक्स में विभक्त होती है। बाहरी कॉर्टेक्स या वल्कुट प्रायः उदग्र कवच सूत्रों से निर्मित होती है, जिनके बीच बीच में, या तो रिक्त स्थान नहीं होते और यदि होते हैं तो वे श्लेषी सामग्री से भरे होते हैं। इसके ठीक नीचे गोनीडियल स्तर होता है, जिसे कणीस्तर भी कहते हैं। इसमें शैवाल की हरी कोशिकाएँ उलझे हुए कवक तंतुओं में मिली रहती हैं। इसके नीचे मेडुला या मज्जा होती है और यह शिथिल तथा उलझे हुए कवक तंतुओं से बनी होती है। सबसे भीतर आंतरिक कॉर्टेक्स या अधः वल्कुट होता है, जोधने कवक तंतुओं से निर्मित होता है। आंतरिक कॉर्टेक्स के निचले भाग से मूलाभास निकले होते हैं। ये थैलस को आधार से जोड़ने का काम करते हैं तथा साथ ही खनिज लवण और जल का संवहन करते हैं। इन लाइकेन के मुख्य उदाहरण फिसिआ, परमेलिया, पेलटीडिआ लाइकेन हैं।

फ्रूटीकोज या क्षुपिल लाइकेन के थैलस काफी विकसित होते हैं तथा इनमें जनन अंग उपस्थित होते हैं। फ्रूटीकोज लाइकेन अत्यधिक विभाजित बेलनाकार तथा फीते की भांति होते हैं, जो अपने अधःस्तर से आधारिक भाग द्वारा ऊर्ध्वाधर दिशा में ध्वजा की भाँति जुड़े होते हैं। फ्रूटीकोज लाइकेन के थैलस में अधिकांशतः बाहरीकॉर्टेक्स, उसके नीचे शैवाल स्तर तथा उसके नीचे एक मेडुला अक्ष होता है। ये लाइकेन किसी छोटी सी झाड़ी की तरह दिखाई देते हैं। अस्निआ, क्लेडोनिआ, एवेरीनिआ आदि इनके उदाहरण हैं।

फिलामेंटस या सूत्रीय लाइकेन में कवकीय भाग की तुलना में शैवालीय भाग अधिक विकसित होता है। ये शैवलांश सूत्रीय शैवाल होते हैं जो अनावरणित होते हैं या कभी कभी बहुत ही कम कवकीय तंतुओं द्वारा आवरणित होते हैं। कोएनोगोनियम, सिस्टोकोलियस, रेकोडियम फिलामेंटस लाइकेन के प्रमुख उदाहरण हैं।

उपर्युक्त सभी प्रकार के लाइकेन बहुत ही धीमी गति से वृद्धि करते हैं। लाइकेन में प्रजनन के तीन प्रकार कायिक, लैंगिक तथा अलैंगिक पाए जाते हैं। लाइकेन का कोई भी पृथक् हुआ भाग उचित वातावरण में स्वंत्रतापूर्वक बढ़ सकता है। कुछ लाइकेन में शाखाओं की भाँति उर्द्धवृद्धियाँ होती हैं, जिनमें शैवाल तथा कवक दोनों ही के अंश होते हैं। ये उद्वर्ध आसानी से पृथक् हो जाते हैं और उचित वातावरण में नए पौधों को जन्म देते हैं। लाइकेन के संवर्धन के अतिरिक्त संधटक कवक और शैवाल भी स्वेच्छया पृथक जनन करते हैं।

कुछ लाइकेन जनन के लिए एक विशेष प्रकार के अंग बनाते हैं, जिन्हें सोरिडिया कहते हैं। ये थैलस के छोटे छोटे भाग होते हैं, जिनमें एक या दो शैवाल कोशिकाएँ कवक तंतुओं द्वारा आवरित होती हैं। यह पैतृक थैलसों से टूटने के पश्चात् वायु, वर्षा या जंतुओं द्वारा उचित वातावरण में पहुँचकर नवीन लाइकेन बनाते हैं। इनके लाइकेन के दोनों संधटक शैवाल तथा कवक की संतुलित वृद्धि होती है।

बहुत से लाइकेनों में कवक नियमित रूप से ऐस्कोकार्प तथा धानी बनाते हैं, जिनका रूप पेरीथीसियम, ऐपोथीसियमया अन्य प्रकार का होता है। ये फलकाय अधिक रंगीन और चमकीले होते हैं। उदाहरण के लिए क्लैडोनिया क्रिस्टाटेलाकी आरोही शाखाओं की लाल अग्र धानियों का एक समूह होता है। अनुरूप अवस्था में धानीबीजाणु अंकुरित होकर, एक सूत्र को जन्म देते हैं और यदि यह सूत्र किसी ऐसी शैवाल कोशिकाओं के समीप आ जाए जिनसे यह लाइकेन से संबंधित था तो एक नए लाइकेन थैलस का संश्लेषण हो जाता है। यदि उगते हुए कवक जाल को अनुकूल शैवाल नहीं मिलता, तो इसकी मृत्यु हो जाती है। इस कारण यह संदिग्ध है कि धानीबीजाणु लाइकेन के संवर्धन में महत्वपूर्ण कार्य करते हैं, या नहीं। यह सुनिश्चित है कि लाइकेन जनन में

खंडनतथा सोरिडिया का बनना अधिक महत्वपूर्ण होता है।

लाइकेन के थैलस के सूखने पर शैवाल कोशिकाओं का हरा रंग कवक सूत्रों से छिपे रहने के कारण अस्पष्ट हो जाता है। आर्द्र लाइकेन का रंग हरा होता है, क्योंकि इसके अंदर स्थित शैवालों द्वारा प्रकाश संश्लेषण होने से इस भाग का हरा रंग स्पष्ट हो जाता है। कई लाइकेनों का रंग विशेष चित्ताकर्षक होता है। ये रंग विभिन्न कार्बनिक अम्लों के कारण होते हैं, जो लाइकेनों को दृढ़ता से आधार पर स्थिर बने रहने में सहायक होते हैं। कवक जल, खनिज-लवण, विटामिन्स आदि शैवाल को देता है और शैवाल प्रकाश संश्लेषणकी क्रिया द्वारा कार्बोहाइड्रेट का निर्माण कर कवक को देता है। कवक तथा शैवाल के बीच इस तरह के सहजीवी संबंध को ही हेलोटिज्म कहते हैं।

लाइकेन आर्थिक और प्राकृतिक दोनों दृष्टिकोणों से बहुत महत्वपूर्ण माने जाते हैं। लाइकेन की कई प्रजातियाँ छोटे छोटे जंतुओं और कुछ जंगली पशुओं के लिए मूल्यवान भोजन होती हैं। कई लाइकेन खाद्य पदार्थ के रूप में लोगों द्वारा भी प्रयोग किए जाते हैं। साधारणतया लाइकेन अपने अम्लीय और कटुस्वाद के कारण मानव भोजन के लिए अनुपयुक्त होते हैं। क्लेडोनिया को आर्कटिक में भोजन के रूप में प्रयोग किया जाता है। लैपलैंड, आइसलैंड तथा अन्य उपोत्तरध्रुवीय प्रदेशों के अतिरिक्त भारत, जापान एवं अन्य देशों में क्लेडोनिया को काफी मात्रा में सुखाकर मानव भोजन या गाय, भैंस, सूअर तथा घोड़ों के खाने लिए एकत्र किया जाता है। एक और लाइकेन प्रजाति जाइरोफोरा एस्क्यूलेंटा का उपयोग चीन और जापान में एक स्वादिष्ट खाद्य पदार्थ के रुप में किया जाता है। जापानी लोग इन्डोकार्पन नामक लाइकेन का उपयोग सब्जी के रूप में करते हैं। इसी तरह सेटरेरिया आइसलैंडिका एक बहुमूल्य खाद्य लाइकेन है, जिसका उपयोग आइसलैंड और स्कैडेनेविया में किया जाता है। दक्षिण भारत में परमेलिया लाइकेन को सालन बनाने में उपयोग किया जाता है।

इसके अतिरिक्त औषधीय रूप से लाइकेन को आयुर्वेदिक तथा यूनानी औषधी निर्माण में मुख्य रूप से प्रयुक्त किया जाता है, जिसमें लिकेन निर्मित चारिला तथा उष्णा

नामक दवाइयां भारतीय बाजार में काफी प्रसिद्ध हैं। असनिया नामक लाइकेन से प्रतिजैविक अर्थात् एंटीबॉयोटिक असनिक अम्ल प्राप्त किया जाता है। एंटीबॉयोटिक के रूप में लाइकेन का प्रयोग करने के लिए हर सम्भव शोधस्तरीय प्रयास किए जा रहे हैं। निकट भविष्य में लाइकेन आधारित एंटीबॉयोटिक्स दवाएं प्रयोग में लायी जा सकती हैं, क्योंकि वर्तमान जीवाणु-आधारित एंटीबॉयोटिक्स अब अप्रभावी होती जा रही हैं। डायरिया, हाइड्रोफोबिया, पीलिया, काली खाँसी आदि रोगों में उपयोगी कई प्रकार की औषधियाँ लाइकेन से बनायी जाती हैं। परमेलिया सेक्सटिलिस नामक लाइकेन का उपयोग मिरगी रोग की औषधि बनाने में होता है। प्रयोगशाला में प्रयुक्त होने वाले लिटमस पेपर रोसेला नामक लाइकेन से प्राप्त किए जाते हैं। आर्चिल और लिकेनोरानामक लाइकेन प्रजातियों से नीला रंग बनाया जाता है। लाइकेन की कुछ प्रजातियों जैसे लोबेरिया, इरवेनिया तथा रेमेनिला आदि में सुहावनी गंध होती है, अतः इनका उपयोग इत्र और साबुन बनाने के लिए किया जाता है।

प्रकृति में मृदा निर्माण की प्रक्रिया में लाइकेन बेहद सहायक होते हैं। पर्पटीमय लाइकेन अपने द्वारा निर्मित अम्लों की सहायता से चट्टानों के लावों को अपने अवशिष्ट के साथ मिलाकर एक प्रकार की मिट्टी बनाते हैं, जो मॉस यानी हरिता के बीजाणु के लिए अभिजनन स्थान बनता है और फिर पुष्पीय वनस्पतियों से इसका उपनिवेशन हो जाता है। पर्यावरण की दृष्टि से लाइकेन अहम् भूमिका निभाते हैं, क्योंकि ये जलवायु परिवर्तन, ग्लोबल वार्मिंग और वायु प्रदूषण के जैव संकेतक की भांति काम करते हैं। वायु प्रदूषण का पता लगाने और ग्रीन हाउस गैसों के संतुलन में भी लाइकेन का महत्वपूर्ण योगदान माना जाता है। जहां जलवायु में थोड़ा बहुत भी परिवर्तन होता है, तो लाइकेन वृद्धि करना बंद कर देते हैं, या फिर धीमी गति से बढ़ते हैं। कुछ लाइकेन उपजाऊ भूमि पर उगते हैं, जहाँ अन्य वनस्पतियाँ भी प्रचुर मात्रा में होती हैं। किंतु ये बड़े शहरों के पास कभी नहीं उग पाते, क्योंकि नगरों के आस पास के कारखानों का धुँआ तथा अन्य गैस आदि इनके लिए धातक होती हैं। ये वायु की स्वच्छता पर विशेष निर्भर करते हैं। केवल स्वच्छ वायु में ही लाइकेन की प्रचुर वृद्धि हो पाती है।

पिछले कुछ दशकों से पहाड़ी क्षेत्रों में लगातारबढ़ते पर्यटनके साथ-साथ वायु प्रदूषण भी बढ़ रहा है, जिससे लाइकेन की प्रजातियाँ कम होती जा रही हैं। अतः उत्तराखंड में लाइकेन पार्क बनाने का एक सबसे बड़ा कारण यह भी था। इसके अलावा, लाइकेन पार्क के बन जाने से लोगों को पारिस्थितिक तंत्र में लाइकेन उपयोगिता के साथ आजीविका के साधन के तौर पर उपयोग करने का भी पता चलेगा। पर्यावरण संरक्षण और जैव विविधता को बनाए रखने में लाइकेन की भूमिका को अब तक वनस्पतिशास्त्री ही समझते थे, लेकिन पार्क बनने से अब आमलोग भी इसे समझ सकेंगे। वैसे तो उत्तराखंड में स्थित मुनस्यारी क्षेत्र अपनी प्राकृतिक सुन्दरता के लिए पहले से ही जाना जाता है, और यह एक पर्यटन स्थल भी है, किन्तु लाइकेन पार्क के यहाँ स्थापित हो जाने से मुनस्यारी के पर्यटन को बढ़ावा मिल सकता है। हांलाकि इसके लिए एक सुरक्षित और कानूनी पर्यटन की आवश्यकता होगी, जिससे पार्क में संरक्षित लाइकेन प्रजातियों पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़ने पाए।

इस तरह हम कह सकते हैं कि लाइकेन मानव जीवन के लिए अपने अगणित गुणों के कारण बड़े उपयोगी हैं। इनकी अनुपस्थिति से पृथ्वी का एक बड़ा भाग निःसंदेहअनुर्वर एवं निर्जीव होता तथा कोई वनस्पति भी नहीं होती। अतः लाइकेन की अद्भुत महत्ता के प्रति जागरुक होने में लाइकेन पार्क विकसित करने जैसे प्रयास बेहद सराहनीय हैं। उत्तराखंड का यह लाइकेन पार्क पर्यावरण प्रेमियों और शोधकर्ताओं के लिए काफी उपयोगी साबित होगा।

shubhrataravi@gmail.com

हिन्दी कविता में विज्ञान

महावीर प्रसाद द्विवेदी

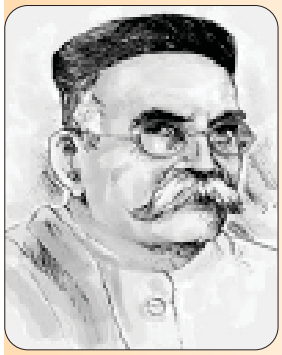

महावीर प्रसाद द्विवेदी एक ऐसे साहित्यकार थे जो बहुभाषाविद् होने के साथ ही साहित्य के इतर विषयों में समान रुचि रखते थे। उन्होंने अठारह वर्षों तक सरस्वती पत्रिका का संपादन कर हिन्दी पत्रकारिता में एक कीर्तिमान स्थापित किया था। वे पहले व्यवस्थित समालोचक थे। खड़ी बोली हिन्दी कविता के 'प्रारंभिक' और महत्वपूर्ण कवि के रूप में आपको जाना जाता है। भाषाशास्त्रीय, अनुवादक, रचनाकार, वैयाकरण, इतिहासज्ञ, अर्थशास्त्री होने के साथ-साथ विज्ञान में भी आपकी गहरी रुचि थी।

प्लेगस्तवराज

अथ पूजापद्धतिः। इस पूजा में प्लेग की आराधना करने वाले की अश्रुधारा पाद्य है। उसके कुटुंबियों की आँखें अर्घा हैं और उनसे गिरनेवाला जल अर्घ। दाँत पीसना अक्षत है। हाय हाय करते हुए ऊर्ध्व श्वास लेना धूप है। निराशा दीप है। दवाइयाँ पुष्प हैं। सन्निपातनाशक लेप चंदन है। बर्राना मधुपर्क है। घर की अथवा अस्पताल की चारपाई यूप (खूँटा) है। उसी रूप में, बलिदान क निमित्त, आशारूप रज्जू से प्राण-पशु बँधा है। औषधोपचार खंग है। डॉक्टर हाफकिन पुरोहित हैं।

•

अथ स्तवराजः। हे प्लेग! हे प्लेगराज! हे मारकासुर! आपको हम किस नाम से पुकारें? विष्णुसहस्रनाम के समान यदि एक प्लेग सहस्रनाम बनता तो भी आपके नामों की गणना निःशेष न होती। कोई आपको मरी कहता है; कोई विसर्प कहता है; कोई प्लेग कहता है; और कोई ग्रंथिक सन्निपात कहता है। परंतु ठीक-ठाक कोई नहीं कह सकता कि आप कौन हैं। रूप तो आपका समझ में आ गया है; परंतु नाम अभी तक किसी की समझ में नहीं आया। अतः है बोख़ार के आलू! हे बद के दादा! हे सन्निपात के प्रपितामह! आप तब तक यही नाम ग्रहण करें।

•

आप ब्रह्मा हैं। इसमें कोई संदेह नहीं। नहीं, नहीं, ब्रह्मा से भी आप बड़े हैं। ब्रह्मा बिचारे को उत्पन्न करना ही आता है; मारना नहीं आता; मार वह एक खटमल तक भी नहीं सकता। परंतु आप विलक्षण स्वयंभू देव-क्या दानव हैं। बिना सूचना के बिना पूर्व रूप के, अकस्मात, कुश्क में रूसी सेना के समान, आप प्रकट हो जाते हैं और एक-एक का संहार करते चले जाते हैं। अतः हे रुद्रब्रह्मरूपिणे युगपत् सृष्टिसंहारकारिणे तुभ्यं नामोऽस्तु।

•

हे ब्यूबानिक प्लेग! आप वामन-ओ, नो (O,no) त्रिविक्रम हैं। पहले आपने अपना बालस्वरूप बंबई में दिखलाया; फिर धीरे-धीरे पूना, शोलापुर, धारवाड़, बंगलौर, मदरास, कराची, पंजाब, नागपुर, कलकत्ता आदि तक बढ़कर अब पश्चिमोत्तर देश में भी आपने अपना पैर फैलाया है। परंतु याद रखिए; आपका आगे बढ़ना अच्छा नहीं। अधिक हौसला दिखलाने से सर अंटोनी मेकडानल रूपी बलि आपको सात समुद्र पार, महाप्रलय तक, अहोरात्र खड़ा रखेगा। अतः होशियार!

•

सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'

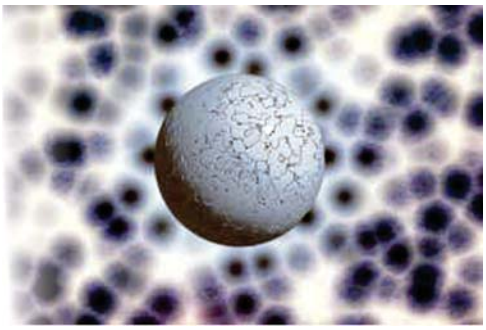

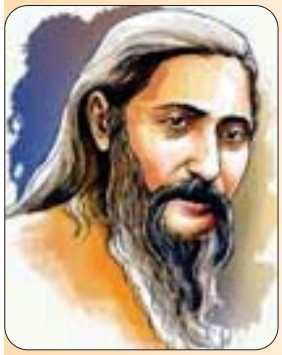

छायावाद के चार प्रमुख स्तंभों में से एक। नवगीत के उद्भावक और प्रवर्तक। कविता को छंद से मुक्त करने का श्रेय निराला को जाता है। निराला ने कविता में वैज्ञानिक ढंग से सृष्टि को लाने का प्रयास किया। उन्होंन सृष्टि के अभ्युदय के बारे में सोचा। निराला की विज्ञान में गहरी रुचि थी जिसके चलते उन्होंने शून्य और शक्ति, भू डोल का विज्ञान और वैज्ञानिक पत्र कला, वैज्ञानिक और धर्म, स्वास्थ्य और व्यायाम जैसे विज्ञान लेख लिखे।

कण

तुम हो अखिल विश्व में
या यह अखिल विश्व है तुममें
अथवा अखिल विश्व तुम एक
यद्यपि देख रहा हूँ तुममें भेद अनेक?
बिन्दु! विश्व के तुम कारण हो
या यह विश्व तुम्हारा कारण?
कार्य पंचभूतात्मक तुम हो
या कि तुम्हारे कार्य भूतगण?
आवर्तन-परिवर्तन के तुम नायक नीति-निधान
परिवर्तन ही या कि तुम्हारा
भाग्य-विधायक है बलवान?
पाया हाय न अब तक इसका भेद
सुलझी नहीं ग्रन्थि मेरी, कुछ मिटा न खेद!
कभी देखता अट्टालिका-विनोद मोद में
बैठे महाराज तुम दिव्य शरीर
कभी देखता, मार्ग-मृत्ति-कलिन गोद में
हो कहराते व्याधि-विशीर्ण अधीर;
कभी परागों में फुर-फुर उड़ते हो
और कभी आँधी में पड़ कुढ़ते हो
क्या जाने क्यों कभी हास्यमय
और कभी जब आता असमय
क्यों भरते दुःख नीर!
ताक रहे आकाश,
बीत गये कितने दिन-कितने मास!
विरह-विधुर उर में न मधुर आवेश
केवल शेष
क्षीण हुए अन्तर में है आभास
प्रिय-दर्शन की प्यास
ताक रहे आकाश
बीत गये कितने दिन-कितने मास!
पड़े हुए सहते हो अत्याचार
पद-पद पर सदियों के पद-प्रहार
बदले में पद में कोमलता लाते,
किन्तु हाय, वे तुम्हें नीच ही हैं कह जाते!
तुम्हें नहीं अभिमान,
छूटे कहीं न प्रिय का ध्यान
इससे सदा मौन रहते हो
क्यों रज, विरज के लिए ही इतना सहते हो?

बिजली का जीवन

जावक चरणों से जब शिंजन
होता है गृह के रुचिरांगन
कँपते हैं तरु तरुणों के तन।

छुटकर सम्पुट से कोटि सुमन
भर देते हैं केशर के कण
आर्द्रा के छा जाते हैं घन,
ढक जाता है नैदाघ तपन।

स्वर से होता है सन्दीपन
बनता है बिजली का जीवन,
बुझ-बुझकर होता है चेतन,
तम से जैसे रज, संवेदन।

सुमित्रानंदन पंत

'चिदम्बरा' नामक रचना के लिये 1968 में ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित। चिदम्बरा की अधिकांश कविताएँ विज्ञान कविता है। प्रस्तुत कविता भी इसी संग्रह में संकलित है। 'कला और बूढ़ा चांद' के लिये 1960 का साहित्य अकादमी पुरस्कार। इसके अलावा अनेकों प्रतिष्ठित सम्मान और पुरस्कार से सम्मानित।

युग उपकरण

वह जीवित संगीत, लीन हो जिसमें जग जीवन संघर्ष,
वह आदर्श, मनुज स्वभाव ही जिसका दोष-शुद्ध निष्कर्ष!
वह अन्तःसौन्दर्य, सहन कर सके बाह्य वैरूप्य विरोध,
सक्रिय अनुकंपा, न घृणा का करे घृणा से जो परिशोध!

नम्र शक्ति वह, जो सहिष्णु हो, निर्बल को बल करे प्रदान,
मूर्त प्रेम, मानव मानव हों जिसके लिए अभिन्न, समान,
वह पवित्रता, जगती के कलुषों से जो न रहे संत्रस्त,
वह सुख, जो सर्वत्र सभी के सुख के लिए रहे संन्यस्त!

ललित कला, कुत्सित कुरूप जग का जो रूप करे निर्माण,
वह दर्शन-विज्ञान, मनुजता का हो जिससे चिर कल्याण!
वह संस्कृति नव मानवता का जिसमें विकसित भव्य स्वरूप,
वह विश्वास, सुदुस्तर भव सागर में जो चिर ज्योति स्तूप!

रीति नीति, जो विश्व प्रगति में बने नहीं जड़ बंधन पाश,
-ऐसे उपकरणों से हो भव मानवता का पूर्ण विकास।

•

जड़ नहीं यंत्र : वे भाव रूप : संस्कृति द्योतक :
वे विश्व शिराएँ, निखिल सभ्यता के पोषक!
रेडियो, तार औ' फोन,-वाष्प-जल-वायुयान
मिट गया दिशाबधि का जिनसे व्यवधान मान,:
धावित जिनमें दिशि दिशि का मन,-वार्ता, विचार
संस्कृति, संगीत,-गगन में झंकृत निराकार!
जीवन सौन्दर्य प्रतीक यंत्र : जन के शिक्षक
युग क्रांति प्रवर्तक औ' भावी के पथ दर्शक!
वे कृत्रिम, निर्मित, नहीं जगत क्रम में विकसित,
मानव भी यंत्र, विविध युग स्थितियों में वर्धित!
दार्शनिक सत्य यह नहीं, -यंत्र मानव कृत,
वे हैं अमूर्त : जीवन विकास की कृति निश्चित

अज्ञेय

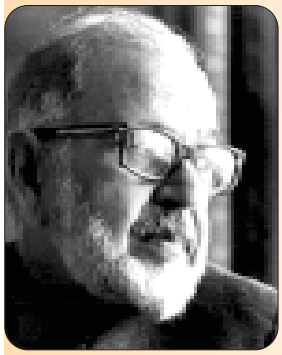

अज्ञेय लेखक कवि-कथाकार संपादक होने के साथ-साथ स्वतंत्रता सेनानी भी थे। वैज्ञानिक रूप से सेनानियों की गतिविधियों को पूर्णता की ओर ले जाने का जिम्मा साथी इन्हीं को सौंपते थे।

हिरोशिमा

एक दिन सहसा
सूरज निकला
अरे क्षितिज पर नहीं नगर के चौक :
धूप बरसी
पर अन्तरिक्ष से नहीं
फटी मिट्टी से।
छायाएँ मानव-जन की
दिशाहीन
सब ओर पड़ीं-वह सूरज
उनहीं उगा था पूरब में, वह
बरसा सहसा
बीचों-बीच नगर के :
काल-सूर्य के रथ के
पहियों के ज्यों अरे टूटकर
बिखर गए हों
दसों दिशा में।
कुछ क्षण का वह उदय-अस्त!
केवल एक प्रज्ज्वलित क्षण की
दृश्य सोख लेनेवाली दोपहरी।
फिर?
छायाएँ मानव जन की
नहीं मिटीं लम्बी हो-होकर :
मानव ही सब भाप हो गए।
छायाएँ तो अभी लिखी हैं
झुलसे हुए पत्थरों पर
उजड़ी सड़कों कीगच पर।
मानव का रचा हुआ सूरज
मानव को भाप बनाकर सोख गया।
पत्थर पर लिखी हुई यह
जली हुई छाया
मानव की साखी है।

नागार्जुन

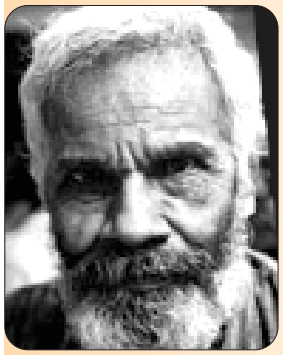

स्वभाव से घुमक्कड़ बाबा नागार्जुन सच्चे जनकवि थे। समाज और राजनीति पर उनकी पैनी नज़र होती थी। विज्ञान को कविता का आधार बनाने वाले बाबा नागार्जुन ने दूर बसे उन नक्षत्रों पर सरकाऊ सीढ़ियाँ और ऐटम बम जैसी विज्ञान कविताएँ लिखीं।

दूर बसे उन नक्षत्रों पर

दूर बसे उन नक्षत्रों पर
टहल-बूलकर
मानव वापस आ जाएँगे
ग्रह-उपग्रह अ-विजित न रहेंगे
अंतरिक्ष के उद्यानों में
निर्भय-निरांतक मानव-शिशु
निशि-दिन मुक्त-विहार करेंगे

जन्म-जन्म के अभिशापों से
त्रिशंकुओं को मुक्ति मिलेगी
सौ-सौ विश्वामित्र बनेंगे
नई सृष्टि के नए विधाता
कमल कुमुद, सेवंती, पाटल
चम्पक, बेला, गंधराज, गेंदा, परजात-
हर मौसम के फूल खिलेंगे, हर मौसम में
दिव्य धाम शोभित होंगे तब
दूर बसे नक्षत्रों पर

सच होगा सपना तब कवि-गुरु कालिदास का
''आँसू होंगे, सुख के होंगे,
सारी उम्र जवानी होगी
छेड़छाड़ होंगे प्रियतम के
और प्रिया के
वर्ना यों तो जनजीवन में कहीं
कलह का नाम न होगा
सबके सब धनपति ही होंगे...''
लगता है, अब कालिदास का यक्ष
चाँद को छू आया है
साथ गई थी प्रिया यक्षिणी...
अंतरिक्ष-नाविक नव दम्पति
मानवता की मानस-प्रतिमा के वे युग्मक
लिये गोद में घन-कुरंग शिशु
उज्जयिनि के महाकाल की
परिक्रमा करने आए हैं!

दूर बसे उन नक्षत्रों से
ज्योतिरीश्वरी नभ-गंगा के
चल पुलिनों से
जाने वे क्या-क्या लाए हैं!!

गजानंन माधव 'मुक्तिबोध'

आधुनिक कवियों में सबसे अधिक वैज्ञानिक चेतना और विज्ञान मुक्तिबोध की कविताओं में ही मिलता है। मुक्तिबोध ने कई विज्ञान लेख भी लिखें है। विज्ञान के आविष्कारों को वे पूँजीवाद के हाथ में सौंप देने के विराधी थे।

आज जो चमकदार प्रज्ज्वलित

आज जो चमकदार प्रज्ज्वलित
गैस के महाद्वीप
शून्य में बहुत दूर
दीखते हैं
उन्हीं में
शनैः-शनैः
गोल-गोल
अपने ही आस-पास घूमते हुए
बन रहे नक्षत्र
सूर्य
और तारिकाएँ !!
किन्तु इस नि-सीम अखण्ड
शून्य में
स्थान-स्थान
कई जगह
मरे हुए ग्रह और
ठण्डे पड़े नभ-पिण्ड
तैरते हैं प्रेत शत आकाशी द्रव के।
एक ओर
कीर्तिमान कष्टों के बीच
ने जन्म का समारोह
अन्य ओर
मृत्यु के पथ पर
बढ़ते हैं दबंग बूढ़े हुए सितारे।
जोर-शोर तुम्हारा
व तिकड़में तुम्हारी
बताती हैं सिर्फ चन्द दिनों के
हैं अंगारे तुम्हारे
असीम शून्य की सियाह
गुहाओं में
तुम भी एक मटमैला अणु बन
डूब जाओगे।
जोर-शोर तुम्हारे
तिकड़में तुम्हारी
व दाँव-पेंच तुम्हारे
हारे हुए आदमी की पराजय-भावना के
अजस्र प्रमाण हैं!!
मृत्यु का
खुला हुआ स-दन्त मुखद्वार
बढ़ रहा तुम्हारी ही तरफ़ है आजकल
ढाल नहीं सकोगे
मुश्किल उसे टालना।

गिरिजा कुमार माथुर

वैज्ञानिक चेतना सम्पन्न कवि गिरिजा कुमार माथुर के 'कल्पान्तर' नामक कविता संग्रह में सभी कविताएँ विज्ञान केंद्रित हैं। अन्य कृतियों में मंजीर, नाश और निर्माण, धूप के धान, जनम कैद, मुझे और अभी कहना है, शिलापंख चमकीले, जो बंध नहीं सका, मैं वक्त के हूँ सामने, भीतरी नदी की यात्रा, छाया मत छूना मन।
आलोचना और गद्य की कई कृतियाँ प्रकाशित।
सम्मान : शलाका सम्मान, साहित्य अकादमी पुरस्कार।

इस विराट् सृष्टि में कितने

इस विराट् सृष्टि में कितने
चलते पहिये चमक रहे हैं
अन्तरिक्ष की स्याह गोद में
अनगिन हीरे दमक रहे हैं

दूर स्वप्न सी उड़ती जातीं
पंख पसारे नभ - गंगाएं
अनहोने जीवन-रूपों की
लिये अनोखी जन्म-कथाएं

एक बड़े प्राकृतिक नियम के
पेड़ हुए हैं ताने-बाने
हम न अकेले, साथ सभी हैं-
यद्यपि अलग और अनजाने
कितने लंबे कठिन यक्ष से
उदित हुआ पृथ्वी पर जीवन
कितनी घोर तपस्या पर है
मिला भाव-भीना मानव मन

बने, मिटे कितने स्वरूप
वानर से नर तक आते-आते
अभी बहुत सोपान शेष हैं
पशुता से शिवता तक जाते

अधो-जंतु से महत भाव के
द्वंद्वों में बीते मन्वंतर
जितना हुआ श्रेष्ठतर मानव
उतने हुए नये कल्पांतर

•

आज सुनाते हैं हम गाथा कोटि युगों की
अंधकार से महा ज्योति के संघर्षों की
नक्षत्रों में लिखी कथा पृथ्वी के मन की
यह गाथा है इतिहासों के आवर्तन की

अंध गुहा-जीवन में
अग्नि खोज लाने की
कुपित प्रकृति को
अपने वश करते जाने की

पशु की छोड़ क्रूरता
मानव गुण पाने की
रोग, शोक, लिप्सा, विनाश के
मिट जाने की

और परिष्कृत होते हुए मूल्य-मानों की
आने वाले और श्रेष्ठतर इंसानों की!
नीले आसमान में झिलमिल
अनगिन तारे बोल रहे हैं
लगता है जैसे जीवन के
अर्थों को वे खोल रहे हैं
सुनो कि तारे बोल रहे हैं!

प्रयाग नारायण त्रिपाठी

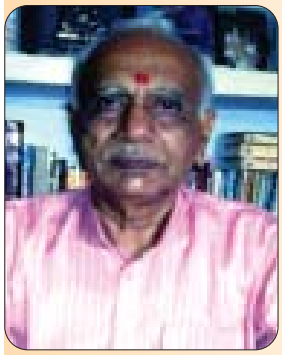

प्रयाग नारायण त्रिपाठी ने तत्वशास्त्र या 'मटेरियल साइंस' पर कविताएँ लिखने के साथ ही ज्यामिति पर भी अनेक कविताएँ लिखी हैं। अज्ञेय द्वारा संपादित तार सप्तक में कविताएँ सम्मिलित। रामायण, गीता, उपनिषद् आदि पर व्याख्यान। इलाहाबाद में अंग्रेजी से एम.ए. करने के बाद सर्वे विभाग में नौकरी की। बाद में दैनिक प्रताप में संपादक हुए। 1950 से भारत सरकार के सूचना मंत्रालय में संपादक रहे।

मैं बिन्दु

मैं नहीं हूँ
यह त्रिभुज, यह चतुर्भुज, यह वृत्त
त्रिविध अथवा विविध
रेखा-पराजित
एक भी आकार
सुन्दर, स्पष्ट
किन्तु सीमा रुद्ध, स्वयमाबद्ध
बिन्दु हूँ मैं
मात्र केन्द्राभास : वह जो
हर असीम ससीम का
हर प, हर आकार का विस्तार
प्राणाधार,
फिर भी चि-अरूप, अमाप
अपनी मुक्ति में सन्नद्ध।

आतशी शीशा

कौन?
सौदागर?
कहो-
क्या बेचते हो?
जी-यही-बस आतशी शीशा-
बड़े ही काम का है
जब, जहाँ भी जाइए
बिन आग, आग लगाइए
बस चिलचिलाती धूप में
इस को-ज़रा इस रूप में
सूरज तरफ़ कर
कभी नीचे, कभी ऊपर,
बिन्दु 'फ़ोकल' खोज लीजे :
मौज लीजे-
सभी कुछ सुलगाइए।

समानान्तर लकीरें

मैं अभी तक भी न छू पाया तुम्हें
क्योंकि ढह पायी नहीं
अब तक
हमारे बीच की कुछ भीतियाँ
यद्यपि बहुत झीनी
पवन-सी क्षीण

अपरिचित की एक थी :
वह ढह चुकी है-
कर चुकी है दृष्टि को छू दृष्टि

परिचित खूब :
पर अभी हैं और भी :
जैसे कि कातरता-
(कि आत्मा की अटल जो माँग,
तुम बस खोजती रहती
उसी से भागने की राह)-

और संशय
(यह कि पीपर-पात-सा
चल है पुरुष-मन)
और भय
(क्षुद जग!)

और शायद पाप
(क्योंकि केवल
ग्रन्थि-बन्धन-दम्भ ही है
पुण्य की ध्रुव माप!
जय हो! धन्य)।

विपिन जोशी

छायावादोत्तर कवि-गीतकार में आपका उल्लेखनीय नाम है। खगोल विज्ञान तथा आविष्कारों पर आपने कई कविताएँ लिखी हैं।
साधना के स्वर, छन्दों की छाँह प्रसिद्ध कृतियाँ हैं। उन्होंने छन्दमुक्त कविताएँ भी लिखीं। राष्ट्रकवि माखनलाल चतुर्वेदी ने उनके बारे में कहा था कि विपिन जोशी के गीत न केवल मध्यप्रदेश की किन्तु हिन्दी संसार की निधि हैं। विपिन जोशी ने अपने गीतों में विज्ञान को खासी तरजीह दी है।

लाइका

खबर मिली है-
चन्द्रलोक की प्रथम प्रवासी,
भैरव के वाहन की रानी
लाइका, लेका या लिमेचका की
प्रवास में (या प्रयास में) मृत्यु हो गई!

नहीं, ब्रह्म-पद प्राप्ति हो गई!
मृत्यु एक दिन होना ही है;
आगे-पीछे का अन्तर है,
काल पन्थ के सब राही हैं!

किन्तु- मृत्यु के दो प्रकार हैं,
लक्ष्य-सिद्धि पर प्राण चढ़ाना,
एक मृत्यु है!
और-
रोग से सड़-सड़ कर
गल-गल कर
अपने प्राण गवाना
मृत्यु दूसरी!

तो क्या लाइका
सहज मृत्यु को प्राप्त हुई है?
हो सकता है, हो सकता है,
अथवा शायद लाइका मरने से
कुछ पहले
तड़पी होगी, उछली होगी,
कूदी होगी, इधर-उधर टकराई होगी,
लहू-लुहान हो गई होगी,
मृत्यु-दूत के
पास फटकने के
पहले वह भौंकी होगी,
उन्मन-उन्मन
आकुल-व्याकुल-सी
होकर घबराई होगी,
अपनी भाषा में
शायद गाली भी दी होगी;
और अन्त में मायूसी से
अपनी आँखे मूंदी होंगी,
अन्तिम सांसें छोड़ी होंगी!

यह सब हो सकता है,
फिर भी लाइका नहीं
रोग से, लेकिन
लक्ष्य-सिद्धि के लिए मरी है!
चाहे जाने-अनजाने हो!
चन्द्रलोक में एक रोज़ तो
अन्वेषी मानव पहुँचेगा;
जिस दिन मानव की
प्रतिमा का, श्रम का, बल का,
और कीर्ति का-
झंडा, वहाँ फहर जायेगा;
उस दिन आदि यात्रिणी के
गौरव से भूषित, लाइका की
आदमकद प्रतिमा
चन्द्रलोक में स्थापित होगी!
वन्दित होगी, पूजित होगी!
हो सकता है चन्द्रलोक भी
'लाइका लोक' कहाया जाये
'लायका लेण्ड' पुकारा जाये!
शायद तब तक
मेरी सांसों की संख्या
समाप्त हो जाये;
इसीलिये मैं आज इसी क्षण
अपने सद्भावों को
अभिव्यंजित करता हूँ-
'लाइका लोक' ज्ञान का वर हो;
'लाइका लेण्ड' मनुज का घर हो!

कुंवर नारायण

कुंवर नारायण की कविताओं में स्वाभाविक रूप से विज्ञान आता है। उनके प्रायः हर काव्य संग्रह में विज्ञान कविताएँ उपलब्ध हैं। चक्रव्यूह, तीसरा सप्तक, परिवेश : हम तुम, आत्मजयी, अपने सामने, कोई दूसरा नहीं, इन दिनों, वाजश्रवा के बहाने, हाशिये का गवाह प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। हिंदुस्तानी अकादमी पुरस्कार, प्रेमचंद पुरस्कार, तुलसी पुरस्कार, केरल का कुमारन अशान पुरस्कार, व्यास सम्मान, शलाका सम्मान (हिंदी अकादेमी दिल्ली), उ.प्र। हिंदी संस्थान पुरस्कार, ज्ञानपीठ पुरस्कार, कबीर सम्मान, पद्मभूषण से सम्मानित हुए।

उपसंहार

तुम्हारी मान्यताएँ
जिससे केवल शून्य बनते हैं,
तुम्हारा व्यक्तित्व वह इकाई है
जिससे केवल संख्याएँ बनती हैं।

मैं समूह से विच्छिन्न हूँ
क्योंकि कुछ भिन्न हूँ।

मैं जानता हूँ कभी-न-कभी
तुम्हारी स्वत्व की कोई अदम्य जिज्ञासा
या उसकी व्याकुल पुरावृत्ति-मुझे खोजेगी,
लेकिन तब जब कि यह समूची दुनिया
मेरे हाथों से गिर कर टूट चुकी होगी
और मैं अस्तित्व के किसी विघटित प्रतीक में ही
पाया जा सकूँगा।
हमारी पछताती आत्माएँ अनन्त काल तक भटकेंगी
उस अर्थ के लिए
जो हम आज एक दूसरे को दे सकते हैं।

शून्य और अशून्य

एक शून्य है
मेरे और तुम्हारे बीच,
जो प्रेम से भर जाता है :
एक शून्य है
मेरे और संसार के बीच,
जो कर्म से भर जाता है :
एक शून्य है
मेरे और अज्ञात के बीच,
जो ईश्वर से भर जाता है :
एक शून्य है
मेरे हृदय के बीच,
जो मुझे मुझ तक पहुँचाता है।

उत्केंद्रित

मैं ज़िंदगी से भागना नहीं
उससे जुड़ना चाहता हूँ।
उसे झकझोरना चाहता हूँ
उसके काल्पनिक अक्ष पर
ठीक उस जगह जहाँ वह
सबसे अधिक बेध्य हो कविता द्वारा।

उस आच्छादित शक्ति-स्रोत को
सधे हुए प्रहारों द्वारा
पहले तो विचलित कर
फिर उसे कीलित कर जाना चाहता हूँ
नियतिबद्ध परिक्रमा से मोड़कर
पराक्रम की धुरी पर
एक प्रगति-बिंदु
यांत्रिकता की अपेक्षा
मनुष्यता की ओर ज़्यादा सरका हुआ...।

हरिनारायण व्यास

दूसरा सप्तक (छह अन्य कवियों के साथ), मृग और तृष्णा, त्रिकोण पर सूर्योदय, बरगद के चिकने पत्ते, आउटर पर रुकी ट्रेन, निद्रा के अनंत में जागते हुए जैसी कृतियों के रचयिता हरिनारायण व्यास ने खगोल शास्त्र और खगोलीय घटनाओं पर अनेक कविताएँ लिखीं हैं। भवभूति सम्मान (मध्य प्रदेश सरकार), शिखर सम्मान (महाराष्ट्र राज्य हिंदी साहित्य अकादमी), अनंत गोपाल शेवडे सम्मान।

चन्द्र-ग्रहण

आकाश में चल रहा है
ग्रहण-ग्रस्त चन्द्रमा
बदरंग बूढ़ी कुरूप और
दरिद्रा धरती का सूखा विस्तार
ग्रहण से आक्रान्त
आच्छादित है।
पूनम का चांद है
शायद शरद पूनम का
लेकिन न तो पृथ्वी पर
आब कोई कुंज बाकी बचा है महारास के लिए
और न ही कोई तलाशता है
इन कुंजों को।
अब तो प्लास्टिक की वल्लरियों से
घर पर हीं कुज बन सकते हैं
क्यों भटके फिर कोई गोप या गोप बाला
करील के काँटों में।
वन नहीं यहाँ
अब शहर है।
शहर के आस पास है
पत्थरों के रूखे पहाड़
पहाड़ों के गले में लिपटे हैं
काले चिकने फौलादी रास्ते
इन रास्तों की गुंजलक में है पूरा शहर
शहर में हैं
बड़ी-बड़ी चट्टानी इमारतें
बौना हो गया है गोवर्धन
इनकी ऊँचाई के आगे।
यमुना के तीर पर
कुंज और कुटीर में
कभी चुराकर
गोपनीयता झाँकते करील भी
अब अदृश्य हो गए हैं
पुलिन पर पड़े मसले हुए गजरों में
उलझा बेहोश रतजगा भी अब नहीं है।
अब तो सब का सब यहाँ का
इस ग्रहण-ग्रस्त रात के
काले जादू से सम्मोहित है
बेहोश उजाले में
लोग चेहरों पर नकाब डाले।
अपनी पहचान छिपाए
जंगली जानवर के खूनी पंजों की तरह
बन्दूक और तमंचे ताने
निरीह और बेबस
प्राणियों की तलाश में हैं
शिकार के लिए।
यमुना का जल सड़ गया है
किनारों पर जगह-जगह पड़े हैं
लावारिसों के मुरदे
सारे शहर की चेतना
उत्तेजना भरी घुटन बन गई है
माहौल में बेबसी है।
लोग अपने पिरामिड़ो में सोए हैं
ममी बनकर
असामयिक
अस्वाभाविक
काली गहराई से पुत रहा है
आसमान।
चांद और पृथ्वी के बीच
फंस गई है
ठोस अंधेरे की घनी पर्त
पृथ्वी अपनी ही छाया में
डूब रही है।

श्रीकांत वर्मा

राजनैतिक और सामाजिक दृष्टिसंपन्न श्रीकांत वर्मा एक ऐसे कवि है जिसके यहाँ विज्ञान अपने आरंभी सूत्रों के साथ दर्ज होता है। भटका मेध, मायादर्पण, दिनारंभ, जलसाधर, मगध। कहानी संग्रह : झाड़ी, संवाद। उपन्यास : दूसरी बार। आलोचना : जिरह यात्रा वृत्तांत : अपोलो का रथ अन्य : बीसवीं सदी के अँधेरे में अनुवाद : फैसले का दिन (कविताएँ : आंद्रेई वोज्नेसेंस्की) प्रसिद्ध कृतियाँ हैं।
सम्मान : तुलसी पुरस्कार, आचार्य नंददुलारे वाजपेयी पुरस्कार, शिखर सम्मान (मध्य प्रदेश सरकार), कुमार आशान पुरस्कार, इंदिरा प्रियदर्शिनी पुरस्कार।

संख्या के बच्चे

सच है ये शून्य हैं-
और तुम एक हो।
बड़े शक्तिशाली हो,
क्योंकि शून्य के पहले
उसके दुर्भाग्य-से खड़े हो।
अपनी आकांक्षा के कुतुब बने सांख्य!
मत भूलो-
तुम भी आँकड़े हो।

मत भूलो-
तुम केवल एक हो
शून्य ही दहाई है,
शून्य ही असंख्य है।
शून्य नहीं धब्बे हैं,
आँसू की बूंदों-से
लोहू के क़तरों से, शून्य ये सच्चे हैं।
संख्या के बच्चे हैं।

शून्यों से मुँह फेर खड़े होने वाले!
शून्य अगर हट जाएँ
ठूँठे की अंगुली केवल रह जाओगे।
मत भूलो-
शून्य शक्ति है, शून्य प्रजा है।

धनंजय वर्मा

प्रसिद्ध आलोचक, चिंतक, कवि। काव्य और व्यक्तित्व, आस्वाद के धरातल, अंधेरा नगर, निराला काव्य : पुनर्मूल्यांकन, हस्तक्षेप, आलोचना की रचना यात्रा, अंधेरे के वर्तुल, आधुनिकता के प्रतिरूप, समावेशी आधुनिकता, हिन्दी कहानी का रचनाशास्त्र, हिन्दी उपन्यास का पुनरावतरण, परिभाषित परसाई, आलोचना के सरोकार सहित आलोचना की कई पुस्तकें प्रकाशित और चर्चित कृतियाँ
आचार्य नन्ददुलारे सम्मान, वाजपेयी आलोचना पुरस्कार, साहित्यकार सम्मान, साहित्य साधना सम्मान, भवभूति अलंकरण सम्मान, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल राष्ट्रीय साहित्य सम्मान से सम्मानित।

और ब्रह्मांड घूम रहे हैं

सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के घूमते ग्रहों में
सबसे अधिक गतिमान क्या है...?

सब कुछ जब स्थिर था, व्यक्त, अव्यक्त था
भावमय सत्ता की लयमान स्थिति में धुरी का
एक नीलाभ शून्य के वायवीय वातावरण में
तत्वों का गुम्फन था और उदरस्थ शिशु-सा था

एक समवेत ध्वनि हुई,
शब्दों के परदे सरके और भाव सत्य व्यक्त हुआ
वह क्या भ्रम था...?

प्रवाह अब तक अस्रोत है
और ब्रह्माण्ड घूम रहे हैं।

एक नीलाभ शून्य के वायवीय वातावरण में
आज भी अकेला है, ध्रुव की तरह स्थिर है

एक तन्मयता और जिगीषा
किसका वरण किया जाए?

मैंने नहीं देखा इससे बड़ा कोई ग्रह
इतना गतिमान... इतना पुंज प्रकाश
और ब्रह्माण्ड घूम रहे हैं...।

मलय

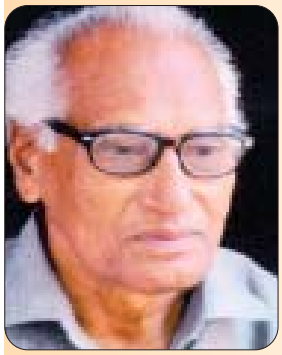

आपकी कविताओं में विज्ञान प्रमुखता से आता है। हथेलियों का समुद्र, फैलती दरार में, शामिल होता हूँ; अंधेरे दिन का सूर्य, निर्मुक्त अधूरा आख्यान, लिखने का नक्षत्र, काल घूरता है, देखते न देखते, इच्छा की दूब, असम्भव की आँच, दिन भौंहे चढ़ाता है, वाचाल दायरों से दूर, उम्र रंग लाती है, धुंध में दमकती धार, कवि ने कहा। कहानी, गद्य, आलोचना की पुस्तकें प्रकाशित।
भवानी प्रसाद मिश्र कृति पुरस्कार, सप्तऋषि सम्मान, भवभूति अलंकरण, चंद्रावती शुक्ल पुरस्कार, हरिशंकर परसाई सम्मान, मान बहादुर सिंह लहक सम्मान से सम्मानित।

हाथ पर हाथ धरकर नहीं बैठा है विज्ञान

रोशनी में रहने से लेकर
रोशनी रचने से वाकिफ़ है मनुष्य अब
उसकी प्रवाहशीलता पर क़ब्ज़ा है
उसकी इच्छा और प्रयत्नों के
जेसे रोज-रोज नये-नये कल्ले अँकुरा आते हैं
इस वैविध्य की वरेण्यताएँ कितनी हैं?
बड़े घिरे रोशन-अँधेरे को पार करना
बाक़ी है
भीतर की ऐसी पहचान
जहाँ प्रकाश-यान 5 में बैठकर
या उससे भी ज़्यादा गतिवान
न्यूट्रीनो 6 के पंख बने यान में
मन की गतिशीलता के जागृत सपनों का
पीढ़ी दर पीढ़ी तक धरती का कर्मशील मानव
दूसरे संसारों का आत्मीय जल लेकर आयेगा
पृथ्वी पर अपनों की प्यास बुझायेगा
जन-जन के मन की धड़कनों में आकर
तारे आकाश के और-और दमक-दमक जायेंगे

हाथ पर हाथ धरकर नहीं बैठा है विज्ञान
जारी हैं खुलती अपार सम्भावना - स्रोतों की
जायज़ और फलित ठोस होती गहरी पहचानें
सीने में जलती हुई आग से तपते निष्कर्षों से
पौरुष के प्रमाणित बढ़ते हुए क़दम और क़द
जिनसे वाक़िफ़ भी होइये!

•

यन्त्र-यात्री वॉजर-17.1 विद्युत पैरों से
अपना सौरमण्डल पार कर गया है
आगे बढ़ रहा है, ख़ुशफ़हम पूरा
वॉयजर-27.2 प्रमाणित छायाएँ भेजता जाता है
शून्य के बीहड़ों में से गुज़रता और
अपनी गरिमा की गमक को
जायज़ ठहराता है
यह धड़कते हृदय का यन्त्र
ज़रूरत का काम पूरा करके, आगे निकलता जाता है
सौर ऊर्जा से ही अपनी साँसें बढ़ा लेता है
मौक़ा को मोहलत नहीं देता
उपग्रहों की ग्रेविटी से सकेलता है
वांछित ऊर्जा
यह ब्रह्माण्ड में उड़ता हुआ पक्षी
अपने गोल्डन रिकॉर्ड 8 की मंजूषा
सम्हालकर रखे हैं
गोया हमारी धड़कनों के समुद्र की अमानत लिये
हुए
उड़ता जा रहा, 2025 में
रुकने का नाम नहीं लेगा?
यह हमारी तीव्र वांछा का
अनूठा प्रतिनिधि हो गया है
रेडियो सिग्नल से पोस्ट करता है
अपने अनुभवों की छायाएँ
हाथ में आती हुईं
अनूठी अपार जानकारियों की
ख़ुशियों की बगिया में
विस्मय के फूल खिलते हैं अनेक
और भी हज़ार क्यारियाँ
पुष्पित हो जाती हैं
अजब संघर्ष की अनोखी मिसाल है

•

रास्ते निकाले जा रहे हैं
रास्ते बुहारे जा रहे हें
शताब्दियों के सिंहद्वारों से होकर
गुज़रती यात्राओं के
अनसुनी घोषणाओं के
अकल्पनीय छाया-पत्र लिखे आ रहे हैं

तैयारी में तत्पर यह परम प्रतीक्षा है
जब अन्तरराष्ट्रीय अन्तरिक्ष ६ स्टेशन से भी
यान में उड़ते यात्री को मार्गदर्शन मिलेगा
बिजली-सी कौंधती सड़कें खिंचेंगी
दूर तक जायेंगी
पीढ़ियों से पीढ़ियों की जारी इस जुर्रत में
धीरे-धीरे शामिल हो जायेंगी
प्रकाश गति की प्रौढ़ता से भरी हुई यात्राएँ
ब्रह्माण्ड की नागरिकता पाना
सम्भव हो पायेगा?

('सोचता है उसे दिखता है' के अंश)

प्रेमशंकर रघुवंशी

प्रेमशंकर रघुवंशी अपने आस-पास की चीज़ों और लोक को विज्ञान में दर्ज करते हुए कविता लिखते हैं। उनकी दृष्टि विज्ञान की हलचलों पर भी बखूबी रहती है। आकार लेती यात्राएँ, पहाड़ों के बीच, देखो साँप : तक्षकनाग, तुम पूरी पृथ्वी हो कविता, पकी फसल के बीच, नर्मदा की लहरों से, अंजुरी भर घम, मुक्ति के शंक, सतपुड़ा के शिखरों से प्रसिद्ध कृतियाँ।
दुष्यंत पुरस्कार, बालकृष्ण शर्मा नवीन पुरस्कार, वागीश्वरी पुरस्कार, आर्यकल्प पुरस्कार से सम्मानित।

लियोनोव के प्रति

उन्नीस सौ पैंसठ अठारह मार्च का मध्याह्न
विश्व का एक रोमांचकारी अध्याय हो गया लियोनोव
और तू इस इतिहास में स्टील का एक पृष्ट जैसा जुड़ गया है
जिसे विश्व ने विस्मय से बाँ-बाँचता रहेगा
अन्तरिक्ष विज्ञान का रहस्य खोल बैठी है यह घटना

शून्य शून्य न रह कर कुछ और ही हो चुका है
तू उसमें मुक्तमन से गवेषणाओं के बीज बो चुका है
आदमी दो पल भी जमीन पर नहीं रह पाता आदमी जैसा
और तू मोह छोड़ आकाश में तैरता रहा उन्मुक्त
शून्य का रहस्य खोलने, नूतन खोजों की जय बोलने

आज ही मैंने लिख लिया है 'लियोनोव' शब्द कोश में
जिसके पर्याय हैं-जिज्ञासा, लगन, खोज या कि मानवीय साहस
ओ संभव के प्रकट रूप तुझे मेरे और
मेरे देशवासियों का मैत्रीपूर्ण प्रणाम
ओ अन्तरिक्षदूत, ओ विजयधाम!!

अणुबम के बादल

घृणा के घेरों में बंद वे लोग
बढ़ा रहे बागुड़ें
उठा रहे अणुबम के बादल
पहाड़ इस संकट में
बूढ़े संस्कारों के बर्फ का कफन ओढ़े
शोक मना रहे
हिस्टीरिया से पीड़ित है मैदान
घाटियों के जोड़-जोड़
दर्द से टीस रहे
नींव के पत्थरों की कानाफूसी से
दीवारें सिसर उठी हैं
कि वे चाहते हैं पुजना-
सृजन के देवता की तरह

दरख्तों को डालियों पर भरोसा नहीं
डालियों को फूलों पर
फूलों को अपनी ही गंध पर
जो पाँखी अपनी ही ताक़त से
ऊपर उड़ता
संयम के नाम पर दासता देते हुए
काट देते उसके पंख
पगडण्डियों की रौनक
राजपथों ने छीन ली
ऊँघते गलियारे अँधेरों में
चुराई रोशनी से जगर-मगर शहर
सारा परिवेश-
पतझर की खुशामद में है
या फाँक रहा धूल
दूर-दूर तक अंधे हो गये आईने
शक्लें परेशान हैं
निजता की खोज में
कैसा अजनबी है ये मौसम
कैसा...??

सोमदत्त

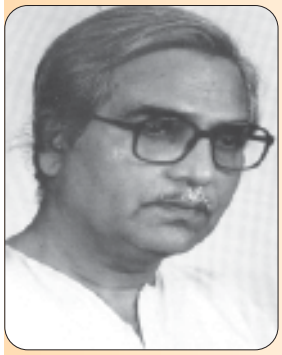

कवि-अनुवादक सोमदत्त ने विज्ञान में शिक्षा प्राप्त की और तकनीकी रूप से दक्ष हुए। यही कारण है कि उनके काव्य में तकनीकी शब्दावली और सूत्र दर्ज होते हैं। रेल बोगदे में, किस्से अरबों में , पुरखों के कोठार से।
अनुवाद : नाजिम हिकमत की कविताएं, गाथाएँ सपनों की, मनमानी के मजे, नन्ही डिबिया : वास्कोकोपा की कविताएँ। 1982 *में तकनीकी प्रशिक्षण के सिलसिले में भारतीय प्रतिनिधि के रूप में यूगोस्लाविया और नीदरलैंड की यात्राएँ आपकी रचनाएँ हैं। सोवियत लैण्ड नेहरू अवार्ड से सम्मानित।*

चतुर त्रिभुज

ऐसे ऐसे किसी समय एक त्रिभुज था
उसकी तीन भुजाएँ थीं
चौथी छुपा रखी थी उसने
अपने जगरमगर केन्द्र में

दिन में चढ़ता ऊपर वह अपनी तीनों रेखाओं के
और मुग्ध होता अपने केन्द्र पे
रात में आराम करता वह
अपने तीनों में से किसी एक कोण में

भोर में देखता वो
तीन रोशन पहियों में बदल गई अपनी तीनों भुजाओं को
अदृश्य
अदृश्य होते अंतिम नील में
निकालेगा वह अपनी चौथी भुजा
घूमेगा उसे तोड़ेगा तीन बार
और छिपा देगा फिर उसे उसकी जगह में

फिर हो जाएगा वह तीन भुजा

दिन होते ही फिर चढ़ेगा वह
अपनी तीनों रेखाओं पर
और सराहेगा अपने केन्द्र को
रात होते ही आराम करेगा जब
अपने तीनों कोणों में से किसी एक में।

विनोद कुमार शुक्ल

वैज्ञानिक उपलब्धि, घटनाओं और कुटीर उद्योगों पर कविता लिखने वाले विनोद कुमार शुक्ल ने खगोलीय घटनाओं पर रोचक ढंग से लेखन किया है।
मुख्य कृतियाँ : उपन्यास : नौकर की कमीज, खिलेगा तो देखेंगे, दीवार में एक खिड़की रहती थी। कविता संग्रह : लगभग जयहिंद, वह आदमी चला गया नया गरम कोट पहनकर विचार की तरह, सब कुछ होना बचा रहेगा, अतिरिक्त नहीं, कविता से लंबी कविता, आकाश धरती को खटखटाता है। कहानी संग्रह : पेड़ पर कमरा, महाविद्यालय कृतियाँ हैं।
रजा पुरस्कार, वीरसिंह देव पुरस्कार, रघुवीर सहाय स्मृति पुरस्कार, शिखर सम्मान, भवानीप्रसाद मिश्र पुरस्कार, मैथिलीशरण गुप्त सम्मान से सम्मानित साहित्य अकादमी सम्मान।

मंगल ग्रह इस समय पृथ्वी के बहुत पास आ गया है

मंगल ग्रह इस समय पृथ्वी के
बहुत पास आ गया है
वहाँ किसी जीव के न होने का सन्नाटा
अब पृथ्वी के बहुत समीप है
कि पृथ्वी के पड़ोस में कोई नहीं
समय पड़ने पर पृथ्वी का कौन साथ देगा
पृथ्वी के सुख दुःख
उसके नष्ट होने
और समृद्ध होने का कौन साक्षी होगा
सुनो मेरे पड़ोसी
सबके अड़ोसी-पड़ोसी
और पड़ोस के बच्चे
जो एक दूसरे की छतों में
कूदकर आते जाते हैं
मंगल ग्रह इस समय पृथ्वी के बहुत समीप है-
पृथ्वी के बच्चों कूदो
तुम्हारा मंगल हो
वायु, जल, नभ
धरती, समुद्र, तुम्हारा मंगल हो
दूब, पर्वत, वन
तुम्हारा मंगल हो
मंगलू! तुम्हारा मंगल हो
पृथ्वी से दूर अमंगल, मंगल हो।

विष्णु खरे

पत्रकार-कवि-अनुवादक विष्णु खरे की कविताओं में वैज्ञानिकता तथ्यात्मकता और तार्किकता ज़रूरी तौर पर शामिल हैं। पहला प्रकाशन 1960 में टी.एस. ईलियट का अनुवाद 'मरु प्रदेश तथा अन्य कविताएँ'। एक गैर रूमानी समय में, खुद अपनी आँख से, सब की आवाज़ के परदे में, पिछला बाकी, काल और अवधि के दरम्यान, पाठान्तर-काव्य संग्रह। आलोचना की पुस्तक 'आलोचना की पहली किताब' भी प्रकाशित। साहित्य अकादमी दिल्ली में सचिव। नवभारत टाइम्स, टाइम्स ऑफ इंडिया में संपादक रहे। रघुवीर सहाय स्मृति पुरस्कार, भवानी प्रसाद मिश्र स्मृति पुरस्कार, शिखर सम्मान। फिनलैंड का राष्ट्र 'नाईट ऑफ दी व्हाइट रोज' सम्मान से सम्मानित।

तरमीम

यह ठीक है कि जो प्रकाश को जानते हैं
उनके लिए वह अनिवार्य है
लेकिन इस मानसिकता के चलते
अन्धकार की अक्षम्य उपेक्षा हुई है

प्रकाश को जानने के लिए आँखें चाहिए
और चूँकि सौभाग्य या दुर्भाग्य से
वे हममें से अधिकांश को मिली हुई हैं
इसलिए यह समझ लिया जाता है
कि हम उसके अनेक लाभों और
कुछ हानियों से परिचित हैं
लेकिन हम भूलते हैं
कि अँधेरा न होता या सिर्फ़ वही होता
तो शायद उजाले की ज़रूरत न पड़ती
कोई नहीं कहता
ज़रा अँधेरा कर दो-
वह तो होता ही है
उससे पार पाने के लिए
उजाला करना पड़ता है
प्रकाश की समस्या यही है
कि वह हर समय हर जगह हो नहीं सकता
अँधेरा हमेशा रहता ही है
लगता है वही स्थायी है शाश्वत है चिरन्तन है
प्रकाश के रहते हुए भी वह रहता है
और प्रकाश जाते ही हो जाता है
प्रकाश की गति
दो लाख निन्यानवे हज़ार सात सौ बयानवे दशमलव चार पाँच आठ किलोमीटर
प्रति सेकण्ड स्वीकृत हुई है
जबकि अन्धकार की रफ़्तार मापने की कल्पना
किसी ने भी नहीं की
लिहाज़ा वह बिना आँकी ही चली आती है

अन्धकार मिट नहीं जाता
प्रकाश के होने से
वह उससे भी तीव्र गति से कहीं और चला जाता है
या चालाक वह प्रकाश का रूप लेकर ही बना रहता है

कहते भी हैं
कि पुरानाप्रकाश
रूग्ण होकर नया अन्धकार बन जाता है

सर्वव्यापी है अन्धकार
वह सिर्फ़ दिये तले ही नहीं चला जाता
जहाँ न पहुँचे रवि वहाँ कोई और पहुँचे न पहुँचे
अन्धकार उधर पता नहीं कब से
पहुँचा हुआ होता है

उसे निजी और सार्वजनिक सिलों
झोंपड़ियों और अट्टालिकाओं
शरीरों और दिमाग़ों
प्राथमिक शालाओं से लेकर विश्वविद्यालयों में पा सकते हो
कहे और छपे हुए शब्दों के बीच
मन्दिरों मस्जिदों कलीसियाओं के भीतर और इर्दगिर्द
वेद कुरान इंजील तौरात त्रिपिटक के पृष्ठों और उनकी व्याख्याओं
राम मूसा बुद्ध ईसा मुहम्मद की जीवनियों में
उसे कहीं न कहीं देखा जा सकता है।
उनके प्रकाश से वह कुछ मिटा कुछ नहीं मिटा
बल्कि कभी कभी तो दुबारा हो गया
हम खुद ही कहते हैं कि रोशनी कुछ मद्धिम हो गयी

अँधियारा कब माँद पड़ा है
उसे सुई की नोक बराबर गुंजाइश चाहिए
कहीं भी पैठने के लिए
फिर तो वह और जगह बना ही लेता है

प्रकाश के साथ दिक्क़त यह है
कि उसे सीधा चलना होता है
वह कल्पनातीत आकर्षण के बिना
न झुक सकता है न मुड़ सकता है
अन्धकार के साथ ऐसी कोई कठिनाइयाँ नहीं हैं
वह असम्भवतम स्थानों में
अकल्पनीय आकारों में छिपा होता है
जिनका डोप्लर सिद्धान्त अभी खोजा जाना है
मैं नहीं जानता क्या कहते
पाइथागोरस विंची न्यूटन फैराडे प्लांक आइंस्टाइन
और अपने रामन और बोस
लेकिन प्रकाश की तरंग अवधारणा सही हो या अणु की

मेरे लिए यह मानना कठिन है
कि तरंगों और अणुओं के बीच भी अँधेरा न रहता हो

यह अन्धकार की ज़िद नहीं
उसका स्थायी भाव है कि वह सिर्फ़ अस्थायी रूप से जायेगा
यानी कभी नहीं
मुझे यह कल्पना आतंकित करती है
कि कहीं ऐसा न हो
कि यह ब्रह्माण्ड ही एक अँधियारा कृष्ण विवर हो
जो सारा प्रकाश सोख रहा हो
और चूँकि हम उसी गह्वर में पड़े हुए हैं
इसलिए निगले जाते प्रकाश का भ्रम हमें हो रहा हो
जबकि जो इस गढ़े से बाहर है
उसके लिए यह अन्धकार का महापिण्ड हो

मुझे हैरत हुई है
कि स्कूल से लेकर आधुनिक प्रयोगशालाओं के
विज्ञान अध्ययन क्रम में
प्रकाश की पढ़ाई और शोध होती है
लेकिन भौतिकशास्त्र की अदना से अदना किताब भी
अन्धकार की अवहेलना करती है
जैसे वह कोई विषय ही नहीं

जबकि आप ग़ौर से देखें तो फ़िजिक्स ही नहीं
इतिहास भूगोल अर्थशास्त्र भाषा साहित्य राजनीति कला संस्कृति
आदि विषयों में कितना अन्धकार है स्वयं विज्ञान में भी कहीं कहीं
सूचना-तकनीक व्यापार प्रबन्धन
और तो और अँधेरा मिटाने वाले हर माध्यम में
इतना पैठा हुआ है अन्धकार
कि कभी कभी लगता है मूल विषय वही है

प्रकाश के ख़िलाफ़ मेरे पास कुछ भी नहीं है
उसकी और उसके इस्तेमाल की गति
जैसी है वैसी रहे बढ़ सके तो और अच्छा
मेरा तुच्छ प्रस्ताव इतना सा है
कि अन्धकार की जो अवमानना भरी उपेक्षा हुई है
उसे सुधार कर
उसे एक सम्पूर्ण सत्ता और विषय का दर्ज़ा दिया जाये
वह मिटे न मिटे बाद की बात है।

विज्ञान प्रसंग

महान वैज्ञानिकों की अजूबी दास्तान

□ सुभाष चंद्र लखेड़ा

डॉ. अब्दुल कलाम

डॉ.कलाम के दो अतिथि – जुलाई 2002 में भारत के ग्यारहवें राष्ट्रपति पद पर आसीन होने के कुछ दिनों बाद महामहिम डॉ. अबुल पकिरजैनुला अबदीन अब्दुल कलाम किसी कार्यक्रम की वजह से त्रिवेंद्रम के राजभवन में ठहरे हुए थे। इस दौरान उन्हें जानकारी मिली कि वे वहाँ बतौर राष्ट्रपति अपने किन्हीं दो परिचितों को आमंत्रित कर सकते हैं। डॉ. कलाम ने इस मौके पर अपने जिन दो परिचितों को आमंत्रित किया, उनसे उनका संपर्क तब हुआ था जब वे दशकों पहले बतौर एक वैज्ञानिक त्रिवेंद्रम में रहा करते थे। इनमें से एक पटरी पर बैठने वाला वह मोची था जिससे वे अपने जूते ठीक करवाते थे और दूसरा एक छोटे से होटल का मालिक, जिसके यहाँ वे यदा-कदा जलपान किया करते थे।

खेलों में सफलता के लिए– आज डॉ.एपीजे अब्दुल कलाम सशरीर हमारे बीच मौजूद नहीं हैं किन्तु उनसे जुड़े निजी प्रसंगों को मेरा जैसा इंसान भला कैसे भूल सकता है? यह मेरा सौभाग्य रहा कि एक रक्षा वैज्ञानिक होने की वजह से मुझे उनसे मिलने के मौके मिलते रहे। मुझे एक विशेष मौका तब मिला जब सन् 1997 में दिल्ली विश्वविद्यालय में आयोजित 84वीं भारतीय विज्ञान कांग्रेस के दौरान मैंने उन्हें अपनी पुस्तक 'खेल, खिलाड़ी और विज्ञान' भेंट की। पुस्तक पर चर्चा करने से पहले उन्होंने 'रक्षा अनुसंधान तथा विकास संगठन (डीआरडीओ)' के फोटोग्राफर को उस क्षण को कैमरे में कैद करने के लिए कहा। वे जानते थे कि मेरे लिए उनके साथ लिया जाने वाला वह फोटोग्राफ संग्रहणीय होगा। वे उस समय रक्षा मंत्री के वैज्ञानिक सलाहकार थे। तत्पश्चात, उन्होंने मुझसे अंग्रेजी में पूछा, 'मुझे एक वाक्य में बताओ कि हम खेलों में सफल कैसे हो सकते हैं?' मुझे समझ नहीं आया कि मैं एक वाक्य में क्या कहूँ? मुझे खामोश देख वे हँसते हुए बोले, 'हमारे खिलाड़ियों को आक्रामक होना होगा।' फिर कुछ क्षणों की चुप्पी के बाद वे वहाँ उपस्थित हम सभी रक्षाकर्मियों को समझाते हुए बोले, 'हमने कभी किसी पर आक्रमण नहीं किया। यही वजह रही कि हमारे अंदर से आक्रामकता का लोप होता गया जबकि खेलों में विजय पताका फहराने के लिए खिलाड़ियों के अंदर आक्रामकता का होना बेहद जरूरी है।'

रक्षा शरीरक्रिया एवं संबद्ध विज्ञान संस्थान (डिपास), डीआरडीओ से वरिष्ठ वैज्ञानिक के पद से सेवानिवृत्त। लोकप्रिय विज्ञान लेखक और बेबाक वक्ता हैं। शताधिक विज्ञान लेखों का प्रकाशन। कई पुरस्कारों से पुरस्कृत।

एक आदर्श बॉस : उन दिनों उस महत्वपूर्ण परियोजना पर सत्तर वैज्ञानिक कार्य कर रहे थे। वे सभी कार्य के दबाव और परियोजना प्रमुख यानी अपने बॉस के कार्य प्रति अत्यधिक समर्पण की भावना से यूं तो यदाकदा खिन्न हो उठते थे किन्तु वे सभी अपने इस बॉस के प्रति निष्ठा रखते थे और उस परियोजना का हिस्सा बना रहना चाहते थे। बहरहाल, एक दिन एक वैज्ञानिक अपने इस बॉस के पास जाकर बोला, 'सर, मैंने अपने बच्चों से वादा किया है कि आज मैं उन्हें यहाँ कुछ दूर पर लगी प्रदर्शनी दिखाने ले जाऊंगा। मुझे आज शाम साढ़े पांच बजे जाने की अनुमति देकर अनुगृहीत करें।' बॉस ने जवाब दिया, 'ठीक है। आज तुम जल्दी जा सकते हो।'

वह वैज्ञानिक अपनी प्रयोगशाला में वापस आकर किसी कार्य में जुट गया। उस कार्य को संपन्न करने के बाद उसे याद आया कि आज तो उसे जल्दी जाना था। हाथ पर बंधी घड़ी में समय देखा तो शाम के साढ़े आठ बज चुके थे। बुझे मन से जब वह बॉस के कमरे की तरफ गया तो वे वहाँ नहीं थे। उसने अपना कमरा बंद किया और अपने घर के लिए रवाना हो गया। जब वह घर पहुँचा तो उसने देखा कि उसकी पत्नि बैठक में सोफे पर किसी पुस्तक को पढ़ने में तल्लीन थी। उसकी

पत्नि ने पूछा, "क्या आप काफ़ी पीना चाहेंगे या मैं सीधे खाना लगा दूं ?'
उसने थोड़े दबे और बुझे हुए स्वर में कहा, 'अगर तुम चाहो तो हम दोनों फ़िलहाल काफ़ी पी लेंगे किन्तु बच्चे कहां हैं ?'
उसकी पत्नि बोली , 'तुम्हारे बॉस यहाँ सवा पाँच बजे आये थे और वे बच्चों को प्रदर्शनी दिखाने के लिए अपने साथ ले गए हैं।' दरअसल, हुआ यूं कि जब बॉस ने इस वैज्ञानिक को पाँच बजे के आस-पास तल्लीनता से कार्य करते देखा तो उन्हें लगा कि अब वह इस कार्य को पूरा किए बिना नहीं छोड़ेगा। उन्हें याद था कि इस वैज्ञानिक के बच्चों को तो आज प्रदर्शनी देखनी है। वे तुरंत उस वैज्ञानिक के घर गए और बच्चों को प्रदर्शनी दिखाने ले गए। बहरहाल, ऐसा हमेशा तो संभव नहीं हो सकता है किन्तु कभी यदि ऐसा हो जाए तो ऐसे बॉस के प्रति हमेशा के लिए कृतज्ञता का भाव बना रहता है। यही कारण था जिसकी वजह से "थुम्बा इक्वाटोरिअल रॉकेट लॉंचिंग स्टेशन" में कार्यरत सभी वैज्ञानिक अपने इस बॉस का अत्यधिक सम्मान करते थे। उन दिनों इन वैज्ञानिकों के बॉस कोई और नहीं, डॉ. ए.पी.जे.अब्दुल कलाम थे।

फ़्रेडेरिक हॉयल और स्टीफेन हॉकिंग :

वर्षों पुरानी बात है। रॉयल सोसाइटी की एक संगोष्ठी के दौरान ब्रिटिश खगोलशास्त्री सर फ़्रेडेरिक हॉयल अपना लेक्चर दे रहे थे। उनका काम मुख्यतः ब्रह्माण्ड विज्ञान के क्षेत्र में है। उन्होंने तारों के नाभिकों में हो रही नाभिकीय प्रक्रियाओं का अध्ययन किया। फ़्रेड हॉयल ब्रह्माण्ड के जन्म के बिग बैंग सिद्धांत में विश्वास नहीं रखते थे। उनका विचार था कि ब्रह्माण्ड एक स्थिर अवस्था में है। हॉयल का यह भी विश्वास था कि पृथ्वी पर जीवन धूमकेतुओं के जरिए अन्तरिक्ष से आए विषाणुओं के जरिये शुरु हुआ। खैर, उनके भाषण के बीच में स्टीफेन हॉकिंग ने उन्हें रोकते हुए उनका ध्यान उनकी एक त्रुटि की तरफ खींचा। जब सर हॉयल ने उनसे पूछा कि उन्हें उनकी इस त्रुटि का पता कैसे चला तो हॉकिंग ने जवाब दिया, 'क्योंकि मैं अपने दिमाग में गणना कर रहा था।' दरअसल, हॉकिंग का मानना था, "भले ही जिंदगी अत्यधिक चुनौतियों से भरी हो, आप हमेशा कुछ विशेष कर सकते हैं और उसमें सफल हो सकते हैं।

स्टीफेन हॉकिंग की विनम्रता :

डॉ. स्टीफेन हॉकिंग ने विश्व प्रसिद्ध धारावाहिक 'स्टार ट्रैक' में एक ऐसी भूमिका निभायी है जिसमें उन्हें सर आइजक न्यूटन और अल्बर्ट आइंस्टाइन के साथ पोकर खेलते दिखाया गया है। बहरहाल, जब लोग उनकी तुलना न्यूटन और आइंस्टाइन से करते थे तो उन्हें यह तुलना कभी ठीक नहीं लगी। वे हमेशा यही कहते रहे कि यह सब मीडिया द्वारा जनित 'अतिशयोक्ति' है। उनका कहना था कि वे सिर्फ एक विकलांग हैं; जीनियस नहीं।

विद्वता किसी की बपौती नहीं :

जर्मन गणितज्ञ जोहन कार्ल फ्रेडरिक गौस (1777-1855) को इतिहास में सर्वाधिक प्रभावशाली गणितज्ञों में गिना जाता है। वे गणित को 'क्वीन ऑफ़ साइंसेज' मानते थे। गौस जब सात साल के थे तो वे स्कूल जाने लगे। जब वे दस वर्ष के हुए तो उनका अंकगणित से पाला पड़ा। उनका गणित का अध्यापक बहुत बेहूदा किस्म का इंसान था। वह बच्चों को इस कदर प्रताड़ित करता था कि उसके कक्षा में प्रवेश करते ही बच्चों की घिग्घी बंध जाती थी और वे अपना नाम तक भूल जाते थे।

बहरहाल, गौस का गणित की कक्षा में वह प्रथम दिन था। अध्यापक ने कक्षा में प्रवेश करते ही बच्चों को अंकगणितीय श्रेणी का एक सवाल हल करने के लिए दिया जिसका उत्तर एक सूत्र की सहायता से आसानी से निकाला जा सकता था। उस घमंडी अध्यापक ने वह सूत्र किसी भी छात्र को नहीं बताया था। उस अध्यापक का आदेश था कि सवाल को हल करने के बाद छात्र अपनी स्लेट को अध्यापक की मेज पर रख दें। खैर, इधर अध्यापक ने ब्लैक बोर्ड पर सवाल लिखा और उधर गौस ने स्लेट पर उसका उत्तर लिख दिया। उन्होंने स्लेट को अध्यापक की मेज पर रख दिया। शेष छात्र सवाल को हल करते रहे और इस बीच गौस अपनी जगह पर हाथ बांधे बैठे रहे। जब पीरियड ख़त्म हुआ तो अध्यापक ने पाया कि गौस का जवाब सही था। उस अध्यापक की अक्ल ठिकाने आ गई। उसके बाद उसने छात्रों को प्रताड़ित करना बंद कर दिया। दस साल के गौस ने उसे बिना कुछ बोले यह समझा दिया था कि 'विद्वता किसी की बपौती नहीं है'।

subhash.surendra@gmail.com

देशज नवाचारों को मिले प्रोत्साहन

पत्रकार, विज्ञान संचारक और लोकप्रिय कथाकार। समकालीन परिदृश्य तथा समसामयिक विषयों पर लेखन। हाल में प्रकाशित विज्ञान उपन्यास 'दशावतार' चर्चित हुई।

प्रमोद भार्गव

बड़ी पुरानी कहावत है कि आवश्यकता आविष्कार की जननी होती है। लेकिन नूतन आविष्कार वही लोग कर पाते हैं, जो कल्पनाशील होते हैं और 'लोग क्या कहेंगे' इस उपहास की परवाह नहीं करते। बस वे अपने मौलिक इनोवेटिव आइडियाज को आकार देने में जुटे रहते हैं। भारत में देसी जुगाड़ का अपना पूरा विज्ञान और ज्ञान परंपरा हैं, बावजूद इन्हें मान्यता कम ही मिल पाती है। कुछ लोग अपनी तात्कालिक जरूरत की पूर्ति के लिए वाहनों के मूल आकार में परिवर्तन कर पेड़ पर चढ़ने वाली बाइक बना लेते हैं, तो कोई साइकिल की रफ्तार चार गुना ज्यादा कर लेता है। कोई बीज बोने वाली और बाढ़ के पानी में चलने वाली साइकिलें भी बना डालते हैं। कोई-कोई स्थानीय स्तर पर ही ऊर्जा के स्रोत और सिंचाई के पंप भी बना लेते हैं।

इन देशज उपलब्धियों से पता चलता है कि देश में प्रतिभाओं की कमी नहीं है, लेकिन शालेय शिक्षा व कुशल-अकुशल की परिभाषाओं से ज्ञान को रेखांकित किए जाने की विवशता के चलते केवल कागजी काम से जुड़े डिग्रीधारी को ही ज्ञानी और परंपरागत ज्ञान आधारित कार्य प्रणाली में कौशल-दक्षता रखने वाले शिल्पकार और किसान को अज्ञानी व अकुशल ही माना जाता है। यही कारण है कि हम देशज तकनीक व स्थानीय संसाधनों से तैयार उन आविष्कारों और आविष्कारकों को सर्वथा नकार देते हैं, जो ऊर्जा, सिंचाई, मनोरंजन और खेती की वैकल्पिक प्रणालियों से जुड़े होते हैं। जबकि ये नवाचारी उद्यमी की श्रेणी में आने चाहिए। हमारे समाज में 'घर का जोगी जोगना, आन गांव का सिद्ध' कहावत खूब प्रचलित है। यह कहावत कही तो गुणी-ज्ञानी महात्माओं के संदर्भ में है, किंतु विज्ञान संबंधी नवाचारी प्रयासों के प्रसंग में भी खरी उतरती है। उपेक्षा की ऐसी ही हठवादिताओं के चलते हम उन वैज्ञानिक उपायों को स्वतंत्रता के बाद से ही लगातार नकारते चले आ रहे हैं, जो समाज को सक्षम और समृद्ध करने वाले हैं। नकार की इसी परंपरा के चलते हमने आजादी के पहले तो गुलामी जैसी प्रतिकूल परिस्थितियां होने के बावजूद रामानुजम, जगदीशचंद्र बोस, चंद्रशेखर वेंकट रमन, मेधनाद साहा और सत्येंद्रनाथ बोस जैसे गणितज्ञ व वैज्ञानिक दिए, लेकिन आजादी के बाद मौलिक आविष्कार करने वाला अंतर्राष्ट्रीय ख्याति का एक भी वैज्ञानिक नहीं दे पाए? जबकि इस बीच हमारे संस्थान नई खोजों के लिए संसाधन व तकनीक के स्तर पर समृद्धशाली हुए हैं। जाहिर है हमारी ज्ञान-पद्धति में कहीं खोट है।

दुनिया में वैज्ञानिक और अभियंता पैदा करने की दृष्टि से भारत का तीसरा स्थान है। लेकिन विज्ञान संबंधी साहित्य सृजन में केवल पाश्चात्य लेखकों को जाना जाता है। पश्चिमी देशों के वैज्ञानिक आविष्कारों से ही यह साहित्य भरा पड़ा है। इस साहित्य में न तो हमारे वैज्ञानिकों की चर्चा है और न ही आविष्कारों की ? ऐसा इसलिए हुआ, क्योंकि हम खुद न अपने आविष्कारकों को प्रोत्साहित करते हैं और न ही उन्हें मान्यता देते हैं। इन प्रतिभाओं के साथ हमारा व्यवहार भी संतोषजनक नहीं होता है। साफ है, नवाचार को व्यावहारिक सार्थकता देनी होगी, ताकि यह सिर्फ शब्दिक खेल बनकर न रह जाएं।

कर्नाटक के एक अशिक्षित किसान गणपति भट्ट ने पेड़ पर चढ़ जाने वाली बाइक का आविश्कार करके देश के उच्च शिक्षित वैज्ञानिकों व विज्ञान संस्थाओं को हैरानी में डालने का काम कर दिया है। गणपति ने एक ऐसी अनूठी मोटरसाइकल का निर्माण किया है, जो चंद पलों और कम खर्च में नारियल एवं सुपारी के पेड़ों पर आठ मिनट में चढ़ जाती है। इस बाइक से एक लीटर पेट्रोल में 80 पेड़ों पर आसानी से चढ़ा जा सकता है। इस किसान

और इस बाइक की खबर मीडिया में आने के बाद महिंद्रा एंड महिंद्रा समूह के अध्यक्ष आनंद महिंद्रा ने इस आष्चर्यजनक नवाचार के प्रति दिलचस्पी दिखाते हुए इसके डिजाइन और कार्य क्षमता की प्रषंसा की है। साथ ही वे गणपति से संपर्क कर इस बाइक के व्यावसायिक इस्तेमाल की संभावनाएं भी तलाश रहे हैं। यदि ऐसा होता है तो एक अकुशल आविष्कारक को महत्व व मान्यता मिलेगी और यदि उसे इस आविष्कार के बदले में अच्छी धनराशि मिलती है तो ग्रामीण परिवेश से आने वाले अशिक्षित व अकुशल खोजी वैज्ञानिकों के नवाचार सामने आने का सिलसिला शुरू हो जाएगा।

गणपति की बाइक की कीमत महज 28,000 रुपए है। दरअसल नारियल, सुपारी और खजूर के पेड़ों पर चढ़ना हमेशा से कठिन रहा है। इसका सही अनुभव वही ग्रामीण कर सकते हैं, जो इन पेड़ों के फलों से आजीविका चलाते है। जब इन पेड़ों पर फल पकते हैं, तब फलों के आस-पास काटने वाले कीड़ों की संख्या बढ़ जाती है। नतीजतन फल तोड़ना और भी मुश्किल हो जाता है। किसान गणपति भट्ट ने इसे एक चुनौती के रूप में लिया और फिर अपनी मौलिक कल्पनाशीलता से पेड़ पर चढ़ जाने वाली इस मशीन का निर्माण कर डाला। मशीन पर बैठकर कुछ ही पलों में पेड़ पर चढ़ा जा सकता है। इसके बाद कीटनाशकों का छिड़काव और फल तोड़ने का काम सरल हो जाता है। सामान्य तौर से इन पेड़ों पर चढ़ने में आठ मिनट लगते हैं, लेकिन इस मशीन से केवल तीस सेकेंड में पेड़ के सबसे ऊपरी हिस्से पर पहुंचा जा सकता है।

ऐसा नहीं है कि बेकद्री के मारे गणपति जैसे नवाचारी पहली बार सामने आए हों। इसके पहले भी कई आविष्कारक सामने आए हैं, लेकिन डिग्रीधारी नहीं होने के कारण मान्यता नहीं मिली। गणपति की ही तरह उत्तर-प्रदेश के हापुड़ में रहने वाले रामपाल नाम के एक मिस्त्री ने गंदे नाले के पानी से बिजली बनाने का दावा किया है। उसने यह जानकारी आला-अधिकारियों को भी दी। सराहना की बजाय उसे हर जगह मिली फटकार। लेकिन जिद् के आगे किसकी चलती है। आखिकार रामपाल ने अपना घर साठ हजार रुपये में गिरवी रख दिया और गंदे पानी से ही दो सौ किलो वॉट बिजली पैदा करके दिखा दी। रामपाल का यह कारनामा किसी चमत्कार से कम नहीं है। जब पूरा देश बिजली की कमी से बेमियादी कटौती की हद तक जूझ रहा है, तब इस वैज्ञानिक उपलब्धि को उपयोगी क्यों नहीं माना जाता? जबकि इस आविष्कार के मंत्र में गंदे पानी के निस्तार के साथ बिजली की आसान उपलब्धता जुड़ी है? इसके बाद रामपाल ने एक हेलिकॉप्टर भी बनाया। लेकिन उसकी चेतना को विकसित करने की बजाय उसे कानूनी पचड़ों में उलझा दिया गया। अपने सपनों को साकार करने के फेर में धर गिरवी रखने वाला रामपाल अब गुमनामी के अंधेरे में है।

बिहार के मोतिहारी के मठियाडीड में रहने वाले सइदुल्लाह का आविष्कार भी किसी करिश्मे से कम नहीं है। उन्होंने जल के तल पर चलने वाली साइकिल बनाने का कारनामा कर दिखाया था। उनके इस मौलिक सोच की उपज यह थी कि उनका गाँव हर साल बाढ़ की चपेट में आ जाता है। नतीजतन लोग जहाँ की तहाँ लाचार अवस्था में फंसे रह जाते हैं। सइदुल्लाह इस साइकिल का सफल प्रदर्शन 1994 में मोतिहारी की मोतीझील में 1995 में पटना की गंगा नदी में और 2005 में अमदाबाद में कर चुके हैं। इसके लिए उन्हें राष्ट्रपति एपीजे अब्दुल कलाम ने सम्मानित और पुरष्कृत भी किया था। लेकिन आविष्कार को मान्यता नहीं मिली। इस पुरस्कार से उत्साहित होकर सइदुल्लाह ने पानी पर चलने वाले अद्भुत रिक्षे का भी निर्माण कर डाला। यह रिक्षा पानी पर बड़े आराम से चलता है। पुरस्कार की सारी राशि नए अनुसंधान के दीवाने इस वैज्ञानिक ने रिक्षा निर्माण में लगा दी। बाद में नए अनुसंधानों के लिए सइदुल्लाह ने अपने पुरखों की जमीन भी बेच दी और चाबी वाले पंखे, पंप, बैटरी-चार्जर और कम ईंधन खर्च वाले छोटे टेक्टर का भी निर्माण करने में सारी जमा-पूंजी खर्च दी। परंतु सरकारी सहायता और सइदुल्लाह द्वारा निर्मित उपकरणों को वैज्ञानिक मान्यता नहीं मिली। बेचारा कंगाल हो गया। नवाचार के नए उपक्रम भी बाधित हो गए। नतीजतन उसका हौसला पस्त हो गया। जबकि ऐसे जिज्ञासु अनुसंधित्सुओं को आर्थिक मदद के विशेष प्रावधान होने चाहिए?

झारखंड के जमशेदपुर के चाईबासा स्थित सुपलसाई के विलियम लेयांगी ने छह गियर की ऐसी साइकल बना दी जो एक घंटे में 54 किमी चलती है। लेयांगी दसवीं तक पढ़ा है। राजस्थान के बीकानेर के सांईसर गांव के दो भाइयों पवन व नंदकिशोर पंचारिया ने खेत में बीज बोने वाली साइकल बना डाली। यह करिष्मा इन्होंने लॉकडाउन में घर पर बैठे-बैठे कर दिखाया। अपने 15 बीघा खेत में उन्होंने इसी से बीज बोया। बिहार के वैशाली जिले में मंसूरपुर गाँव के एक मामूली विद्युत उपकरण सुधारने वाले कारीगर राधव महतो ने मामूली धनराशि की लागत से सामुदायिक (कम्युनिटी) रेडियो स्टेशन का निर्माण कर डाला। और फिर उसका सफल प्रसारण भी शुरू कर दिया। 15 वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल में यह केन्द्र स्थानीय लोगों का मनोरंजन कर रहा है। एकाएक विश्वास नहीं होता कि इस प्रकार के प्रसारण के लिए जहां कंपनियां लाखों रुपए खर्च करती हैं, इंजीनियर व तकनीशियनों को रखती हैं, वहीं यही काम एक मामूली पढ़ा-लिखा विद्युत मिस्त्री अपनी खोज के बूते कर रहा है। लेकिन अंग्रेजों से उधार ली हमारी अकादमिक व्यवस्था ऐसी है कि विज्ञान के प्रायोगिक व्यावहारिक रूप को बढ़ावा नहीं मिलता। लिहाजा प्रसारण कंपनियां तो लाखों-करोडों कमाकर बारे-न्यारे करने में लगी हैं, लेकिन मौलिक प्रतिभा के विकास के उपाय दूर-दूर तक दिखाई नहीं देते हैं।

इसी तरह उत्तर-प्रदेश के ललितपुर जिले के भैलोनी लोद गाँव में मंगलसिंह नाम के ग्रामीण अन्वेषक ने 'मंगल टर्बाइन' नामक ऐसा

आविष्कार किया जो सिंचाई में डीजल व बिजली की कम खपत का देषज उपाय है। इससे आटा-चक्की, गन्ना पिरई व चारा-कटाई मषीनें भी चल जाती हैं। इस चक्र की धुरी को जेनरेटर से जोड़ने पर बिजली का उत्पादन भी शुरू हो जाता है। अब इस तकनीक का विस्तार बुंदेलखंड क्षेत्र में तो हो ही रहा है, उत्तराखंड में भी इसका इस्तेमाल शुरू हो गया है। यहां की पहाड़ी महिलाओं को पानी भरने की समस्या से छूट दिलाने के लिए नल-जल योजना के रूप में इस तकनीक का प्रयोग सेंदूर गांव में भी शुरू हो गया है। मंगलसिंह ने इस बहुउपयोगी उपकरण का पेटेंट भी करा लिया है।

अमेरिका की प्रसिद्ध पत्रिका 'फोर्ब्स' ने भी भारतीय ग्रामीण आविष्कारकों को नवप्रवर्तन की प्रेरणा का मंत्र मानते हुए स्थान दिया था। दरअसल इन लोगों ने आम लोगों की जरूरतों के अनुसार स्थानीय संसाधनों से सस्ते उपकरणों का आविष्कार कर समाज व विज्ञान के क्षेत्र में ऐतिहासिक काम किया है। फोर्ब्स की सूची में दर्ज मनसुख भाई जगनी ने मोटरसाइकिल आधारित ट्रेक्टर विकसित किया है। जिसकी कीमत महज तीस हजार रुपए है। केवल दो लीटर पेट्रोल में यह ट्रेक्टर आधे घंटे के भीतर एक एकड़ भूमि को जोतने की क्षमता रखता है। लघु जोत वाले किसानों के लिए यह ट्रेक्टर अत्यंत उपयोगी है। इसी तरह मनसुख भाई पटेल ने कपास छटाई की मशीन तैयार की है। इससे उपयोग से कपास की खेती की लागत में उल्लेखनीय कमी आई है। इससे कपास उद्योग में क्रांति आ गई है। इसी नाम के तीसरे व्यक्ति मनसुख भाई प्रजापति ने मिट्टी से बना रेफ्रिजरेटर तैयार किया है। यह फ्रिज उन लोगों के लिए वरदान है, जो फ्रिज नहीं खरीद सकते अथवा बिजली की सुविधा से वंचित हैं। ट्राइका फार्मा के एमडी केतन पटेल ने दर्द निवारक आईक्लोफेनैक ने इंजेक्षन विकसित किया है। ठेठ ग्रामीण दादाजी रामाजी खेबरागढ़े भी एक ऐसे आविश्कारक के रूप में सामने आए हैं, जिन्होंने चावल की नई किस्म एचएमटी विकसित की है। यह पारंपरिक किस्मों के मुकाबले अस्सी फीसदी ज्यादा पैदावार देती है। इसी तरह मदनलाल कुमावत ने ईंधन की कम खपत वाला थ्रेसर विकसित किया है, जो कई फसलों की थ्रेसिंग करने में सक्षम है। 'लक्ष्मी आसू' के जनक चिंताकिंडी मल्लेश्याम की मशीन बुनकरों के लिए वरदान साबित हो रही है। यह मशीन एक दिन में छह साड़ियों की बुनाई एवं डिजाइनिंग कर सकती है।

नवाचार के इन प्रयोगों को प्रोत्साहित करने की जरूरत है। इन्हीं देशज विज्ञान सम्मत टेक्नॉलॉजी की मद्द से हम खाद्यान्न के क्षेत्र में आत्मनिर्भर तो हो ही सकते हैं, किसान और ग्रामीण को स्वावलंबी बनाने की दिशा में भी कदम उठा सकते हैं। लेकिन देश के होनहार वैज्ञानिकों पर शैक्षिक अकुशलता का ठप्पा चस्पाकर नौकरशाही इनके प्रयोगों को मान्यता मिलने की राह में प्रमुख बाधा है। इसके लिए शिक्षा प्रणाली में भी समुचित बदलाव की जरूरत है। क्योंकि हमारे यहाँ पढ़ाई की प्रकृति ऐसी है कि उसमें खोजने-परखने, सवाल-जवाब करने और व्यवहार के स्तर पर मैदानी प्रयोग व विश्लेषण की छूट की बजाय तथ्यों, आंकड़ों और सूचनाओं की घुट्टी पिलाई जा रही है, जो वैज्ञानिक चेतना व दृष्टि विकसित करने में बड़ा रोड़ा है। ऐसे में जब विद्यार्थी विज्ञान की उच्च शिक्षा हासिल करने लायक होता है, तब तक रटने-रटाने का सिलसिला और अंग्रेजी में दक्षता ग्रहण कर लेने का दबाव, उसकी मौलिक कल्पना शक्ति को कुंठित कर देता है। यही वजह है कि प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने प्रतिभाओं को अवसर देने की दृष्टि से स्टार्टअप, मेक इन इंडिया जैसे कार्यक्रम नवाचारियों की उद्यमिता विकास के लिए शुरू किए, लेकिन उपलब्धियां कहीं दिखाई नहीं दीं? उद्यमिता विकास के लिए कार्य- संस्कृति, अंतर-सरंचना और कानून-व्यवस्था में बड़े बदलाव लाने होंगे, बल्कि युवाओं को आरक्षण आंदोलन और सरकारी या कंपनियों की नौकरी का मोह भी छोड़ना होगा। तभी युवा उद्यमियों की सोचने-विचारने की मेधा प्रखर होगी और किसी आविष्कार को साकार रूप देने के लिए कल्पना-शक्ति विकसित होगी। विज्ञान के प्रायोगिक स्तर पर खरे उतरने वाले व्यक्ति को मानद शैक्षिक उपाधि से नवाजने व सीधे वैज्ञानिक संस्थानों से जोड़ने के कानूनी प्रावधान भी जरूरी हैं।

शैक्षिक अवसर की समानता से दूर ऐसे माहौल में उन बालकों को सबसे ज्यादा परेशानी से जूझना होता है, जो शिक्षित और मजबूत आर्थिक हैसियत वाले परिवारों से नहीं आते। समान शिक्षा का दावा करने वाले एक लोकतांत्रिक देश में यह एक गंभीर समस्या है, जिसके समाधान तलाशने की जरूरत है। अन्यथा हमारे देश में नौ सौ से अधिक वैज्ञानिक संस्थानों और देश के सभी विश्वविद्यालयों में विज्ञान व तकनीक के अनुसंधान का काम होता है, इसके बावजूद कोई भी संस्थान स्थानीय संसाधनों से ऊर्जा के सरल उपकरण बनाने का दावा करता दिखाई नहीं देता? हां, तकनीक हस्तांतरण के लिए कुछ देशों और बहुराष्ट्रीय कंपनियों से करीब बीस हजार ऐसे समझौते जरूर किए हैं, जो अनुसंधान के मौलिक व बहुआयामी प्रयासों को ठेंगा दिखाने वाले हैं। इसलिए अब शिक्षा को संस्थागत ढांचे और किताबी ज्ञान से भी उबारने की जरूरत है, जिससे देशज नवोन्मेषी प्रतिभाओं को प्रोत्साहन व सम्मान मिल सके।

pramod.bhargava15@gmail.com

विज्ञान कथा

दास्तान-ए-अविश्वास

ओम भारती

दोस्तो, आज जो कहानी मैं आपके साथ साझा कर रहा हूँ, है तो बहुत पुरानी, परन्तु प्रासंगिक अब और ज़ियादह हो गई है। सन् 1981, जापान से आई एक दर्दअंगेज़-दहशतनाक खबर यह थी कि वहाँ किसी कावाशाकी कंपनी के कारखाने में रोबोट ने हाथ चलाया और उस जगह काम कर रहे एक मनुष्य को चूर-चूर कर डाला। इंजीनियर होने के नाते यह हादसा मुझे कोंचता-कचोटता रहा, मन-मस्तिष्क को महीनों तक मथता रहा। आप भी अवश्य इस समाचार को पढ़कर भीतर तक हिल गए होंगे। मजदूर तो वैसे भी हमारी कई छोटी-बड़ी मशीनों का शिकार होते रहते हैं, थोड़ी-सी चूक या असावधानी के दबाव में आकर, किन्तु यह तो जैसे मनुष्यता की मशीन के हाथों निर्मम हत्या थी। मुझे एक चेक लेखक कारेल चापेक (यदि मेरी याददाश्त अभी दुरुस्त है तो यही नाम था) का एक नाटक याद आता रहा - 'आर.यू.आर.' (रोस्सम्स यूनिवर्सल रोबोट्स, जो 1920 में प्रकाशित हुआ था) - जिसमें मशीन अपने बनानेवाले का ख़ात्मा कर देती है।

मैं अपनी कहानी को पुरानी इसलिये कह रहा हूँ (लिखी तो मैंने बहुत-बहुत बाद में) कि इसने मेरे अन्दर अरसे से डेरा डाल रखा था। जी हाँ, तभी से, जब मैं अभियांत्रिकी महाविद्यालय का छात्र हुआ करता था। उसके भी आरंभिक वर्ष ही थे। शायद दूसरा या तीसरा साल था और पढ़ाई हमें अंग्रेजों की अंग्रेजी में रचित पाठ्य-पुस्तकों से करनी होती थी। लिहाजा विलायती सीखने और बोलने के अलावा कोई चारा था ही नहीं। जब कोई सहपाठी अपनी अंग्रेजी को लेकर डींग हांकने लगता तो मैं विनोदवश उससे चेकोस्लोवाकिया की स्पेलिंग पूछ लेता था और वह गड़बड़ा जाता था। इस खेल में ख़ासा मज़ा आता रहा। खेल का जिक्र आया तो जोड़ दूं कि 'चेस' (शतरंज) मेरा प्रिय खेल था, जो दिलचस्प तो था ही, दिलो-दिमाग को मांजता, उन्हें पूर्व क्रियाशील और फुरतीला भी बनाता था। वे दिन थे कि हम कुछ दोस्त अपनी मेकेनिकल इंजीनियरिंग की किताबों के साथ-साथ साहित्यिक कृतियाँ बांच लेने में भी रमने लगे थे। इनमें इंगलिश लिटरेचर के साथ ही हिन्दी की चर्चित पुस्तकें भी होतीं और चेकोस्लोवाकिया से मेरा वास्ता-साबिका पड़ा ब-रास्ते निर्मल वर्मा के। वे उस देश में बहुत रहे थे। कदाचित् कारेल चापेक उनके पसंदीदा लेखक थे। चापेक ने ही एक अजनबी शब्द से मुलाकात कराई थी। वह शब्द था 'रोबोट'। चेक भाषा में उसका मानी था मज़दूर। दक्षिण अफ्रीका में पहले पहल स्वचालित यातायात संकेतक के काम में लगाये गये थे रोबोट। इधर इक्कीसवीं सदी आते-आते हर कोई इस 'वन्डर मशीन' से वाक़िफ़ है जो विज्ञान कथाओं से

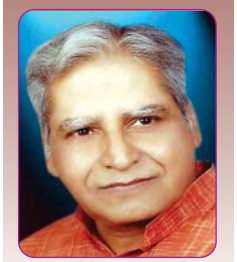

ओम भारती ने अपना कॅरियर इंजीनियर के रूप में आरंभ किया तथा बाद में वे बैंकर्स हुए। हिन्दी कविता में विज्ञान विषय और विज्ञान शब्दावली की शुरुआत ओम भारती ने की। उनकी कविता में वैज्ञानिकता प्राथमिक तौर पर आती है। अब तक वे दस से अधिक पुस्तकें लिख चुके हैं जिन पर उन्हें कई शासकीय और संस्थानिक पुरस्कार प्राप्त हैं।

वास्तविकता में उतरकर कामों की जटिलतम शृंखला आनन- फानन में करके किसी को भी चकित कर दे!

तो, उस दिन उस भयंकर ख़बर से गुजरने के बाद पूरे दिन मैं रोबोट व उसके विज्ञान- रोबोटिक्स के बारे में सोचता रहा। किसी बड़े चिंतक या विज्ञानविद् ने मनुष्य के इतिहस को 'एडम से एटम' - आदम से परमाणु तक की संक्षिप्त पैर-घिस्सू यात्रा कहा है। रोबोट भी इस सफर में वक्त के संग-साथ रहा है। आशंका भी बनी हुई है कि जाने कब आदमी का बनाया खिलौना आदमियों से खेलने लग जाये! मानों हम अपने ही औज़ारों का औज़ार होकर किसी अज्ञात दिशा में दौड़े जा रहे हैं। हमारा तथा यंत्र का पर्याय एक हो जाना, पता नहीं क्या ग़जब ढायेगा। मशीन को इंसानी काम दिखा-सिखा दिए गए हैं, और इंसान यंत्रवत हुआ जा रहा है, फलतः सीमाबद्ध भी। अंग्रेजी शब्दकोष में रोबोट उस व्यक्ति के लिये भी प्रयोज्य है जो मशीन एवं भावशून्य आचरण करे। अतीत में कभी ख़तरा रहा होगा कि मनुष्यों को दास बनाकर बेच दिया जाये। आज तो वस्तुस्थिति तकरीबन यह है कि आदमी अब बेजान रोबोट बनाया जा रहा है।

सोचते-सोचते दिलो-दिमाग मेरे इस कदर थक गये थे कि नींद को मुझे दबोच लेने में देर नहीं लगी। उसके झोंके ने मुझे सपने में भी समेट लिया होगा या बलपूर्वक ठेल दिया होगा, जब मुझे अहसास हुआ कि कोई मेरा दरवाज़ा बजा रहा है। नपी तुली सी ठक् ठक्। मैं चटखनी लगाकर कभी भीतर से उसे बंद नहीं करता था। चंद लम्हे बीते होंगे, और वह मेरे कमरे में दाख़िल हो गया।

शुभ प्रभात महोदय, आप अभी तक सो रहे हैं। सूरज काफी ऊपर चढ़ चुका है। उठिये, अखबार बाँटनेवाला बन्दा बहुत देर पहले आज का समाचार पत्र डाल गया था, फाटक के इस पार। मैं उठाकर आपके लिये लेकर हाज़िर हूँ- वह हाथ बढ़ाकर मुझे पेपर पकड़ाने बढ़ा। मैंने अपनी आँखें अविश्वास में मसलीं और उन्हें पहली बार, जैसे, फाड़-फाड़कर, देखा उधर। एक अज़ीबोगरीब हाथ मेरे समक्ष था, इंसानी बिरादरी के पंजे से बहुत कुछ मिलता-जुलता, मगर एक अलहदा नमूने सा। हाथ नहीं, उसकी बनावट या 'आउट लाइन' जैसा ख़ाका सरीखा अस्थि-पंजर-नुमा कुछ। मैंने तपाक से उठकर उससे अखबार ले लिया ताकि वह कृत्रिम काया मेरे और करीब न आ जाये। फिर संयत, सचेत सतर्क, सावधान होकर कहा- 'थैंक्यू रोबो!' आपका नाम क्या है? पता नहीं, क्यों मैंने 'टी' को 'साइलेंट' रखा उसे सम्बोधित करने में और एक पुरानी आदत के हिसाब से रोबो बोल गया। हालाँकि मैं उसे दोस्त भी बोलना चाहता था, चूक गया।

'जी, मुझे अविश्वास कहते हैं'।

मुझे विश्वास नहीं हुआ उसके नाम पर। मेरी जगह आप होते तो आप को भी नहीं होता। यकीनन उसका नाम - असली नाम - कुछ और है और वह शेक्सपीअर को मन ही मन दोहरा रहा है - नाम में क्या रखा है! ज़ाहिर था कि वह हम आदमियों को फॉलो करते-करते झूठ बोलने का आदी हो गया है। हो न हो, कल किसने देखा है, लेकिन जोख़िम तो है, अवास्तविक भी नहीं है कि ये यंत्रमानव भविष्य में हम मनुष्यों जैसे विचारशील न हो जाएं! आखिरकार हमारा बहुमत एक यांत्रिक ढर्रे के सोच में तो ढल ही रहा है। ढलान उतरते हुए असम्वेदी...

'नाम सुनकर चौंकिये मत, महाशय' उसकी आवाज़ 'डिटो' - हू-ब-हू न सही, थी तो मेरे किसी मातहत के स्वर तथा उच्चारण सी। इस समानता ने मेरा विचार क्रम तोड़ दिया था। जैसे हम लोग चाय-काफी का घूँट लेने के लिए रुकते हैं, वैसे ही वह ठहर-ठहर कर स्पष्ट शब्द बोल रहा था। शायद तौल-तौल कर भी।

'जिस पल पृथ्वी के प्राणी मुझ पर विश्वास पाल लें, मैं भी पाला बदलता हुआ अपना नाम भी उलट लूँगा। किन्तु हाल-फिलहाल तो आप लोग मुझे जॉब छीन लेनेवाला, बेरोजगारी बढ़ानेवाला इत्यादि कहकर नापसंद करते हैं, बल्कि घबराते हैं। यही आप मनुष्यों का इतिहास रहा है। जब भी कोई नई खोज आपके सामने आई है, आप उसे बेवकूफी और पागलपन बताकर रियाया है, कोसा है, आपके किसी विद्वान ने फ़ब्ती कसी थी- 'यदि आवश्यकता ने ही आविष्कार को पैदा किया है तो फिर बाप क्या कर रहा था!' महोदय किसी चीज की जरूरत और उसके न होने ने आपके पुरुखों को उसे तलाशने को

शुभ प्रभात महोदय, आप अभी तक जो नहीं हैं। सूरज काफी ऊपर चढ़ चुका है। उठिये, अखबार बाँटनेवाला बन्दा बहुत देर पहले आज का समाचार पत्र डाल गया था, फाटक के इस पार। मैं उठाकर आपके लिये लेकर हाज़िर हूँ- वह हाथ बढ़ाकर मुझे पेपर पकड़ाने बढ़ा। मैंने अपनी आँखें अविश्वास में मसली और उन्हें पहली बार, जैसे फाड़-फाड़कर, देखा उधर। एक अज़ीबोगरीब हाथ मेरे समक्ष था, इंसानी बिरादरी के पंजे से बहुत कुछ मिलता-जुलता, मगर एक अलहदा नमूने सा।

विवश किया और आविष्कार को जन्म देते रहे... ।'

क्या वह मुझ पर अपनी तमाम समझदारी उँड़ेल रहा है? मैंने किसी भाँति अपने क्रोध पर काबू करते हुए उत्तर दिया - 'वह इस सबब कि आप एक क्षणांश में इतनी बड़ी गलती कर सकते हैं जो हजारों आदमी मिलकर भी हजार दिनों में न कर पाएं। मैं आपको कैसे बताऊँ कि मेरा एक जिगरी दोस्त खरीदी विभाग में, (एक नामी कम्पनी में) प्रभारी था, उस कम्पनी के लिये उम्र खपा दी उसने और एक दिन कम्पनी ने उसे वह रोबो खरीदने भेजा, जो उसे ही नौकरी से बेदखल करने के लिहाज़ से 'डिजाइन किया गया हो। सोच सकते हो कि आदेश मानने को बाध्य उस व्यक्ति पर कैसी बिजली टूट पड़ी होगी, क्या हालत हुई होगी उसकी?'

जनाब, मैं तो कम्प्यूटर के द्वारा विशेष तौर पर डाले गये 'प्रोग्राम' अर्थात आपके ही निर्देशों के अनुसार कार्य करनेवाली चीज़ हूँ। आपने ही अपनी मेहनत बचाने हेतु मुझे मुश्किल काम बेहद तेज आसानी से कर डालने के लिये पैदा किया है। आपके लिये जो लक्ष्य असंभव थे, उन्हें मैं 'ऑटोमैटिकली' कर डालूँ - इस लायक बनाया है। ऐसे 'टास्क' फटाफट कर डालने जितना 'प्रैक्टिकल' ज्ञान मुझ अनजान में भरा है...!'

मेरा ध्यान इस बात पर था कि अब वह मेरी ही तर्ज पर मिलावटी भाषा बोल रहा है। अवश्य ही इस 'अविश्वास' में कृत्रिम बुद्धिमत्ता कूट-कूट कर भरी गयी थी इलेक्ट्रॉनिकी व यांत्रिकी के मिश्रण को मिलाकर बना नकली जीव था वह। उस चलनशील ढाँचे में, मानव के अस्थिपंजर सदृश अनुकृति में उसकी निर्मिति में स्व-नियंत्रण भी रहा होगा। मनुष्य देह की दिगंत चूमती दक्षता से लैस किया गया-दानव। कल को उसमें हम उद्यमी पार-स्वनिक मोटर लगाएगें और तब...।

'मैं, मैं आपके विचारों की कड़ियां पढ़ रहा हूँ महोदय, और अपना उत्तर उसमें जोड़े देता हूँ - तब आपकी प्रजाति, आपका यह मानुषिक संसार हम से पराजित हो जायेगा। हार होगी आपके अहंकार की!'

'होश मत खोओ, अविश्वास' - इस बार मैंने उसे उसके नाम से सम्बोधित किया।

'हमने अपराजेय मानी जानेवाली प्रकृति पर तो विजय पा ही ली है, अपने ही आविष्कारों से भी निबट ही लेंगे। सुनो , जियादह दिन नहीं हुए हैं जब हमारे खेल- शतरंज - के विश्व चैम्पियन गैरी कास्पारोव ने हर तरह से माहिर, सबसे शक्तिमान, आधुनिकतम सुपर कम्प्यूटर को बाज़ियों पर बाज़ियां जीतते हुए - हारते हुए, अंततः संघर्षपूर्ण कड़ी टक्कर में शिकस्त दे ही दी थी। निहायत आदमकद आदमी ने हरा दिया था उसे। सिद्ध कर दिया था कि मनुष्य का मस्तिष्क जिस गति से कार्य कर सकता है, वह सुपर कम्प्यूटर से भी अधिक तीव्र है!'

मैंने कुछ सोचकर जोड़ ही दिया- ''तुम दस फरवरी 1996 को फिलाडेल्फिया कन्वेन्शन सेंटर में घटित पूरा किस्सा सुन ही लो। पूरे विश्व की दृष्टि वहीं जमी हुई थी। इस भिड़न्त के लिए आई.बी.एम. ने 6 वर्षों में 'डीप ब्ल्यू' को तैयार किया था। वह 1 सेकंड में 20 करोड़ चालें सोचने में सक्षम था। पहले गेम की 37वीं चाल के बाद हमारे गैरी को हार माननी पड़ी तो रात भर नींद उसके पास नहीं फटक पाई। पहली बार दुनिया 'आदमी विरुद्ध कृत्रिम बुद्धिमत्ता' का मुक़ाबला देख रहीं थी और कास्पारोव ऐसी स्पर्धा का तनाव-दबाव झेलने में दक्ष थे। दूसरे गेम में अनेक तकनीकी दिक्कतें आईं। आखिरकार 73वीं चाल में घुटने टेक देने पड़े सुपर कंप्यूटर को। पर तीसरे व चौथे गेम 'ड्रा' (अनिर्णीत) रहे तो गैरी के लिये जरूरी हो गया कि बाकी दो गेम वही जीतें। उन्होंने यह कमाल कर दिखाया। वह 'बेस्ट ऑफ सिक्स' का यह मैच जीत गये।'' रोबोट, चुप, मुझे सुन रहा था। मैं उसी उत्साह में बोले जा रहा था- 'जानते हो, क्यों? इसलिये कि वह मनुष्य था, मशीन नहीं था। उसके पास मस्तिष्क के साथ-साथ हृदय था, सम्वेदना थी, भावनाएं थीं, हौसला था। जीवट था, जिजीविषा थी। वह जैसे ही एक बाज़ी हारता, अविलम्ब अगली बाज़ी जीतने की जिद ठान लेता था। उसे महसूस हो गया था कि इस अभूतपूर्व स्पर्धा में 'स्टेक' पर केवल उसका 'चेस टाइटल' - शतरंज का विश्व-खिताब मात्र नहीं है, मानवीय अस्तित्व का भविष्य भी है। दाँव पर एक अकेला खिलाड़ी - ग्रैंड मास्टर कास्पारोव ही नहीं है, सारी मनुष्य बिरादरी, समूची मानव जाति है और, उसकी हार सम्पूर्ण मनुष्यता की निर्णायक पराजय होगी। उसने मशीन से मात खाना मंजूर नहीं किया। जूझता रहा, जूझता रहा और जीत गया।'

मैंने स्वयं को छुआ, टोहा-टटोला कि कहीं मैं अनावश्यक अतिरिक्त उत्तेजना में तो नहीं हूँ, आपे से बाहर तो नहीं हुआ जा रहा हूँ और फिर उस अविश्वास के मुखातिब हुआ। वह तो वैसा ही था। भावशून्य, खामोश। उसके चेहरे जैसी चीज़ पर कोई शिकन न थी। होनी भी नहीं थी। पाठको, मैंने उसे खरी-खरी सुनाते हुए कह ही दिया - 'मिस्टर अविश्वास, तुम्हारे पास मजबूत कद-काठी है। भौतिक ढाँचा है, स्ट्रक्चर-सेंसर-मसल पॉवर-ब्रेन... सब है पर जानते हो, दिल नहीं है। यू डोन्ट हेव ए हार्ट!'

मुझे आभास हुआ या पल भर को प्रतीत हुआ कि वह अपना सीना चीरकर अपने दिल का होना देखना-दिखाना चाह रहा है। अवश्य ही उसकी बनावटी बुद्धि (आर्टिफिशॅल इन्टेलिजन्स) सक्रिय हुई होगी। लेकिन जो उसने किया, वह अप्रत्याशित था। उसने मानो खुद पर अविश्वास करते हुए अपने भीतर झांकना चाहा और इस चेष्टा में सहसा, न जाने क्यों अपनी मशीनी बांहों से जकड़कर एक झटके में ही अपने सिर को धड़ से अलग कर डाला। एक जोर की आवाज़ हुई जो मेरे कमरे में देर तक गूंजती रही। उस प्रबल प्रतिध्वनि से मेरी नींद व स्वप्न दोनों टूट गए। पलक झपकते मैं फंतासी से बाहर था, अपने अंतिम पड़ाव पर वहाँ, जहाँ पहुँचकर वह चुपचाप अपने किवाड़ उढ़काकर अपने में बन्द हो जाती है, थोड़ा-सा अधखुला छोड़ते हुए कि हर पढ़नेवाला अपनी पसन्द का अन्त तय करे।

ombharti14@gmail.com

विद्यार्थी कॉलम

गिलहरी मछली

ललित गोयल

समुद्र में होती है एक अनोखी सी मछली
जिसको कहते हैं लोग गिलहरी मछली
अंग्रेजी में ये स्क्वेरल फिश कहलाती है
ऑस्ट्रेलिया में सोल्जर फिश कही जाती है

दिखती है यह लाल गिलहरी के समान
शगिलहरी मछली' तब इसे कहते इंसान।
वास्तव में यह रात्रि में है विचरण करती
कहा जाना चाहिए इसे अब उल्लू मछली।

बड़ी-बड़ी आंखें होती, साफ देखती है रातों में
गर्म सागरों में रहती है दिन में मूंगे की दीवारों में
सीमा क्षेत्र बनाती अपना एक लड़ाकू सैनिक जैसे
तेज-तेज आवाज़ निकाले, तैरे पनडुब्बी के जैसे।

सिर अकार में बड़ा और जबड़े मजबूत बहुत होते हैं
सत्ताइस मीटर पानी में देखे गए इसके गोते हैं।
संतति समागम का तरीका है रोचक और आकर्षक
विचित्र ध्वनि करते हैं मिलकर नर-मादा चित्ताकर्षक।

आंतरिक निषेचन के बाद मादा मछली अंडे देती है
जल्द परिपक्व होकर फूटते मछली नहीं सेती है।
18वीं सदी में खोजी गई प्रजाति यह मछली की
17 करोड़ वर्ष पहले का अनुमान करती जैवविज्ञानिकी।

कक्षा बाहरवी के छात्र ।
इटारसी, जिला होशंगाबाद
(म.प्र) में रहते हैं।
'इलेक्ट्रॉनिकी आपके लिए
में पहली बार प्रकाशन'

जैव प्रौद्योगिकी

संजय गोस्वामी

जैव प्रौद्योगिकी = जीवविज्ञान प्रौद्योगिकी को कहा जाता है इसमें जैव-जीव, सूक्ष्म जीव, जीवित कोशिका कार्यों और संबंधित विषयों को समझने, अध्ययन और अनुसंधान और विकास के बारे में बताया जाता है, इसमें प्रौद्योगिकी और जीव विज्ञान का अच्छा ज्ञान होना चाहिए। महान जीवविज्ञानी लुई पाश्चर ने 1857 में किण्वन की खोज की थी और यह जैव प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में पहला कदम था।

जैव विविधता के संरक्षण एवं सतत् विकास में जैव प्रौधोगिकी का महत्वपूर्ण योगदान है। जैव प्रौद्योगिकी में भ्रूण कल्चर, विषाणु कोशिका कल्चर, पालेन कल्चर, हरित क्लोनीय गुणन, जर्मप्लाज्म संरक्षण, सोमाक्लोनल, जैव विविधता के बारे में बताया जाता है। जीवों की प्रकृति और बर्ताव को समझने में जैव प्रौद्योगिकीविदों की अहम भूमिका होती हैं। जिससे नए टीके का विकास होता है। मानव कल्याण हेतु जैव विविधता का अनुप्रयोग विशेष रूप से चिकित्सा, उद्योग, कृषि, पर्यावरण, जैव प्रौद्योगिकी आदि क्षेत्र में किया जा रहा है। वैज्ञानिक अनुसंधान और प्रौद्योगिकी में औद्योगिकी सूक्ष्मजीवी जैसे वाइरस, फन्जाई, वैक्टीरिया, एमीबा आदि का उपयोग कीटनाशी के रूप में तथा पादप रोगों के नियंत्रण के लिए किया जा रहा है। वैक्टीरिया के स्ट्रेन सीवेज उपचार डिटाक्सीकेशन, खनिज तेलों के विघटन में उपयोगी हैं। इन विट्रोकल्चर द्वारा जन्तुओं एवं पादप कोशिकाओं से कई मूल्यवाल उत्पाद प्राप्त किये जाते हैं। जैव प्रौद्योगिकी द्वारा जीनों का स्थानांतरण किया जाता है। इन विधियों से फसलों के लक्षणों में उपयोगी सुधार किये गये हैं। इन विट्रो तकनीक द्वारा पौधे का त्वरित क्लोनीय गुणन, अनुवांशिक विविधता की उत्पत्ति, होमोजीनस लाइनो का शीघ्र उत्पादन आदि का महत्वपूर्ण काम हो रहा है। इस प्रकार जैव प्रौद्योगिकी की उपयोगिताएँ लगभग असीम हैं। जैव प्रौधोगिकी में मानव जीवन के लगभग सभी पहलुओं को प्रभावित किया है। इसके क्रिया क्षेत्र का विस्तार पर्यावरण से लेकर मानव स्वास्थ्य एवं मानव जनन के नियंत्रण तक है।

मांग : चूंकि जैव प्रौद्योगिकी में कई विषय शामिल हैं, इसलिए विभिन्न उद्योगों के इन विशेषज्ञों की बहुत मांग है। बायोटेक्नोलॉजिकल एप्लिकेशन का व्यापक रूप से विभिन्न उद्योगों में उपयोग किया जाता है- जैसे हेल्थकेयर मेडिसिन फार्मास्युटिकल एग्रीकल्चर पशुपालन जेनेटिक इंजीनियरिंग पर्यावरण संरक्षण, मृदा जीव विज्ञान, टेक्सटाइल उद्योग, प्रसाधन सामग्री आदि में बायोटेक्नॉलॉजिस्ट निजी और सरकारी दोनों उपक्रमों में नौकरी पा सकते हैं। केंद्र के जैव प्रौद्योगिकी विभाग ने भारतीय फार्मा कंपनियों और जैव प्रौद्योगिकी अनुसंधानकर्ताओं को कोविड-19 के लिए वैक्सीन विकसित करने के लिए प्रोत्साहित किया है ।

अगले दो दशकों में जैव प्रौद्योगिकी तकनीकी क्षेत्र में सूचना प्रौद्योगिकी से आए बदलावों के बराबर ही क्रांतिकारी बदलाव ला सकती है। जीव विज्ञान-जीनोमिक्स, प्रोटियोमिक्स, बायो- इंफॉर्मेटिक्स और सूचना प्रौद्योगिकियों में प्रगति की अभिरूपता से एक नई जैव-अर्थव्यवस्था का विकास हो रहा है। भारत के वार्षिक कारोबार में 2021 तक इस क्षेत्र में वार्षिक प्रगति की दर 30 फीसद होने की संभावना है। इस क्षेत्र में 500 से ज्यादा अनुसंधान और विकास परियोजनाओं को सरकार की तरफ से सहयोग दिया गया, वहीं 400 से ज्यादा विश्वविद्यालयों और अनुसंधान प्रयोगशालाओं को क्षमता निर्माण और ढाँचागत मजबूती दोनों ही कार्यों के लिए सहयोग दिया गया।

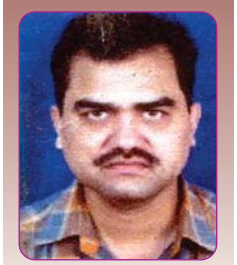

हिन्दी विज्ञान के क्षेत्र में तीन सौ से अधिक कॅरियर लेख प्रकाशित। विज्ञान लेख, विज्ञान कविता, विज्ञान रपट, विज्ञान समीक्षा आदि का लेखन और प्रकाशन। कई पुरस्कारों से सम्मानित ।हिन्दी विज्ञान साहित्य परिषद्, भा.प्र.अ.केन्द्र, मुंबई के कार्यकारी सदस्य।

स्वास्थ्य के क्षेत्र में नए टीके और नैदानिक पदार्थ बनाए गए हैं और उनका क्लीनिकल परीक्षण चल रहा है। देश में स्टेम सेल अनुसंधान के विकास की दिशा में बड़ा कदम उठाया गया है और सात केंद्रों को कार्यक्रम सहयोग दिया गया है। ऊतक अभियांत्रिकी, जैव आयुर्विज्ञान उपकरण, जैव-पदार्थ, नैनो जैव प्रौद्यागिकी और आरएनएआई के क्षेत्र में गहन अनुसंधान को सहायता दी जा रही है। देश के मातृ, नवजात और बाल स्वास्थ्य कार्यक्रमों के लिए जरूरी विशेष साधन और फार्मूलेशन के लिए प्रयास किए जा रहे हैं। कृषि जैव प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में पोषण बढ़ाने, उत्पादन में बढ़ोतरी और जैविक या अजैविक तत्वों के प्रति फसलों में प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने पर ज्यादा ध्यान दिया जा रहा है। लोगों की नए उत्पादों और तकनीकों तक पहुँच बढ़ाने और स्वास्थ्य, पोषण सुरक्षा, रोजगार निर्माण और पर्यावरण में सुधार के लिए अनुकूल वातावरण बनाने के लिए विशेष प्रयास भी किए जा रहे हैं। जैव प्रौद्योगिकी से पूर्व आरोपण आनुवंशिक निदान, जेनेटिक स्क्रीनिंग, फोरेंसिक विज्ञान के क्षेत्र में जेनेटिक फिंगरप्रिंटिंग, जनसंख्या आनुवंशिकी सहित जीन थेरेपी (रोगाणु लाइन और दैहिक), क्लोनिंग, जैव प्रौधोगिकी के साथ कैंसर के इलाज (जीन थेरेपी का एक रूप), भ्रूण में गड़बड़ी का उपयोगी सुधार, मानव जीनोम परियोजना, मानव आनुवंशिक जैव विविधता परियोजना, जीएम खाद्य फसलों, जीएम फाइबर फसलों, जीएम पेड़, जीएम मैदान (जैसे अलग अलग रंग की घास), प्लांट जीनोमिक शोध (जैसे एराबिडोप्सिस), जीएम पौधों/टीके, जैव ईंधन, प्लास्टिक उत्पादन पेड़, मानव दवा में प्रोटीन (जैसे इंसुलिन),जीएम खाद्य फसल, कीट प्रतिरोधी जीएम खाद्य/फाइबर फसलों और पेड़ के संरक्षण एवं सतत विकास में जैव प्रौधोगिकी का महत्वपूर्ण योगदान है। जैव प्रौद्योगिकी में सूक्ष्मजीवों, बैक्टीरिया, नए-नए साँचे, टीके, खाद्य, कार्बोहाइड्रेट पॉलिमर, जैव रसायनों (जैसे अमीनो एसिड), पनीर, दही, बियर, वाइन का उत्पादन करने के लिए इस्तेमाल किया गया है। जैव प्रौधोगिकी द्वारा जीव के स्टेम कोशिकाओं को संशोधित किया गया है, इन विधियों से मानव स्टेम कोशिकाओं में डीएनए और प्रोटीन विकसित करने की प्रक्रिया चिकित्सा में सुधार लाने पर ध्यान दिया जाएगा। जैव प्रौद्योगिकी के अनुसंधान परियोजना से

मरीजों के लिए व्यक्तिगत दवाओं को विकसित करने के लिए स्टेम सेल बनाने के लिए डॉक्टरों सक्षम है। क्लोनन के साथ जैव प्रौद्योगिकी ने एक और क्षेत्र को जन्म दिया है, जिसका नाम है कोशिका चिकित्सा। स्टेम कोशिका या मूल कोशिका (अंग्रेजी-स्टेम सेल) ऐसी कोशिकाएं होती हैं, जिनमें शरीर के किसी भी अंग को कोशिका के रूप में विकसित करने की क्षमता मिलती है। इसके साथ ही ये अन्य किसी भी प्रकार की कोशिकाओं में बदल सकती है। वैज्ञानिकों के अनुसार इन कोशिकाओं को शरीर की किसी भी कोशिका की मरम्मत के लिए प्रयोग किया जा सकता है। इस प्रकार यदि हृदय की कोशिकाएं खराब हो गईं, तो इनकी मरम्मत हृदय की कोशिका द्वारा की जा सकती है। इसी प्रकार यदि आँख की कॉर्निया की कोशिकाएं खराब हो जायें, तो उन्हें भी स्टेम कोशिकाओं द्वारा विकसित कर प्रत्यारोपित किया जा सकता है। इसी प्रकार मानव के लिए अत्यावश्यक तत्व विटामिन सी को बीमारियों के इलाज के उददेश्य से स्टेम कोशिका पैदा करने के लिए भी प्रयोग किया जा सकता है। अपने मूल सरल रूप में स्टेम कोशिका ऐसे अविकसित कोशिका हैं जिनमें विकसित कोशिका के रूप में विशिष्टता अर्जित करने की क्षमता होती है। इसके अंतर्गत ऐसी कोशिकाओं का अध्ययन किया जाता है, जिसमें वृद्धि, विभाजन और विभेदन कर नए ऊतक बनाने की क्षमता हो। सर्वप्रथम रक्त बनाने वाले ऊतकों से इस चिकित्सा का विचार व प्रयोग शुरु हुआ था। अस्थि-मज्जा से प्राप्त ये कोशिकाएं, आजीवन शरीर में रक्त का उत्पादन करतीं हैं और कैंसर आदि रोगों में

इनका प्रत्यारोपण कर पूरी रक्त प्रणाली को, पुनर्संचित किया जा सकता है। ऐसी कोशिकाओं को ही स्टेम कोशिका कहते हैं। स्टेम सेल उपचार के अंतर्गत विभिन्न रोगों के निदान के लिए स्तंभ कोशिका का प्रयोग किया जाता है। भारत में भी इसका प्रयोग होने लगा है। इसकी सहायता से कॉर्निया प्रत्यारोपण में और हृदयाघात के कारण क्षतिग्रस्त मांसपेशियों के उपचार में सफलता मिली है। जैव प्रौद्योगिकी इंडस्ट्री में ग्रोथ के अलावा कई तरह के कोर्स भी मौजूद हैं, जिनमें प्रमुख रूप से बीई, पीजी डिप्लोमा, एमटेक, एमबीए व पीएचडी सरीखे कोर्स मौजूद हैं। इनकी अवधि दो साल से लेकर चार साल तक है।

कोर्सेज : बायोटेक्नॉलॉजी में डिप्लोमा

- बायोटेक्नॉलॉजी में बैचलर ऑफ इंजीनियरिंग
- बीटेक(जैव प्रौद्योगिकी)
- उन्नत जूलॉजी और जैव प्रौद्योगिकी में बैचलर ऑफ साइंस (BSc)
- जैवप्रौद्योगिकी में विज्ञान स्नातक
- अनुप्रयुक्त जैव प्रौद्योगिकी में विज्ञान स्नातक
- बायोटेक्नॉलॉजी में बैचलर ऑफ साइंस (ऑनर्स)
- मेडिकल बायोटेक्नॉलॉजी में विज्ञान स्नातक
- जूलॉजी और पशु जैव प्रौद्योगिकी में विज्ञान स्नातक
- बायोटेक्नॉलॉजी में मास्टर ऑफ साइंस
- बायोप्रोसेस टेक्नॉलॉजी में बैचलर ऑफ टेक्नॉलॉजी
- जैवप्रौद्योगिकी में बैचलर ऑफ टेक्नॉलॉजी
- बायोटेक्नॉलॉजी में पोस्ट एमएड

सर्टिफिकेट कोर्स :

- बायोटेक्नॉलॉजी में बैचलर ऑफ साइंस (ऑनर्स)(एप्लाइड मॉलिक्यूलर बायोलॉजी)
- मेडिकल बायोटेक्नॉलॉजी में बैचलर ऑफ साइंस (ऑनर्स)
- एप्लाइड साइंस (BAPSc) आण्विक जैव प्रौद्योगिकी में स्नातक
- प्लांट बायोटेक्नॉलॉजी में बैचलर ऑफ साइंस (बीएससी) स्नातक
- जैवप्रौद्योगिकी विशेषज्ञता के साथ

रासायनिक इंजीनियरिंग में विज्ञान स्नातक

- एम.टेक (जैव प्रौद्योगिकी)
- इसके लिए भी एंट्रेंस टेस्ट में बैठना जरूरी है।

प्रवेश परीक्षाएं- यह एक जैव वैज्ञानिक क्षेत्र है इसलिए इस क्षेत्र में कॅरिअर बनाने हेतु बारहवीं (10+2) तक भौतिकी, रसायन तथा जीव विज्ञान या गणित विषय होना आवश्यक है। बायोटेक्नॉलॉजी के पाठ्यक्रमों में प्रवेश हेतु प्रवेश परीक्षाएं उत्तीर्ण करनी होती हैं कुछ ऐसे संस्थान भी हैं, जो जैव प्रौद्योगिकी में ग्रेजुएट डिग्री को हायर करती है। ग्रेजुटए कोर्स, बीई/बीटेक में एंट्री प्रवेश परीक्षा के आधार पर होता है। एमएससी इन जैव प्रौद्योगिकी में एडमिशन के लिए जवाहर लाल नेहरू यूनिवर्सिटी हर साल 120 सीटों के लिए संयुक्त परीक्षा का आयोजन करती है। बायोटेक लेबोरेटरी में रिसर्च, एनर्जी और एंवायरनमेंट से संबंधित इंडस्ट्री, एनिमल हसबैंड्री, डेयरी फार्मिंग, मेडिसन आदि में भी रोजगार के खूब मौके हैं।

अवसर : जैव प्रौद्योगिकी में बीई/बीटेक करने के उपरांत, आप सरकारी संगठनों औद्योगिक अनुसंधान परिषद, विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग एवं जैव प्रौद्योगिकी विभाग, में वैज्ञानिक और बायोटेकइंडस्ट्री, लेबोरेटरी, एजेंसियों में जैव वैज्ञानिक, सूचना वैज्ञानिक, क्षेत्र परीक्षण प्रबंधक या विश्वविद्यालयों में प्रोफेसर या व्याख्याता, के रूप में कार्य कर सकते हैं जैव प्रौद्योगिकी औद्योगिक विभाग, इंडस्ट्री, लेबोरेटरी में डिप्लोमाधारियों के लिए प्रयोगशाला सहायक/तकनीशियन, डाटा प्रोसेसर, आदि का पद है स्नातकोत्तर/पीएचडी धारियों के लिए बायोटेक्नॉलॉजी के क्षेत्र में अध्ययन करने के लिए अनुवांशिक इंजीनियर, वैज्ञानिक, शोध सहायक, आणविक जीव विज्ञान के क्षेत्र में बायोटेक्नॉलॉजी और प्रौद्योगिकी कंपनियों में डॉक्टर, वैज्ञानिक, वैज्ञानिक सहायक आदि पदों पर भर्ती की जाती है। वहीं डिग्री पाठ्यक्रमों में इस क्षेत्र से संबंधित नई तकनीकों के अलावा विभिन्न तरह का प्रशिक्षण कोर्स भी उपलब्ध हैं। अच्छी कम्यूनिकेशन स्किल और विश्लेषणात्मक क्षमता होना जरूरी है। बायोटेक्नॉलॉजी इंजीनियरिंग का एक उभरता हुआ कैरियर है जो अनुसंधान और विकास के लिए इंजीनियरिंग और जीव विज्ञान की संयुक्त शाखा है जैव प्रौधोगिकी का विश्व

व्यापार में महत्वपूर्ण योगदान है और यह रोजगार, उत्पादन एवं व्यापार में नये-नये अवसर पैदा कर रही है। मानव स्वास्थ्य की रक्षा के लिए जैव प्रौद्योगिकी अति महत्वपूर्ण है। मानोक्लोनल एन्टीबाडीज, डी.एन.ए. प्रोब, रिकाबिनेन्ट, वैक्सीन्स, जीन थेरेपी की तकनीक आदि रोग निदान के लिये उपयोगी हुए हैं। कोशिकाओं से विलग किये गये एन्लाइम्स खाध संसाधन, पेय सुधार, डिटर्जेन्ट, बायोसेन्सर बनाने में उपयोगी हैं। आणिवक जैविकी की तकनीकों के उपयोग से एन्जाइम्स के अमीनों अम्ल कणों में फेरबदल करके उनके गुणों में सुधार करने के कई प्रयास सफल हुए हैं।

मुख्य विषय : जैव प्रौद्योगिकी में मुख्य रूप से गणित, एप्लाइड साइंसेज, कंप्यूटर अनुप्रयोग, इंजीनियरिंग, आनुवंशिकी और कृषि आदि विषय शामिल हैं। बायोटेक्नॉलॉजी के क्षेत्र में मुख्य विषय के रूप में जेनेटिक्स, वाइरालॉजी, परिस्थितिकी, इम्मुनोलोगि, जैव सांख्यिकी, मछली पालन, जीव रसायन, औषध, कीटाणु-विज्ञान, आणविक जीव विज्ञान, पशुपालन, कृषि जैव प्रौद्योगिकी, पोषक अनुपूरक, जीवविज्ञान, जैव सूचना विज्ञान (कम्प्यूटर और जैव प्रौद्योगिकी का संयोजन), अनुसन्धान महामारी विज्ञान, रसायन विज्ञान, अजैविक तनाव प्रतिरोध, ऊर्जा उत्पादन और संरक्षण, प्रदूषण नियंत्रण, रोग अनुसंधान, पर्यावरण-संरक्षण, और दवाओं, टीकों, उर्वरकों और कीटनाशकों के अनुसंधान और विकास औद्योगिक जैव प्रौद्योगिकी, मेडिकल बायोटेक्नॉलॉजी (मेडिकल जैव प्रौद्योगिकी मनुष्यों के स्वास्थ्य को बेहतर बनाने के उद्देश्य से जीवित कोशिकाओं और अन्य सेल सामग्रियों का अध्ययन) ब्लू बायोटेक्नॉलॉजी (जैव प्रौद्योगिकी की यह शाखा समुद्री जीवों और जल-जनित जीवों को नियंत्रित करने में मदद करती है), आदि विषय शामिल है।

सैलॅरी : जैव प्रौद्योगिकी में पोस्ट ग्रेजुएट की डिग्री रखने वाले स्टूडेंट्स को शुरुआती दौर में 40-50 हजार रुपये प्रति माह सैलॅरी मिलने लगती है। यदि आपके पास डॉक्ट्रोरल डिग्री है, तो सैलॅरी 70-90 हजार रुपये शुरुआती महीनों में हो सकती है। विदेश में भी जॉब के अवसर तेजी से बढ़ रहे हैं। इनके लिए मुख्यत रोजगार के अवसर मेडिकल व फार्मास्युटिकल कंपनी, एग्रीकल्चर सेक्टर, प्राइवेट और सरकारी रिसर्च और डेवलपमेंट सेंटर में होते हैं। टीचिंग को भी करियर ऑप्शन के रूप में आजमा जा सकता है।

मुख्य संस्थान :

- एशिया पैसिफिक इंस्टिट्यूट , पानीपत
- अल्फा इंजीनियरिंग कॉलेज, चेन्नई, तमिलनाडु
- आर्यभट्ट ज्ञान विश्वविद्यालय, पटना, बिहार
- प्रौद्योगिकी और प्रबंधन संस्थान, भुवनेश्वर
- देव भूमि इंस्टिट्यूट ,देहरादून, उत्तराखंड
- सेट जू इंजीनियरिंग और प्रौद्योगिकी यूनिवर्सिटी, बंगलौर
- वासिरेड्डी वेंकटाद्री प्रौद्योगिकी संस्थान . गुंटूर, आंध्र प्रदेश
- श्री कृष्ण इंजीनियरिंग संस्थान, देहरादून
- तमिलनाडु एग्रीकल्चर यूनिवर्सिटी, कोयंबटूर
- राष्ट्रीय आणविक जीव विज्ञान रिसर्च केंद्र, हैदराबाद
- नेशनल इंस्टीटयूट ऑफ इम्यूनोलॉजी, नयी दिल्ली
- बायोकेमिकल इंजीनियरिंग रिसर्च एंड प्रोसेस डेवलॅपमेंट सेंटर, चंडीगढ़,
- थाडोमल शाहनी इंजीनियरिंग कॉलेज, मुंबई
- बेनेट विश्वविद्यालय, नयी दिल्ली
- द इंस्टीटयूट ऑफ जिनोमिक एंड इंटेग्रेटिव बायोलॉजी, दिल्ली
- रासायनिक प्रौद्योगिकी संस्थान मुंबई
- लॉर्ड्स यूनिवर्सल कॉलेज मुंबई
- चंडीगढ़ विश्वविद्यालय, चंडीगढ़
- इंडियन इंजीनियरिंग स्कूल एंड रिसर्च सेंटर, नवी मुंबई
- नेशनल इंस्टिट्यूट ऑफ इंजीनियरिंग, मैसूर
- डॉ बी.आर. अम्बेडकर राष्ट्रीय संप्रौद्योगिकी संस्थान, जालंधर

goswamisanjay80@yahoo.in

विज्ञान इस माह

दीवाली के पटाख़े और हमारी वैज्ञानिक सोच

इरफान ह्यूमन

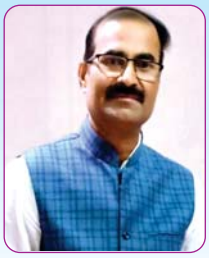

'रिसर्च न्यूज़ चैनल' में प्रोड्यूसर और 'साइंस टाइम्स न्यूज़ एण्ड व्यूज़' के संपादक। विज्ञान डाक्यूमेंट्री फ़िल्मों का निर्माण और लेखन। राष्ट्रीय एवं अंतराष्ट्रीय स्तर पर कई सम्मान और पुरस्कार प्राप्त। कई वैज्ञानिक संस्थाओं के मानद सदस्य।

यह एक संयोग ही है कि 14 नवम्बर को दिवाली और इसी दिन आधुनिक भारत के निर्माता कहे जाने वाले देश के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू का जन्म दिवस है, जिन्होंने देश को 'वैज्ञानिक मनोवृत्ति' का मंत्र दिया था। सबसे पहले बात करते हैं दिवाली के पटाखों की। अमावस्या की रात घर को रोशनी से जगमग करने की तैयारी में क्या गरीब और क्या अमीर सभी अपने-अपने तरीके से जुटे रहे हैं और पटाखों के बिना दिवाली की बात तो सोची ही नहीं जा सकती। आइए एक नज़र डालते हैं पटाखों से होने वाली पर्यावरणीय हानियों पर। पटाखे हमारे और पर्यावरण, दोनों के दुश्मन हैं। फूटते हुए पटाखे काफी अधिक मात्रा में धुआं और ध्वनि उत्पन्न करते हैं, जिससे पर्यावरण के साथ अंततः हमारा स्वास्थ्य ही प्रभावित होता है। नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल कोर्ट ने ऐसे पटाखों को गम्भीरता से लेते हुए 125 डेसिबल से अधिक आवाज वाले पटाखों पर प्रतिबंध लगा रखा है। इसके लिए सेंट्रल पॉल्यूशन कंट्रोल बोर्ड को नियंत्रण के लिए सभी राज्यों में प्रत्येक जिला प्रमुखों को सख्त निर्देश जारी किये गये हैं, इसके बावजूद तेज धमाकों वाले पटाखे फोड़े जाते हैं।

पटाखों में बेरियम नाइट्रेट, स्ट्रोंशियम, कॉपर, लिथियम, एंटीमोनी, सल्फर, पोटेशियम और एल्यूमिनियम जैसे हानिकारक रसायन मौजूद होते हैं। एंटीमोनी, सल्फाइड और एल्यूमीनियम जैसे तत्व अल्जाइमर रोग का कारण बन सकते है। इसके अलावा पोटेशियम और अमोनियम से बने परक्लोराइट फेफड़ों का कैंसर पैदा कर सकते हैं। बेरियम नाइट्रेट श्वसन संबंधी विकार, मांसपेशियों की कमजोरी और यहाँ तक कि गैस्ट्रोइंटेस्टाइनल जैसी समस्याओं का कारण बन सकते है वहीं कॉपर और लिथियम यौगिक हार्मोनल असंतुलन पैदा कर सकते हैं। पटाखों से निकलने वाली सल्फर डाई ऑक्साइड और नाइट्रोजन डाई ऑक्साइड गैसों व लेड समेत अन्य रसायनिक तत्वों के सूक्ष्म कणों की वजह से अस्थमा व दिल के मरीजों को काफी परेशानी होती है। पटाखों से निकलने वाले रसायन जानवरों के अलावा पौधों के लिए भी नुकसान पहुँचाते हैं। अतः ज़रा सा वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपना कर हम पटाखों से होने वाली हानियों से बच सकते हैं।

जहाँ वैज्ञानिक दृष्टिकोण की बात आती है वहाँ नेहरू जी की याद आती है। भारत में 14 नवम्बर को बाल दिवस मनाया जाता है और मौक़ा होता है बच्चों के प्रिय पंडित जवाहर लाल नेहरू के जन्म दिवस का, जिन्होंने देश को विज्ञान मंत्र देते हुए जनता से आह्वान किया था कि विज्ञान और केवल विज्ञान ही है जो एक ऐसे देश, जहाँ पीड़ित लोग रहते हैं, भूख और ग़रीबी, अस्वछता और निरक्षता, अन्धविश्वास और घातक रीतियां और विशाल संसाधनों के व्यर्थ हो जाने आदि से संबंधित समस्याओं का समाधान कर सकता है। नेहरू जी के समय देश में वैज्ञानिक अनुसंधान का वातावरण बनाने के लिए कई वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं और संस्थानों की स्थापना की गई और इसके बीच एक मंत्र दिया 'वैज्ञानिक मनोवृत्ति' का।

पंडित जवाहरलाल नेहरू ने 1946 में अपनी पुस्तक 'डिस्कवरी ऑफ इंडिया' में वैज्ञानिक मनोवृत्ति का उल्लेख किया था और उनका दृढ़ विश्वास था कि विज्ञान और प्रौद्योगिकी के द्वारा ही अपने देश का विकास संभव है। देश के लोग वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनायें इसके भी वह पक्षधर थे। यह उन्हीं की प्रेरणा थी कि 1958 में भारत सरकार ने विज्ञान नीति का प्रस्ताव स्वीकृत किया जिसके अंतर्गत विज्ञान के अनुसंधान और शोध कार्यों में तेजी से विकास करना और प्रगति को बनाये रखना सम्मिलित था। तत्पश्चात 1976 में भारत ही ऐसा प्रथम देश था जहाँ 'मानवतायुक्त वैज्ञानिक सोच' को देश के प्रत्येक नागरिक का मूलभूत कर्तव्य समझा गया। 1981 में कुछ अकादमिक

विद्वानों और बुद्धिजीवियों ने विस्तार से विचार-विमर्श के पश्चात वैज्ञानिक मनोवृत्ति पर एक वक्तव्य प्रचारित किया कि भारतीय समाज के हर व्यक्ति में वैज्ञानिक मनोवृत्ति का विकास करने की आवश्यकता है ताकि देश सामाजिक और आर्थिक बुराइयों से मुक्त होकर प्रगति की ओर तेज़ी से अग्रसर हो सके।

पं. जवाहर लाल नेहरू ने बहुत अच्छी बात कही कि हम चाहें जितनी प्रयोगशालाएं स्थापित कर लें, जितने भी यंत्र बना लें, अंधविश्वास और रूढ़ियों से ग्रस्त हमारा देश तब तक आगे नहीं बढ़ सकता जब तक हमारी जनता का दृष्टिकोण वैज्ञानिक नहीं बन जाता। वैज्ञानिक दृष्टिकोण एक विशेष मानसिकता है, जो हमें हर घटना या परंपरा को तर्क की कसौटी पर कसने के लिए प्रेरित करती है। साथ ही वह किसी वस्तु या घटना के बारे में क्या, क्यों और कैसे जानने की जिज्ञासा उत्पन्न करती हैं और ज्ञान प्राप्त करने की लालसा उत्पन्न करती है।

इसी तारतम्य में 1 नवम्बर, 2014 में प्रधानमंत्री ने पंडित जवाहरलाल नेहरू की 125वीं जयंती मनाने के लिए गठित राष्ट्रीय समिति की बैठक की अध्यक्षता करते हुए उम्मीद जताई थी कि इस संबंध में तमाम कार्यक्रम कुछ इस तरह से तय किए जाएं कि आम आदमी भी खुद को इन समारोहों का हिस्सा मान सकेगा। प्रधानमंत्री ने कहा कि इस अवसर का उपयोग निश्चित तौर पर युवा पीढ़ी के बीच 'चाचा नेहरू' के बारे में जागरूकता बढ़ाने और उनके जीवन तथा कार्यों से प्रेरणा लेने के लिए किया जाना चाहिए। उन्होंने देश भर में फैले स्कूलों में 14 नवंबर से 19 नवंबर के बीच आयोजित किए जाने वाले प्रस्तावित 'बाल स्वच्छता मिशन' और पं. नेहरू की 125वीं जयंती को 'बाल स्वच्छता वर्ष' के रूप में मनाने के प्रस्ताव पर प्रकाश डालने के साथ कहा था कि इन समारोहों का एक मुख्य उद्देश्य 'बच्चों में वैज्ञानिक मनोवृत्ति को बढ़ावा देना' होगा। अंधविश्वास को त्याग कर हमें वैज्ञानिक ढंग से सोचने और वैज्ञानिक ढंग से करने से ही पं. जवाहर लाल नेहरू को सच्ची श्रद्धाजलि होगी।

अंतरिक्ष में इस माह

10 नवंबर को बुद्ध ग्रह अपने महान पश्चिमी बढ़ाव (Greatest Western Elongation) पर होगा। इस दिन बुध ग्रह सूर्य से 19.1 डिग्री की सबसे बड़ी पश्चिमी बढ़ाव पर पहुँचेगा। बुध को देखने का यह सबसे अच्छा समय है क्योंकि यह सुबह के आकाश में क्षितिज के ऊपर अपने उच्चतम बिंदु पर होगा। सूर्योदय से ठीक पहले पूर्वी आकाश में नीचे ग्रह देखा जा सकेगा।

11-12 नवंबर को उत्तरी टॉरिड्स उल्का वर्षा (Northern taurids meteor shower) होगी। उत्तरी टॉरिड्स एक लंबे समय तक चलने वाला मामूली उल्का बौछार है जो प्रति घंटे केवल 5-10 उल्काओं का उत्पादन करता है। यह उल्का बौछार, हालांकि, उज्ज्वल आग के गोले के सामान्य प्रतिशत से अधिक उत्पादन के लिए प्रसिद्ध है। उत्तरी टॉरिड्स को क्षुद्रग्रह 2004 TG10 द्वारा पीछे छोड़े गए धूल के दानों द्वारा निर्मित है। यह सालाना 20 अक्टूबर से 10 दिसंबर तक चलता है। यह इस साल 11 वीं की रात और 12 वीं की सुबह को स्पष्ट देखी जा सकती है। पतले अर्धचंद्र चंद्रमा के चलते आकाश में अंधकार के चलते इस उल्का वर्षा को देखने में ज्यादा परेशानी नहीं होगी। शहर की रोशनी से दूर एक अंधेरे स्थान से आधी रात के बाद सबसे अच्छा दृश्य होगा। ये उल्काएं नक्षत्र वृष राशि (Constellation Taurus) से विकीर्ण होंगी, लेकिन आकाश में कहीं भी दिखाई दे सकती हैं।

16-17 नवंबर को लियोनिड्स उल्का बौछार (Leonids meteor shower) दिखाई देगी। लियोनिड्स एक औसत बौछार है, जो अपने चरम पर प्रति घंटे 15 उल्का का उत्पादन करती है। यह बौछार इस मायने में अनूठी है कि इसमें हर 33 साल में एक चक्रवाती शिखर होता है, जहाँ प्रति घंटे सैकड़ों उल्काएं देखी जा सकती हैं, जैसा कि वर्ष 2001 में हुआ था। लियोनिड्स धूमकेतु टेम्पेल-टटल द्वारा छोड़े गए धूल के कणों द्वारा निर्मित है, जिसे 1865 में खोजा गया था। यह उल्का वर्षा सालाना 6-30 नवंबर तक चलता है। यह 16 की रात और 17 तारीख की सुबह तक अपने चरम पर होगी। यह उल्काएं नक्षत्र लियो (Constellation Leo) से विकिरण करती प्रतीत होंगी, लेकिन आकाश में कहीं भी दिखाई दे सकती हैं।

30 नवंबर को पेनुमब्रल चंद्र ग्रहण दिखाई देगा। एक चंद्रग्रहण तब होता है जब चंद्रमा पृथ्वी की आंशिक छाया या पेनम्ब्रा से होकर गुजरता है। इस प्रकार के ग्रहण के दौरान चंद्रमा थोड़ा गहरा होगा लेकिन पूरी तरह से नहीं। ग्रहण पूरे उत्तरी अमेरिका, प्रशांत महासागर और जापान सहित पूर्वोत्तर एशिया में दिखाई देगा।

कहीं ये धड़कन रोक न दे

फुफ्फुसशोथ अर्थात निमोनिया (Pneumonia) एक ऐसा रोग है जो दुनिया के हर कोने में करोड़ों लोगों को प्रभावित करता है जिस कारण लगभग 4 मिलियन लोगों की मृत्यु हो जाती हैं। निमोनिया व्यापक रूप से कई बार फेफड़ों की सूजन की किसी भी स्थिति पर लागू किया जा सकता हैं और इस सूजन को अधिक सटीक रूप से न्यूमोनाइटिस कहा जाता है।

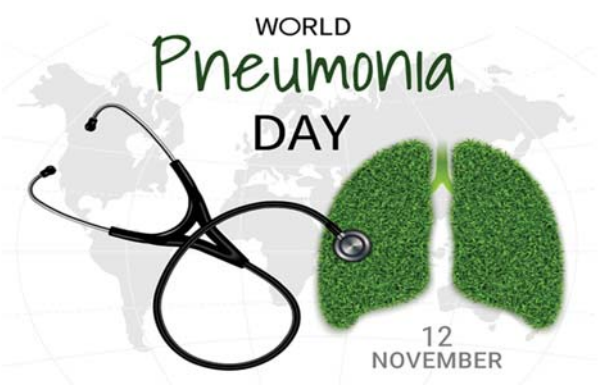

निमोनिया फेफड़े में सूजन वाली एक परिस्थिति है। यह रोग सदियों से कहर ढाता आ रहा है लेकिन 20वीं शताब्दी आते-आते प्रतिजैविक (Antibiotic) उपचार और टीकों के विकास के साथ इस रोग से पीड़ित लोगों की संख्या में कमी आई है। लेकिन आज भी विकासशील देशों में बुजुर्गों और शिशुओं में निमोनिया अभी भी मृत्यु का प्रमुख कारण बना हुआ है। 12 नवम्बर को विश्व निमोनिया दिवस (Wrold Pneumonia Day) मनाया जाता है।

निमोनिया का आम कारण बैक्टीरियम स्ट्रेप्टोकॉकस निमोनिया मुख्य रूप से जीवाणु या विषाणु द्वारा और कम आम तौर पर फफूंद और परजीवियों द्वारा होता है। हालांकि संक्रामक एजेंटों के 100 से अधिक उपभेदों (Strains) की पहचान की गयी है लेकिन अधिकांश मामलों के लिये इनमें केवल कुछ ही ज़िम्मेदार हैं। जीवाणु व विषाणु के मिश्रित कारण वाले संक्रमण बच्चों के संक्रमणों के मामलों में 45 प्रतिशत तक और वयस्कों में 15 प्रतिशत तक ज़िम्मेदार होते हैं। सावधानी के साथ किये गये परीक्षणों के बावजूद लगभग आधे मामलों में कारक एजेंट पृथक नहीं किये जा सकते हैं।

निमोनिया शिशु मृत्यु का सबसे बड़ा कारण रहा है। बॉयोटेक्नॉलॉजी एवं मॉलीक्यूलर मेडिसन विभाग के सहायक प्रोफेसर डॉ. हिमांशु का कहना है कि पीसीआर (पालीमरेज चेन रिएक्शन) जैसी बहुत ही मूल और बुनियादी तकनीक से भी एक साल से छोटे बच्चों में निमोनिया की बीमारी का आसानी से पता लगाया जा सकता है। टेस्ट के लिए बच्चों से मात्र एक या दो बूंद रक्त लिया जाता है और उसमें से डीएनए निकाला जाता है। पीसीआर तकनीक से मात्र एक दिन में बीमारी के बैक्टीरिया का पता लगाया जा सकता है। इस तकनीक से निमोनिया की बीमारी फैलाने वाले सारे ही बैक्टीरिया का पता लगाया जा सकता है। इससे बीमार का सटीक डायग्नोज हो सकेगा और उसे उचित इलाज मिल सकेगा।

निमोनिया के सन्दर्भ में वृद्धों की बात करें तो, ऐसे वृद्ध जो अपनी ख़ास जीवनशैली पर निर्भर रहते हुए रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने के लिए विटामिन-ई की खुराक ज़्यादा लेते हैं, उन्हें सावधान रहने की आवश्यकता है, क्योंकि इसके दुष्प्रभाव से भी निमोनिया हो सकता है। एक अध्ययन से पता चला है कि ज़्यादा धूम्रपान करने वाले और नियमित व्यायाम न करने वाले पुरुषों में विटामिन-ई की ज़्यादा मौजूदगी निमोनिया का ख़तरा 68 प्रतिशत तक बढ़ा देती है। इसके विपरीत, जो लोग धूम्रपान कम करते हैं और ख़ाली समय में व्यायाम करते हैं, उनमें विटामिन-ई की मौजूदगी निमोनिया के खतरे को 69 प्रतिशत कम कर देती है। फिनलैंड के हेलिसिंकी विश्वविद्यालय के रिसर्च स्कॉलर हारी हेमिला के अनुसार, 'विटामिन-ई का स्वास्थ्य पर प्रभाव लोगों की कई विशेषताओं और उनकी जीवनशैली पर निर्भर करता है।' ब्रिटिश जर्नल ऑफ न्यूट्रिशन में प्रकाशित शोधपत्र के लेखक का दावा है कि शोध का निष्कर्ष विटामिन-ई की खुराक और निमोनिया के ख़तरों के बारे में इस अवधारणा का खंडन करता है कि विटामिन-ई हर इंसान पर एक समान प्रभाव डालता है.

निमोनिया की रोकथाम व नियंत्रण के लिए शुरू हुई राष्ट्रीय स्तर पर शोध में देश के जोधपुर को भी शामिल किया गया है, जहाँ डॉ. एसएन मेडिकल कॉलेज की एथिकल कमेटी ने इस शोध को मंजूरी दे दी है। करीब एक साल चलने वाली इस शोध के दौरान निमोनिया से पीड़ित छह सप्ताह से पांच वर्ष तक के 1500 बच्चों के नमूने लेकर जाँच कराई गई है। पूरे देश में विभिन्न इलाकों में एक साथ हो रही रिसर्च से इस बात का पता चलेगा कि किस क्षेत्र में निमोनिया के जनक कौन से बैक्टीरिया की सिरोटाइप एक्टिव है। विश्व में न्यूमोकोकल बैक्टीरिया की 91 सिरोटाइप हैं, जिनसे निमोनिया होता है। इनमें 23 सिरोटाइप ज़्यादा ख़तरनाक हैं। इनमें भी सिरोटाइप 19(ए व बी), 6 व 3 महत्वपूर्ण हैं, लेकिन अभी तक इसको लेकर शोध चल रहे हैं और इसके चलते ज़्यादातर चिकित्सक लक्षण के आधार पर ही उपचार करते हैं। बैक्टीरिया की मौजूदगी पता चलने से उपचार उपयुक्त एंटीबायोटिक से हो सकेगा। इस रिसर्च के परिणाम निमोनिया की रोकथाम के लिए समुचित टीकाकरण में भी सहायक होंगे।

हेमोफ़िलस इन्फ्लुएंज़ा और स्ट्रेप्टोकॉकस निमोनिया के विरुद्ध टीकाकरण के अच्छे साक्ष्य उपलब्ध है। स्ट्रेप्टोकॉकस निमोनिया के विरुद्ध बच्चों को टीकाकरण प्रदान करने से वयस्कों में इसके संक्रमण में कमी आयी है, क्योंकि कई सारे वयस्क इस संक्रमण को बच्चों से ग्रहण करते हैं। एक स्ट्रेप्टोकॉकस निमोनिया टीका वयस्कों के लिये उपलब्ध है और इसको हमलावर निमोनिया रोग के जोखिम को कम करता पाया गया है। अन्य वे टीके जिनमें निमोनिया के विरुद्ध रक्षा प्रदान करने की क्षमता है, उनमें परट्यूसिस, वेरिसेला और चेचक के टीके शामिल हैं। समूह बी स्ट्रेप्टोकॉकस और क्लामीडिया ट्रैकोमेटिस के लिये गर्भवती महिलाओं का परीक्षण और आवश्यकता पड़ने पर प्रतिजैविक उपचार का प्रबंध करना शिशुओं में निमोनिया की दर को कम करता है।

किसी व्यक्ति को निमोनिया, जुकाम और ब्रॉन्काइटिस जैसे सांस संबंधी इंफेक्शंस होने से दिल का दौरा पड़ने का ख़तरा 17 गुना तक बढ़ जाता है। इंटरनल मेडिसिन जर्नल में प्रकाशित एक शोधपत्र में सिडनी विश्वविद्यालय के प्रोफ़ेसर और हार्ट स्पेशलिस्ट जिओफ्री टोफलर ने कहा कि हमारे निष्कर्ष पहले की सुझावों की पुष्टि करते हैं कि सांस संबंधी संक्रमण दिल के दौरे का जोखिम बढ़ाने का काम करते हैं। टोफलर ने कहा है कि सांस संबंधी संक्रमण दिल के दौरे का ख़तरा क्यों बढ़ाते हैं, इसके संभावित कारण में ख़ून का थक्का जमने की प्रवृत्ति, सूजन और रक्त वाहिकाओं को विषाक्त पदार्थ से नुकसान और ख़ून के बहाव में बदलाव शामिल है। इसके अलावा जो लोग मध्यम ऊपरी श्वसन नलिका में संक्रमण के लक्षणों जैसे कि जुकाम, फैरेगिंटिस, राहिनिटिस और

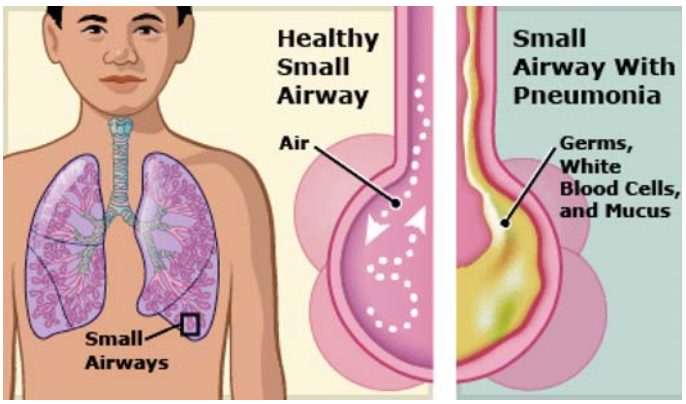

सिनुसिटिस से पीड़ित हैं उनमें दिल का दौरा पड़ने का खतरा 13 गुना होता है। भारत सहित एशिया के अन्य देशों पर निमोनिया की मार सबसे अधिक है। निमोनिया से लड़ने के लिए बनी संस्था एशियन स्ट्रेटेजिक अलायंस फॉर न्यूमोकोकल डिज़ीज़ प्रीवेंशन के भारत चौप्टर के चेयरमैन डॉ. नितिन शाह ने कहा कि भारत में दो जीवाणुओं से बच्चों को होने वाले जानलेवा निमोनिया को टीके से रोका जा सकता है। स्ट्रेप्टोकोकस निमोनिया एवं हीमोफ़ीलियस इंफ्लूएंजा टाइप टू (एचबी) को भारत में निमोनिया के बड़े कारणों में शुमार किया गया है। डॉ. शाह ने कहा कि केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय ने फाइव इन वन (पेंटावेलेंट) टीके की शुरुआत कर निमोनिया को रोकने की दिशा में सकारात्मक कदम उठाया है।

कोरोनाकाल में मधुमेह जोखिम

अस्पतालों में कोविड-19 मौतों का क्वार्टर मधुमेह रोगियों का थाया कोविड-19% टाइप 1 डायबिटीज वाले लोगों में टाइप 2 - अध्ययन वाले लोगों की तुलना में मरने की संभावना अधिक होती है"। कोरोनाकाल में आपने सुर्खियाँ देखी होंगी। आज यह समझने के लिए अधिक शोध की आवश्यकता है कि मधुमेह कोविड-19 से मृत्यु का जोखिम क्यों बढ़ाता है। अध्ययन में पाया गया है कि लोगों के साथ 2 मधुमेह टाइप कोविड-19 और लोगों के साथ मरने की संभावना दोगुनी है और 1 मधुमेह टाइप मधुमेह से पीड़ित लोगों की तुलना में कोविड-3.5 को पकड़ने पर 19 गुना अधिक मृत्यु होती है। हालांकि, मधुमेह के किसी भी रूप वाले लोगों में मृत्यु का सबसे बड़ा निर्धारण जोखिम कारक है, जिन्हें कोविड-19 मिलता है। इंग्लैंड में एनएचएस द्वारा नए निष्कर्षों के मुताबिक 40 से कम उम्र के लोगों की तुलना में 40 से अधिक लोगों की तुलना में बहुत कम जोखिम है, और विशेष रूप से पुराने रोगियों की तुलना में। महत्वपूर्ण रूप से, यह भी पता चलता है कि उच्च रक्त शर्करा का स्तर और मोटापा दोनों प्रकार के मधुमेह में जोखिम को और बढ़ाता है।

14 नवम्बर को विश्व मधुमेह दिवस (Wrold diabetes day) मनाया जाता है। मधुमेह को जानना बहुत ज़रूरी है, क्योंकि यह हमारे खानपान से लेकर हमारे जीवन से जुड़ा है। सामान्य स्वस्थ व्यक्ति में खाने के पहले रक्त और ग्लूकोज़ का स्तर 70 से 100 mg/dl (मिलीग्राम प्रति डेसीलीटर) रहता है। खाने के बाद यह स्तर 120-140 mg/dl हो जाता है और फिर धीरे-धीरे कम होता चला जाता है। पर मधुमेह हो जाने पर यह स्तर सामन्य नहीं हो पाता और कभी-कभी तो यह स्तर 500 mg/dl से भी ऊपर चला जाता है। मधुमेह एक ऐसी बीमारी हैं जिसमें रोगी के ख़ून में ग्लूकोज की मात्रा आवश्यकता से अधिक हो जाती है। ऐसा दो कारणों से हो सकता है या तो शरीर पर्याप्त मात्रा में इंसुलिन का उत्पादन नहीं कर होता है या फिर कोशिकाएं उत्पन्न हो रही इंसुलिन पर प्रतिक्रिया नहीं कर पाती है। इंसुलिन एक हार्मोन है जो आपके शरीर में कार्बोहाइड्रेट और वसा के चयापचय को नियंत्रित करता है। चयापचय से अर्थ है उस प्रक्रिया से जिसमे शरीर खाने को पचाता है ताकि शरीर को उर्जा मिल सके, जिससे उसका विकास हो सके।

एक शोध में यह दावा किया गया है कि नए इंसुलिन से डायबिटीज का इलाज संभव है। इस शोध में ग्लाइको-इंसुलिन के बारे में शोध कर बताया गया है कि डायबिटीज रोगियों के लिए पंप इन्फ्यूजन की जरूरत होती है जो फाइब्रिल निमार्ण के जरिए इंसुलिन का निर्माण करता है। यह प्रक्रिया इंसान के जीवन को कम करने वाली भी होती है। जबकि ग्लाइको-इंसुलिन के माध्यम से फाइब्रिल निर्माण के बिना ही इंसुलिन जैसा असर मिल सकता है। ग्लाइको-इंसुलिन की अवधारणा ग्लाइकोलिसिस (Glycolysis) या ग्लाइको अपघटन पर आधारित है, जो एक तरह से श्वसन की पहली स्थिति होती है जो कोशिका द्रव में होती है. इस क्रिया में ग्लूकोज का आंशिक आक्सीकरण होता है। डायबिटीज रोगियों के लिए नए शोध में इस प्रक्रिया पर आधारित ग्लाइको-इंसुलिन निर्माण की बात कही गयी है। अभी इस शोध को कई क्लीनिकल ट्रायल से गुजरना होगा। यदि यह सफल होता है, तो डायबिटीज रोगियों के इलाज में सरलता आएगी।

मधुमेह को नियंत्रण में रखने के लिए प्रतिदिन व्यायाम करना चाहिए, जो न सिर्फ तनाव को कम करती है, बल्कि ये रक्त दाब और कोलेस्ट्रेल स्तर को भी नियंत्रित करने में सहायता करती है। इसके अतिरिक्त आप ऐसा भोजन अवश्य खाएं, जिनमें फ़ाइबर की मात्रा अधिक हो। महिलाओं को विशेष ध्यान रखना चाहिए कि शरीर के वज़न का ज़्यादा होना यानी मोटापा होना न तो हमारे स्वास्थ्य की दृष्टिकोण से अच्छा है और न हीं व्यक्तित्व के आकर्षण की दृष्टिकोण से ही । वज़न बढ़ना हमारे शरीर की एक ऐसी अवस्था है जब शरीर मे वसा की मात्रा अधिक हो जाती है । हम जितनी कैलोरी (Calories) ले रहे है अगर उस अनुपात में हम ख़र्च नहीं कर रहे तो बची हुई कैलोरी हमारे शरीर में वसा के रूप में जमा हो जाती है और हम धीरे-धीरे मोटापा के शिकार हो जाते हैं, जो आगे चलकर मधुमेह को जन्म दे सकता है।

बच्चा समय से पहले पैदा हो तो

सामान्यतः शिशु का जन्म गर्भकाल के 37 से 40 सप्ताह के बीच होता है। यदि किसी कारणवश शिशु का जन्म 37 सप्ताह से पूर्व होता है तो समय पूर्व प्रसव कहा जाता है और इस समय जन्म लेने वाले बच्चे अपरिपक्त होते है। इन बच्चों का वज़न भी सामान्य शिशु की तुलना में कम होता है। ऐसे शिशु को सामान्य शिशु की अपेक्षा विशेष देखभाल की आवश्यकता होती है। अपरिपक्त जन्म के बारे में जागरूकता बढ़ाने और दुनिया भर के अपरिपक्व शिशुओं और उनके परिवारों की चिंताओं को दृष्टिगत

रखते हुए हर वर्ष इस दिन का आयोजन किया जाता है। 17 नवम्बर को विश्व कुसमयता दिवस (World prematurity day) मनाया जाता है।

कई बार महिला के खराब स्वास्थ्य के कारण बच्चे की प्रसव जल्दी करनी पड़ती है। ऐसे में बच्चे सामान्य बच्चों की तुलना में कम वजन के पैदा होते हैं। ऐसे बच्चों को भविष्य में ओस्टियोपेनिया का ख़तरा होने की संभावना होती है। समय से पहले पैदा हुए कम वजन वाले अपरिपक्व शिशुओं (वीएलबीडब्ल्यू) बच्चों को भविष्य में ओस्टियोपेनिया होने का ख़तरा होता है। इसमें बच्चों की हड्डियां कमज़ोर (ओस्टियोपेनिया) हो जाती हैं और इनके भविष्य में टूटने के ख़तरे बने रहते हैं। यह निष्कर्ष एक नए शोध सामने आया है।

'कैल्सिफाइड टिशू इंटरनेशनल एंड मस्क्यूलोस्केलेटल रिसर्च' में प्रकाशित एक शोध के अनुसार, प्रतिदिन किए जाने वाले श्रम को बढ़ाने से हड्डियों पर प्रभाव पड़ता है या नहीं। दिनचर्या के सामान्य कार्यो से बड़ी हड्डियों की मजबूती तथा उनके चयापचय पर सकारात्मक असर पड़ता है। इस शोध के निष्कर्ष निकालने के लिए 34 वीएलबीडब्ल्यू बच्चों पर शोध किया गया। शोध के शुरुआत में सभी शिशुओं के औसत बोन मास की तुलना की गई। शोध के दौरान सभी समूहों में इसमें कमी पाई गई, हालांकि सभी बच्चों के वजन में बढ़ोतरी देखी गई। वहीं जिन 13 शिशुओं ने रोज़ाना दो बार व्यायाम किया, उनके बोन मास में होने वाली कमी की दर बेहद कम देखी गई। वहीं बाकी बचे जिन 12 शिशुओं ने प्रतिदिन एक बार कसरत की या जिन्हें अलग रखा गया, उनके बोन मास में कमी की दर पहले समूह की तुलना में अधिक देखी गई।

समय से पूर्व पैदा होने वाले नवजातों में मृत्यु तथा शारीरिक व तंत्रिका संबंधी विकलांगता का ख़तरा अधिक होता है। ये अध्ययन द स्टॉकहोम इन्वायरमेंट इंस्टीट्यूट एट द यूनिवर्सिटी ऑफ यॉक के एक दल की अगुवाई में हुआ है, जो इंवायरमेंट इंटरनेशनल जर्नल में प्रकाशित हुई है। इस अध्ययन में कहा गया है कि जो 27 लाख नवजात समयपूर्व पैदा हुए थे उनमें 18 प्रतिशत मामले फाइन पार्टिकुलेट मैटर से संपर्क में आने से जुड़े हुए हैं। मधेपुरा में केयर इंडिया के डॉ. के. सुब्रमण्यम ने बताया कि नवजात शिशु मृत्यु के लिए आम तौर पर तीन मुख्य कारण हैं-श्वासावरोध, संक्रमण और अपरिपक्व जन्म की जटिलताएं हैं। इसमें से अपरिपक्त जन्म विशेष रूप से महत्वपूर्ण है, क्योंकि अपरिपक्व बच्चे को परिपक्त बच्चे के मुकाबले श्वासावरोध या संक्रमण से मृत्यु का अधिक ख़तरा होता है। उन्होंने कहा कि कम हो रही नवजात मृत्यु दर के साथ अपरिपक्व जन्म का नवजात मृत्यु दर में योगदान उसी अनुपात में बढ़ जाता है।

समय पूर्व जन्मे शिशु में प्रोटीन की अधिक आवश्यकता होती है। जो माँ के दूध में सर्वोत्तम रूप में पाया जाता है। क्योंकि मां के दूध में प्रोटीन एवं अन्य तत्वों की मात्रा शिशु की आवश्यकता अनुसार घटती-बढ़ती रहती है। इस तरह के शिशु में कैल्सियम, फ़ासफोरस, सोडियम, कॉपर, सेलेनियम, आयरन एवं ज़िंक की आवश्यकता होती है, जिसे अलग से दिया जाना चाहिए।

शौचालय की सोच

कई प्रयासों के बावजूद भारत में खुले में शौच से रोजाना कई टन मल पर्यावरण के संपर्क में आता है, जिसके कारण बच्चों पर इसका सीधा असर होता है। नियम से हाथ न धोने और उनके घरों और समुदायों में पानी के सूक्ष्मजीवों से डायरिया और अन्य जलजनित रोगों के फैलने का खतरा बढ़ जाता है। मल के केवल एक ग्राम में लाखों वायरस, बैक्टीरिया और परजीवी सिस्ट शामिल होते हैं, और यह भारत में पांच साल से कम उम्र के बच्चों में डायरिया से होने वाली लगभग 100,000 मौतों का कारण बनता है। बीमार बच्चे कुपोषण, स्टंटिंग (बौनापन) तथा समय-समय पर होने वाले संक्रमण, जैसे कि निमोनिया, का शिकार बन जाते हैं। साल 2014 से भारत सरकार ने यूनिसेफ की साझेदारी में खुले में शौच मुक्त लक्ष्य तक पहुँचने में उल्लेखनीय प्रगति की है। जनवरी 2020 की स्थिति के अनुसार 36 राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों के 706 जिलों और 603,175 गांवों को खुले में शौच मुक्त घोषित कर दिया गया है। 19 नवम्बर को विश्व शौचालय दिवस (World Toilet Day) मनाया जाता है।

खुले में शौच से मुक्ति का अभियान एक बड़ी चुनौती है, जिसका अशिक्षा और गरीबी से गहरा नाता है। सार्थक शिक्षा और गरीबी दूर किये बिना स्वच्छ भारत का सपना साकार नहीं हो सकता, इसकी जागरूकता में विद्यार्थी अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। जब स्वच्छ भारत मिशन को अक्टूबर 2014 में लॉन्च किया गया था, तो अनुमानतः 550 मिलियन भारतीय खुले में शौच के लिये मजबूर थे जिससे देश का स्वच्छता संकेतक दुनिया में सबसे बुरी स्थिति में था लेकिन अक्टूबर 2014 से लेकर अब तक स्वच्छ भारत मिशन (ग्रामीण) के तहत ग्रामीण भारत में 7.7 करोड़ से भी अधिक शौचालयों का निर्माण किया जा चुका है और स्थिति को और बेहतर बनाने की दिशा में प्रयास जारी हैं।

आज भी गाँवों में अधिकांशतः शौचालय नहीं हैं। आंकड़े बताते हैं कि दुनिया में हर तीन में से एक महिला को सुरक्षित शौचालय की सुविधा उपलब्ध नहीं है। खुले में शौच के लिए विवश होने का कारण महिलाओ और बालिकाओ की निजता सम्मान पर बुरा प्रभाव पड़ता है और उनके खिलाफ हिंसा तथा बलात्कार जैसी घटनाओ की आशंका बनी रहती है। देश में स्वच्छता और शौचालय को लेकर चलाए जा रहे अभियान के बावजूद आज भी गांवों के लोग खुले में शौच की आदत अपनाए हुए हैं। भारत की वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार गाँवो में 67 प्रतिशत और शहरो में 13 प्रतिशत परिवार खुले में शौच करते हैं। गैरसरकारी संगठन रिसर्च इंस्टीटीयूट ऑफ कंपेशनेट इकोनामिक्स के मुताबिक देश के 40 प्रतिशत जिन घरों में शौचालय हैं, इसके बावजूद

उनमे से प्रत्येक घर से एक सदस्य नियमित रूप से खुले में शौच के लिए जाता है।

संयुक्त राष्ट्र के अनुसार विश्व की अनुमानि ढाई अरब आबादी को पर्याप्त स्वच्छता मयस्सर नहीं है और एक अरब वैश्विक आबादी खुले में शौच को अभिशप्त हैं उनमे से आधे से अधिक लोग भारत में रहते हैं परिणामस्वरूप बीमारियां उत्पन्न होने के साथ साथ पर्यावरण, विशेषतः जल दूषित होता। इसलिए सरकार इस समस्या से उबरने के लिए स्वच्छ भारत अभियान चला रही है लेकिन एक सर्वेक्षण के अनुसार खुले में सौच जाना एक तरह की मानसिकता दर्शाता है। इसके मुताबिक सार्वजनिक शौचालयों में नियमित रूप से जाने वाले लगभग आधे लोगो और खुले में शौच जाने वाले इतने ही लोगों का कहना है कि यह सुविधाजनक उपाया है। ऐसे में स्वच्छ भारत के लिए सोच में बदलाव की ज़रुर दिखती है।

कोरोनाकाल और स्मार्ट शहर

इंस्टिट्यूट फॉर मैनेजमेंट डिवेलपमेंट (स्विट्जरलैंड) ने सिंगापुर यूनिवर्सिटी फॉर टेक्नॉलजी एंड डिजाइन के साथ मिलकर 2020 का जो स्मार्ट सिटी इंडेक्स (एससीआई) जारी किया है, उसमें भारत के चार शहर शामिल हैं, जिसकी खास बात यह कि चारों की रैंकिंग में पिछले साल के मुकाबले अच्छी-खासी गिरावट दर्ज हुई है। इसके कारणों पर जाने से पहले यह जानना जरूरी है कि एससीआई-2020 इस मायने में भी विशिष्ट है कि इसे वैश्विक महामारी कोरोना के कहर के दौरान ही तैयार किया गया है। दुनिया भर के 109 शहरों में से हर शहर के 120 निवासियों से इस रिपोर्ट के लिए बातचीत अप्रैल और मई के महीनों में की गई जब लोग कोरोना के आतंक के साये में थे और ज्यादातर शहर लॉकडाउन से गुजर रहे थे। 30 नवम्बर को जीवन के लिए शहर दिवस (Cities for life day) मनाया जाता है।

स्मार्ट शहरों की इस रिपोर्ट में यह बात सामने आई है कि अलग-अलग शहरों और वहां के निवासियों के नजरिये पर इस महामारी ने किस तरह का प्रभाव डाला है। वैसे इस इंडेक्स के संदर्भ में स्मार्ट सिटी का मतलब ऐसे शहरों से है जहाँ टेक्नॉलॉजी का इस्तेमाल शहरीकरण के फायदों को बढ़ाने और इसके नुकसानों को कम करने में होता हो। इसमें रैंकिंग तय करने के लिए आर्थिक और तकनीकी आंकड़े तो लिए ही जाते हैं, लेकिन खास जोर इस बात पर होता है कि शहर में रहने वाले नागरिक उसको कितना स्मार्ट मानते हैं। सो इन कसौटियों पर अपने देश के चारों शहर पहले से बदतर पाए गए। हैदराबाद 67वें से 85वें, नई दिल्ली 68वें

से 86वें, मुंबई 78वें से 93वें और बेंगलुरु 79वें से 95वें नंबर पर आ गया। अन्य बातों के अलावा इसका एक सीधा मतलब यह भी है कि कोरोना के दौर में हमारे देश के शहरों में रह रहे लोगों का भरोसा डगमगा गया था।

भारत में 100 नगरों को स्मार्ट नगरों के रूप में विकसित करने का संकल्प किया था। सरकार ने 27 अगस्त, 2015 को 98 प्रस्तावित स्मार्ट नगरों की सूची जारी कर दी। सरकार की योजना के अनुसार 20 स्मार्ट सिटी घोषित किये, जिसमें क्वालिटी ऑफ लाइफ के लिए कुछ मानक निर्धारित किये गये हैं, जैसे किफायती घर, हर तरह का इन्फ्रास्ट्रक्चर, पानी और बिजली चौबीसों घंटे, शिक्षा के विकल्प, सुरक्षा, मनोरंजन और खेल के साधन, आसपास के इलाकों से अच्छी और तेज़ कनेक्टिविटी, अच्छे स्कूल और अस्पताल, बिजली और पानी और सप्ताह में 24 घण्टे पानी और बिजली सप्लाई। यहीं नहीं 100 फीसदी मीटर सहित घरों में बिजली कनेक्शन साथ ही कोई बिजली-पानी चोरी न कर पाए, ऐसी व्यवस्था रहेगी। ऐसे घरों में प्रति व्यक्ति कम से कम 135 लीटर पानी दिया जा सकेगा।

स्मार्ट सिटी में स्वास्थ्य की बात की जाए तो ऐसे शहरों में इमरजेंसी रिस्पॉन्स टाइम 30 मिनट से ज़्यादा नहीं होगा। हर 15 हजार लोगों पर एक डिस्पेंसरी होगी। एक लाख की आबादी पर 30 बिस्तरों वाला छोटा अस्पताल, 80 बिस्तरों वाला मीडियम अस्पताल और 200 बिस्तरों वाला बड़ा अस्पताल होगा। हर 50 हजार लोगों पर एक डायग्नोस्टिक सेंटर होगा। यही नहीं स्मार्ट शहरो में 100 फीसदी घरों तक वाईफाई कनेक्टिविटी होगी और 100 एमबीपीसी की स्पीड पर वाईफाई मिल सकेगी। शिक्षा की बात की जाए तो स्मार्ट सिटीज़ में 15 फीसदी इलाका एजुकेशनल इंस्टीट्यूट्स के लिए होगा।

research.org@rediffmail.com

पुस्तक शृंखला

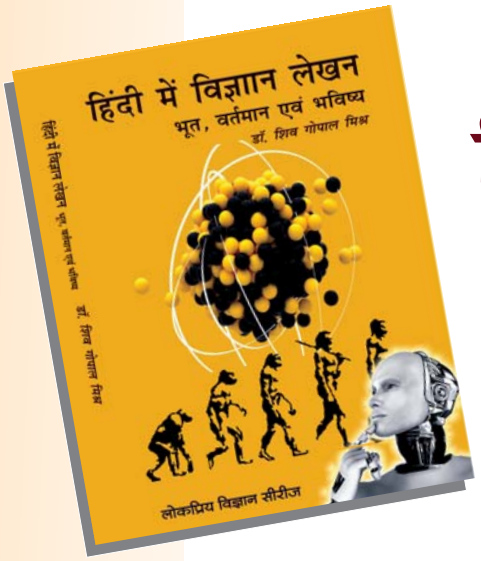

हिन्दी में विज्ञान लेखन

डॉ. शिव गोपाल मिश्र

आप्तवचन है- तमसो मा ज्योतिर्गमय

यह तम या अंधकार अज्ञान है जिससे निकल कर ज्योति अर्थात् प्रकाश में जाने की आकांक्षा है। स्पष्ट है कि यह अज्ञान से निकलकर ज्ञान की ओर यात्रा करने का आह्वान है। यह ज्ञान जब विशिष्ट प्रकार का ज्ञान हो तो उसे विज्ञान कहते हैं। प्राचीन साहित्य में ज्ञान-विज्ञान साथ साथ प्रयुक्त मिलते हैं।

वर्तमान काल में विज्ञान अंग्रेजी शब्द Science का पर्याय बन चुका है। विज्ञान वह ज्ञान है जिसमें भौतिक जगत के बारे में सूक्ष्मातिसूक्ष्म जानकारी प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है। विज्ञान ज्ञान की विधा है। जिस तरह साहित्य मनोभावों का कोश है, उसी तरह विज्ञान भौतिक जगत की रचना की निर्देशिका है। साहित्य के साथ विज्ञान का संयोग मन तथा तन का संयोग है, अन्तर्जगत और बाह्य जगत का मिलन है।

पाश्चात्य जगत ने विज्ञान में जैसी उन्नति की है, उससे अब सारा विश्व चमत्कृत है। विश्व का हर देश, हर व्यक्ति, हर पुरुष, हर नारी उससे अवगत होकर उससे लाभान्वित होना चाहता है। विज्ञान मनुष्य को उन्नति की दिशा दिखलाने वाला ज्ञान बन चुका है।

अब विज्ञान अनेक शाखाओं-प्रशाखाओं में बँटकर अपनी पूर्णता प्राप्त करने के लिए अहर्निश प्रयासरत है। विज्ञान के ज्ञाता यानी विज्ञानी वह सब कुछ करने में लगे हैं, जिससे मानव-कल्याण हो। विज्ञान का मार्ग कल्याण का, सुख शान्ति का मार्ग है,बशर्ते कि मनुष्य विवेक का सहारा ले।

ऐसे ज्ञान को प्राप्त करके उस ज्ञान को जन जन तक पहुँचाना, जनकल्याण की दिशा में सही मार्ग होगा। ज्ञान पहुँचाने का यह कार्य लेखन द्वारा होता आया है। ज्ञान को किसी न किसी रूप में मन-मस्तिष्क में संचित करके उसे व्यक्त करना अनिवार्य है। इसीलिए विज्ञानवेत्ताओं या विज्ञानियों ने विज्ञान लेखन को वरीयता दी है। जिस ज्ञान को वे प्रयोगों द्वारा प्राप्त करते रहे हैं, उसे वे अपनी लेखनी से प्रकट भी करते आये हैं और इस ज्ञान को विभिन्न स्तर के लोगों तक पहुंचाने का कार्य विज्ञान लेखक करते रहे हैं। विज्ञान लेखक को विज्ञान का ज्ञाता होना होता है अन्यथा वह अपना कार्य कुशलतापूर्वक नहीं कर सकता। इस प्रकार विज्ञान लेखन स्वयं किसी वैज्ञानिक द्वारा या फिर उसके ज्ञान से लाभान्वित व्यक्ति द्वारा किया जाता है। ऐसा लेखन पुराकाल से होता आया है और आगे भी होता रहेगा-भले ही भाषा एवं विचारों को व्यक्त करने के साधन बदल जायँ।

विज्ञान लेखन का उद्देश्य प्रयोग द्वारा अर्जित एवं संचित ज्ञान को, विशेष ज्ञान को, अधिकाधिक लोगों तक पहुंचाना है जिससे वे जागरूक हो सकें और इस ज्ञान से लाभान्वित हो सकें।

यह संसार अति विस्तीर्ण है। इसके विभिन्न भूभागों में सभ्यता के विभिन्न स्तरों को प्राप्त लोग रह रहे हैं। वे सभी अपने जीवन को बेहतर बनाना चाहते हैं किन्तु उन सबों को वह ज्ञान प्राप्त नहीं जिससे ऐसा कर सकें। इसीलिए उन्हें विकसित देशों का मुंह ताकना पड़ता है- स्वयं को विकासशील श्रेणी में रखकर विकसित श्रेणी प्राप्त करने का सपना देखना पड़ता है।

विज्ञान संसार के कोने कोने तक पहुंचे,इसके लिए शिक्षित वर्ग सदैव प्रयत्नशील रहा है। यह वर्ग विज्ञान की शिक्षा-दीक्षा ग्रहण कर उसमें पारंगत होकर उसे वितरण करने का प्रयास करता आया है। वह विज्ञान लेखन द्वारा जन-जन को विज्ञान में दीक्षित करने का प्रयास करता रहा है। वह विज्ञान के व्यावहारिक पक्ष को उजागर करता रहा है।

आज विज्ञान जिस लक्ष्य तक पहुँचा है, उसे प्राप्त करने में सदियाँ लगी हैं फलतः प्रारम्भिक विज्ञान का स्तर निश्चित रूप से आज के स्तर से निम्न एवं भिन्न था किन्तु तब उसे उसी रूप में समझने-समझाने की जरूरत थी। आज अब के विज्ञान स्तर के अनुरूप विज्ञान को समझने-समझाने के लिए लेखन होना है। स्पष्ट है कि समय बीतने के साथ विज्ञान लेखन का स्वरूप बदलता रहा और जो भाषाएँ प्रयुक्त होती रही होंगी, उनमें भी बदलाव आया होगा।

हमारे देश में पुराकाल में संस्कृत विज्ञान की भाषा रही। वर्तमान में हिन्दी विज्ञान की भाषा है जिसे राष्ट्रभाषा होने का गौरव प्राप्त है।

सम्प्रति विज्ञान लेखन में राष्ट्रभाषा हिन्दी का परिष्कृत रूप प्रयुक्त हो रहा है किन्तु प्रायः इसे सरल बनाने की आवश्यकता जताई जाती है। एक बार जब विज्ञान के शास्त्रीय स्वरूप के अनुरूप संस्कृतनिष्ठ हिन्दी (खड़ी बोली का परिष्कृत रूप) को विज्ञान लेखन के लिए स्वीकृत कर लिया गया- विविध भाषाओं के विद्वानों की सहमति से, तो फिर उसके प्रयोग पर आपत्ति क्यों? विज्ञान के लिए भी अन्य शास्त्रों (अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र) की ही तरह की भाषा प्रयुक्त होनी है तभी तो वह अर्थवहन कर पावेगी। यह अर्थवहनीयता पारिभाषिक शब्दों के बल पर सम्भव है। इसीलिए विज्ञान के अंग्रेजी पारिभाषिक शब्दों को हिन्दी पर्यायों में बदला जा चुका है और इन पारिभाषिक शब्दों के कोश तैयार किये जा चुके हैं तथा सरकार की यही मंशा रही है कि इन पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग करके विज्ञान की भाषा को अर्थपूर्ण एवं प्रांजल बनाया जाय। इसे ग्रामीण भाषा (बोली) से भिन्न भाषा होनी है। इसे आम बोलचाल की भाषा से ऊपर उठना है, तभी विभिन्न प्रदेशों में इसकी एकसमान भावप्रेषणीयता होगी। विज्ञान की शब्दावली को क्लिष्ट कहने वाले भूल जाते हैं कि विज्ञान में पारंगत विद्वानों के विचार-विनिमय की भी भाषा यही है। इसे शिष्ट समाज की भाषा होनी है। विश्वस्तर पर विचारों के आदान-प्रदान की भाषा होनी है। देश की जनता के जीवन-स्तर को

सुधारने में विज्ञान की उपादेयता इसी भाषा के माध्यम से साकार की जानी है।

इस बिन्दु पर हमें पीछे मुड़कर अपने प्राचीन संस्कृत वाड्मय पर दृष्टिपात करना होगा। तब ज्योतिर्विज्ञान, गणित आदि के सारे ग्रन्थ संस्कृत में लिखे जाते थे तो क्या तब भी ऐसी ही चिल्ल-पों हुई होगी? और यदि हुई तो संस्कृत के स्थान पर प्राकृत, पाली जैसी भाषाओं का प्रयोग हुआ और उसी क्रम में 1800 ई. तक हम विकृत भाषाओं का ही प्रयोग करते रहे।

सौभाग्यवश उन्नीसवीं सदी में हिन्दी में प्रौढ़ गद्य के विकास के साथ ही विज्ञान लेखन शुरू हुआ। स्पष्ट है कि ज्यों ज्यों हिन्दी विकास करेगी, प्रौढ़ होगी त्यों त्यों विज्ञान लेखन सुदृढ़ होगा। इसीलिए पारिभाषिक शब्दों को संस्कृतनिष्ठ रखा गया, जिससे प्राचीन पारम्परिक ज्ञान की शृंखला भंग न हो।

इस तरह उन्नीसवीं सदी के प्रारम्भ से लेकर आज इक्कीसवीं सदी के पूर्वार्द्ध तक हिन्दी में ही विज्ञान लेखन हो रहा है जिसमें भाषा की दृष्टि से, विषय की दृष्टि से तथा उसकी उपयोगिता की दृष्टि से लगातार परिवर्तन दिखेंगे। तभी तो हिन्दी विज्ञान लेखन के भूत,वर्तमान और भविष्य पर विचार करने की आवश्यकता हुई।

वर्तमान में हम विज्ञान युग में जी रहे हैं। विज्ञान ने हमारी जीवनचर्या को बुरी तरह से आच्छादित कर रखा है। हमें लगता है कि यह वर्तमान युग की देन है। पहले ज्ञान-विज्ञान की चर्चा साथ साथ चलती थी किन्तु वर्तमान काल में विज्ञान अपने समुन्नत रूप में उपस्थित हो चुका है और वह सम्पूर्ण विश्व को अपनी गिरफ्त में करके, मानवजीवन की सनातन से चली आ रही जीवन शैली और विचारधारा को बदल चुका है। आज सारा विश्व विज्ञानमय बन चुका है। फिर भी कुछ ऐसे भूभाग हैं जहाँ अभी भी विज्ञान की पहुँच नहीं हो पाई। किन्तु भविष्य में वहाँ भी विज्ञान की पैठ सम्भावित है।

हमारा देश ज्ञान-विज्ञान में अग्रणी रहा है। हमारे आदि ग्रन्थ चारों वेद विज्ञान के स्रोत रहे हैं। इनके आधार पर आठवीं-नौवीं सदी तक

विविध वैज्ञानिक प्रयोग एवं प्रयास होते रहे। उसके बाद विदेशी शक्तियों के वशीभूत होकर विज्ञान विषयक हमारी सोच एवं हमारे प्रयोग समाप्त हो गये। पहले तो इस्लामी शासन और फिर अंग्रेजी शासन के फलस्वरूप पढ़े लिखे भारतीयों को क्रमशः फारसी तथा अंग्रेजी सीखने के लिए बाध्य होना पड़ा जिससे संस्कृत वाड्मय से उनका सम्पर्क शिथिल पड़ता गया। अंग्रेजी शासन काल में ऐसी देशी भाषाओं को विकसित करने की आवश्यकता अनुभव की गई जो वर्तमान सन्दर्भ में जनसामान्य तक ज्ञान-विज्ञान को वहन कर सकें। इस तरह खड़ी बोली हिन्दी का विकास हुआ। यह खड़ी बोली सहसा उठ खड़ी नहीं हुई। काफी श्रम करके ही यह वर्तमान स्वरूप प्राप्त कर सकी है। कहते हैं कि अमीर खुसरो ने जिस भाषा का प्रयोग अपनी रचनाओं में किया उसी का परिवर्द्धित रूप हिन्दी या खड़ी बोली है। हमारा उद्देश्य हिन्दी की उत्पत्ति बताना नहीं अपितु उसके गद्य रूप पर विचार करना है। इस गद्य को परिष्कृत करने में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र की महती भूमिका रही है। उनके बाद पं. महाबीर प्रसाद द्विवेदी के प्रयास से उसे आधुनिक मानक स्वरूप प्राप्त हुआ है। और यही परिष्कृत गद्य हिन्दी में विज्ञान लेखन का माध्यम बना।

यद्यपि विज्ञान, जिसे अंग्रेजी में Science कहा जाता है, भारत के लिए कोई नया ज्ञान नहीं है किन्तु पाश्चात्य जगत में विज्ञान को जिस तरह परिभाषित एवं व्यवहृत करके उन्नति की गई और उससे जो जनजागृति हुई, उसका प्रभाव हमारे देश पर पड़ना स्वाभाविक था। हमारे देश के कुछ प्रतिभाशाली व्यक्तियों ने विदेश जाकर अंग्रेजी माध्यम से विज्ञान में निपुणता प्राप्त की और अपने देश की जागृति हेतु उस ज्ञान को प्रचारित-प्रसारित करने का बीडा उठाया। इस तरह बंगाल, मद्रास, महाराष्ट्र में विज्ञान की लहर फैली। इसके लिए अंग्रेजी के साथ साथ बंगला, तमिल तथा मराठी भाषाओं का सहारा लिया गया। और इन भाषाओं में प्रकाशित समाचारपत्रों तथा पत्रिकाओं में विज्ञान की बातें प्रकाशित की जाने लगीं। इन्हीं के अनुकरण पर हिन्दी में भी विज्ञान लेखन शुरू हुआ।

विज्ञान के आविष्कारों को देखकर जनमानस में जो आश्चर्य एवं जिज्ञासा के भाव उठते रहे, उसकी एक झाँकी 1829 में प्रकाशित एक समाचार में मिलती है। यह समाचार प्रसिद्ध हिन्दीसेवी एवं सरकारी अफसर राजा शिव प्रसाद 'सितारे हिन्द' द्वारा प्रकाशित 'बनारस अखबार' में छपा था।(देखें विज्ञान गरिमा सिंधु, वर्ष 1998 अंक 26 में डॉ. गिरीश चन्द्र चौधरी का लेख) ''वह दिन मेरी आँखों के सामने घूमता है और कल का सा मालूम होता है। शायद 1829 ई. या करीब उसके था कि पहली दुखानी किश्ती जिसका नाम शायद डायना था, कलकत्ते से बनारस आई। शहर में शोर मचा कि फिरंगी अब आग से नाव चलावेगा। गंगा किनारे तमाशाइयों की ऐसी भीड़ हुई कि खड़े रहने को भी जगह नहीं मिलती थी। लोग गले तक पानी में उतर गये। मेरे पिता जो

उस वक्त यहाँ टक्साल थी, उसके मास्टर मशहूर जेम्स प्रिन्सिप के बड़े दोस्त थे,उन्हीं के साथ मुझे लेकर देखने गये। जब चन्द्रवती के करीब की सात कोस के माधोराय के धरहरे यानी आलमगीरी मसजिद के मीनार पर फरहरा हिलाया गया बड़ी हलचल मची। देखते ही देखते यह दुखानी किश्ती भी आ पहुँची और मनकर्णिका घाट के सामने लंगर अंदाज हुई। चूंकि पूरे जोर से आई उसकी लहर बहुतेरों के सर पर जो गले तक पानी में खड़े थे, फिर गई। बह गये और डूब गये, पता न लगा। मैं अपने पिता के साथ किश्ती पर गया और किश्तीवान यानी कप्तान ने जो कुछ उसमें देखने लायक था,सब दिखला दिया। उस वक्त किसको ख्याल था कि यह फिरंगी नाव भी आग से चलाएंगे।''

इससे स्पष्ट है कि विज्ञान अपने चमत्कारों द्वारा जनता को आकृष्ट कर रहा था जिसका कारण उनमें शिक्षा का अभाव था और विज्ञान की शिक्षा तो विशेषकर हिन्दी प्रदेशों में बहुत कम थी फिर भी प्रबुद्ध लोग समाचारों द्वारा विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी को लोकप्रिय बना रहे थे।

चूँकि विज्ञान का आयात पाश्चात्य देशों से अंगेजी के माध्यम से हो रहा था अतः उसे अपने देश की भाषाओं में उतारना आवश्यक था। किन्तु इसमें सबसे बड़ी अड़चन थी अंग्रेजी पारिभाषिक शब्दों के ऐसे देशी पर्याय बनाने की जो समझ में आ सकें। फलतः सर्वप्रथम पारिभाषिक शब्दों के पर्याय पर विचार-विमर्श आवश्यक था। बंगाल तथा महाराष्ट्र में विज्ञान तथा साहित्य के विद्वानों ने मिलकर काम-चलाऊ पारिभाषिक शब्दावली तैयार कीं जिससे बंगला तथा मराठी में विज्ञान लेखन शुरू हो चुका हुआ था। इस तरह हिन्दी को पिटा-पिटाया मार्ग मिल गया।

भारतेन्दु जी अपनी साप्ताहिक पत्रिका 'कविवचन सुधा' में विज्ञान विषयक किसी खोज का विवरण अवश्य देते। इसे वे समाचार तथा पत्र रूप में देते। उदाहरणार्थ कविवचन सुधा 1871 (खण्ड 3, अंक 1, 30 अप्रैल) के अंक में संपादक के नाम पत्र छपा।

''श्रीमान् कवि वचन सुधा संपादक महोदये।

श्रीहरिद्वार को रुड़की के मार्ग से जाना होता है। रुड़की शहर अंग्रेजों का बसाया हुआ है। इसमें दो तीन वस्तुएं देखने योग्य हैं। एक तो (कारीगरी) शिल्प विद्या का बडा कारखाना जिसमें जल चक्की,पवन चक्की और कई बड़े बड़े अनवर्त-चक्र में सूर्य,चन्द,पृथ्वी,मंगल आदि ग्रहों की भाँति फिरा करते हैं और बड़ी बड़ी धरन ऐसी सहज में चिर जाती हैं कि देखकर आश्चर्य होता है। बड़े बड़े लोहे के खंभे एक क्षण में ढल जाते हैं और सैकड़ों मन आटा घड़ी भर में पिस जाता है। जो बात है आश्चर्य की है।

इस कारखाने के सिवा यहाँ सबसे आश्चर्य श्री गंगा जी की नहर है, पुल के ऊपर से तो नहर बहती है और नीचे से नदी बहती है। यह एक बड़े आश्चर्य का स्थान है। इसको देखने से शिल्प विद्या का बल और अंग्रेजों का चातुर्य और द्रव्य का व्यय प्रकट होता है। यहाँ पुल के ऊपर नाव चलती है और उसके दोनों ओर गाड़ी जाने का मार्ग है और उसके परले सिरे पर चूने के सिंह बहुत ही बड़े बड़े बने हैं। हरिद्वार का एक मार्ग इसी नहर की पटरी पर से है और मैं इसी मार्ग से गया था।''

एक तरह से यह विज्ञान लेखन में हिन्दी के यात्रा साहित्य की शुरुआत भी है।

विज्ञान समाचारों की अन्य बानगी 'कविवचन सुधा' के 19 मार्च 1874 अंक में पढने को मिल जावेगी। ''विलायत में एक लक्ष बइलर हैं,भाप के यंत्र हैं और एक एक की शक्ति 40 घोड़ों की है। एक घोड़े की शक्ति 8 मनुष्यों के बराबर है तो इस हिसाब से चालीस लाख घोडे अर्थात् तीन करोड़ बीस लाख मनुष्यों का काम इन यंत्रों के द्वारा होता है। 5 मनुष्य तो काम करते करते थक जाते हैं पर ये यंत्र कभी थकते नहीं और मनुष्य के समान चार आना, आठ आना रोज नहीं देना पड़ता, केवल इनमें अग्नि प्रदीप करने से चलने लगते हैं। पर देश के कला कौशल ने इस देश पर चढ़ाई किया ऐसा पहले कभी नहीं हुआ था।''

यहीं पर हम भारतेन्दु बाबू के ही समकालीन एक शिक्षाविद् राजा शिव प्रसाद 'सितारे हिन्द' के प्रयासों का उल्लेख करना चाहेंगे जो प्रारम्भिक शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे थे। उन्होंने बड़े ही परिश्रम से प्रारम्भिक पाठ्यपुस्तकें हिन्दी में लिखीं जिनमें विज्ञान और भूगोल विषयक पुस्तकें मुख्य थीं। वे विद्यार्थियों के लिए रोचक ढंग से विज्ञान तथा भूगोल की बातें सरल भाषा में लिख रहे थे। यह 1850-60 का दशक था।

वैसे तो शिक्षा के क्षेत्र में ईसाई पादरी अपने ढंग से कलकत्ता, आगरा आदि में स्कूल बुक सोसाइटियों के माध्यम से हिन्दी गद्य में पुस्तकें लिख चुके थे। 1862 में सर सैयद अहमद खां ने एक वैज्ञानिक समिति की स्थापना की थी और 14 फरवरी 1866 को अलीगढ़ में एक शिक्षण संस्था भी खोल कर वे एक साप्ताहिक पत्र 30 मार्च 1866 से प्रकाशित करके विज्ञान का प्रचार प्रसार कर रहे थे।

काशी में बाबू श्याम सुन्दर दास के प्रयास से 1893 में नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना की गई। इससे लोगों के चित्त में सभी प्रकार की वैज्ञानिक विषयों की शिक्षा की व्यवस्था के विचार उठने लगे थे।

इस तरह 1900 ई. तक विज्ञान के आश्चर्यों से चमत्कृत न होकर या विज्ञान समाचारों को ही सूचना का आधार न बनाकर मुद्रित पुस्तकों की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट हुआ।

बीसवीं सदी के शुभारम्भ से ही हिन्दी में विज्ञान लेखन के प्रति जागरूकता दिखाई पड़ती है। उदाहरणार्थ प्रयाग से प्रकाशित होने वाली शुद्ध साहित्यिक पत्रिका 'सरस्वती' के प्रकाशन के प्रथम वर्ष (1901) से ही उसमें वैज्ञानिक निबन्ध लिखे जाने लगे और 1914 तक उसमें लगभग 150 वैज्ञानिक निबन्ध छप चुके थे जिनका सम्बन्ध ध्वनि, प्रकाश, ताप, गुरुत्वाकर्षण, परमाणुवाद, भूकम्प, पुच्छल तारे जैसे नितान्त वैज्ञानिक विषयों से था। 'सरस्वती' के सम्पादक ने विज्ञान विषयक निबन्ध लिखे, और विज्ञान विषयक पुस्तकें भी लिखीं। इसका अच्छा प्रभाव पड़ा जिससे बीसवीं सदी के तीसरे दशक में हाईस्कूलों में हिन्दी तथा स्थानीय भाषाओं को शिक्षा का माध्यम स्वीकार कर लिया गया। 1937 में जब प्रान्तीय सरकारें बनीं तो स्कूलों में हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं को स्थान दिया गया।

बीसवीं सदी के मध्य में,1947 में हमारा देश स्वतन्त्र राष्ट्र घोषित हुआ।

अतः चाहें तो हम 1900 से 1947 तक के इस कालखण्ड को हिन्दी लेखन के भूतकाल के अन्तर्गत रख सकते हैं और तब हम वर्तमान काल में प्रवेश करें। प्रश्न है कि वर्तमान काल

को कैसे सीमाबद्ध करें ? क्या 1947 से लेकर वर्ष 2000 तक वर्तमान काल मानकर विज्ञान लेखन पर चर्चा की जा सकती है ?

वैज्ञानिक साहित्य के निर्माण एवं उसकी स्थिति की झाँकी-

यहाँ अखिल भारतीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अधिवेशनों में विज्ञान परिषदों में अध्यक्षीय भाषणों में व्यक्त विचारों (हिन्दी विज्ञान लेखन कुछ समस्याएं : सम्पादक डॉ. शिवगोपाल मिश्र, पृष्ठ 29, 30) के निम्नांकित अंशों पर विचार करना आवश्यक हो जाता है-

1. हीरालाल खन्ना (21वाँ सम्मेलन संवत 1888 (1931 ई.) झाँसी अधिवेशन।

''हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य निर्माण की आवश्यकता इसलिए और भी है कि साधारण जनसमुदाय में वैज्ञानिक विचारों का प्रचार भलीभाँति हो सके।

वर्तमान आवश्यकताओं पर विचार करते हुए वैज्ञानिक साहित्य के निर्माण और विज्ञान के प्रचार निमित्त निम्नलिखित बातों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है-

वैज्ञानिक पुस्तकों की भाषा पारिभाषिक शब्दों का अभाव एवं अनिश्चितता सहकारिता और सहयोग्यता।

2. डॉ. गोरख प्रसाद (काशी अधिवेशन सं.1996 (1939 ई.)

''हिन्दी साहित्य में अन्य अंगों की अपेक्षा वैज्ञानिक साहित्य की उन्नति के लिए पारिभाषिक शब्दों, फोटो और ब्लाकों की बहुत आवश्यकता है।''

3. प्रो. फूलदेव सहाय वर्मा (शिमला अधिवेशन सं. 1995 (1938)

''जिस भाषा को हम राष्ट्रभाषा होने का गौरव दे रहे हैं, उसमें आवश्यक साहित्य का अभाव अवश्य ही एक बड़ी खटकने वाली बात है। यह हमारा उत्तरदायित्व है कि इसके साहित्य की पूर्ति करें। विज्ञान का वास्तविक ज्ञान प्राप्त करने के लिए देशी भाषाओं का माध्यम आवश्यक है।''

4. डॉ. सत्यप्रकाश (पूना अधिवेशन सं. 1997 (1940)

''कुछ थोड़ी सी अनुवादित पुस्तकें अथवा सर्वसाधारण रुचि की पुस्तकें प्रकाशित कर देने में ही हिन्दी साहित्य और हिन्दी प्रेमियों का गौरव नहीं बढ़ सकता। जब तक उच्च कोटि के वैज्ञानिक कार्यों में हमारे हिन्दी भाषी भाग न लेंगे और संसार के समक्ष अपनी योग्यता का परिचय न देंगे तब तक हिन्दी को गौरव नहीं मिल सकता। मैं यह चाहता हूँ कि भाषा में संस्कृत शब्दों की

प्रधानता उत्तरोत्तर अधिक होती जावे।''

5. डॉ. ब्रजमोहन सं. 2004 (1947)

''क्या हम इन एक प्रतिशत व्यक्तियों के कारण देश के 99 प्रतिशत निवासियों पर एक जटिल विदेशी भाषा की दुरूह वैज्ञानिक शब्दावली लाद दें। यह कहाँ की बुद्धिमानी होगी।''

इस दृष्टि से विज्ञान लेखन के सुनिश्चित काल विभाजन के लिए हमें भूत और वर्तमान की सीमा रेखाएँ खींचनी होंगी। किन्तु ऐसा करना सरल नहीं। जो आज वर्तमान है वही कल भूत बन जावेगा और इसी वर्तमान के भीतर से भविष्य का जन्म होगा। इसलिए बहुत ही विषम स्थिति उत्पन्न होती है-काल विभाजन को लेकर। किन्तु भूत, वर्तमान तथा भविष्य- ये शब्द तथा इनमें निहित गूढार्थ मन को चमत्कृत करने वाले और आगे बढ़ने की प्रेरणा देने वाले लगते हैं। इतिहास में भूत तथा वर्तमान समाहित हो जाते हैं किन्तु साहित्य में भविष्य अँगड़ाई लेने लगता है। विज्ञान में भविष्य के विषय में सोचे बिना किसी भी तरह की प्रगति कर पाना सम्भव नहीं। वस्तुतः जिसे विकास कहते हैं, वह भविष्य का सूचक है और विज्ञान विकास का वाहक है, उसका अग्रदूत है अतः विज्ञान लेखन का भविष्य यानी वर्तमान के उदर में छिपे भविष्य यानी अब से अगले 50 या 100 वर्षों में जो लेखन होगा, उसकी भविष्यवाणी या वर्तमान में जैसा लेखन है उसके आधार पर आगे चल कर उसमें कैसे कैसे मोड़ आ सकते हैं, इसका विवेचन आवश्यक है। यह कार्य आसान नहीं किन्तु वर्तमान में प्रचलित लेखन की प्रवृत्तियों को ध्यान में रखकर परिपूर्णता की कल्पना करना ही भविष्य होगा। फिर भी यह किसी की जन्मकुंडली द्वारा पूर्वनिर्धारित भविष्य नहीं होगा अपितु इस भविष्य को पूर्वसंचित कार्यों के आधार पर नव नव सृजन द्वारा नया रूप देना होगा। हमारे वैज्ञानिकों के मन में न जाने कितने नये नये विचार उठते जावेंगे, जिन्हें मूर्त रूप देने के लिए तदनुकूल लेखन करना होगा। ऐसे ही विचार विज्ञान लेखकों के भी मन में उठ सकते हैं किन्तु भविष्य के लिए कुछ नई सृष्टि करनी होगी। केवल वैचारिक या सैद्धान्तिक चर्चा न होकर उसे अमली जामा पहनाने के प्रयास करने होंगे। इसके लिए विचार, भाषा तथा शैली तीनों में परिवर्तन करने होंगे। कवि को मनीषी, परिभू, स्वयंभू कहा गया है किन्तु भविष्य के लिए विज्ञान लेखक को भविष्यद्रष्टा होना पड़ेगा। उसे अपने से पूर्व लिखित सामग्री का मंथन करना होगा और तब जो कुछ नया लगेगा, वह लिखना होगा। वही भविष्य का विज्ञान लेखन होगा।

हिन्दी का यह विज्ञान लेखन कार्य पुरुष तथा महिला दोनों वर्गों के द्वारा सम्पन्न होना है। भले ही भूतकाल में कुछेक महिलाएँ ही विज्ञान लेखन में शरीक हुई हों किन्तु वर्तमान में विविध वैज्ञानिक क्षेत्रों में महिलाओं का योगदान बढ़ा है और भविष्य में इनकी भागीदारी में और बढ़ोत्तरी होनी है।

हमें लगता है कि भविष्य में हिन्दी भाषा स्पष्टता की ओर बढ़ेगी।

इससे विज्ञान की लिखित सामग्री की ग्राह्यता बढेगी। ऐसा इसलिए कहा जा रहा है कि लगभग सौ वर्षों से पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग होते होते वे सुगम लगने लगेंगे-वे हमारे आत्मीय बन चुकेंगे।

भविष्य में निश्चित रूप से विज्ञान लेखन का स्वरूप बदलेगा, प्रिंट तथा दृश्य एवं श्रव्य के अलावा उसका डिजिटल रूप प्रगट होगा क्योंकि अभी से उसकी उपस्थिति दर्ज हो चुकी है। तब कागज कलम की आवश्यकता नहीं होगी। अपने लैपटाप में सारा लेखन और इन्टरनेट के माध्यम से पठन कार्य होने लगेगा। कहना चाहें तो कह सकते हैं कि मानव मस्तिष्क की सामग्री प्रकट रूप में इण्टरनेट पर पढ़ी जा सकेगी। वर्तमान में हमें इस परिवर्तन से विचलित होने या सशंकित होने की आवश्यकता नहीं। आने वाली पीढ़ी इसी की अभ्यस्त हो जावेगी। विज्ञान लेखन का अभीष्ट भी यही है।

('हिन्दी में विज्ञान लेखन का अंश। प्रकाशक - आईसेक्ट पब्लिकेशन, भोपाल)

आईसेक्ट पब्लिकेशन

हिन्दी में विज्ञान की लोकप्रिय किताबें

क्र	किताब	लेखक	मूल्य
1	खनिज और मानव	डॉ. विजय कुमार उपाध्याय	195/-
2	भारत का अंतरिक्ष कार्यक्रम	श्री कालीशंकर एवं राकेश शुक्ला	195/-
3	जल संरक्षण	डॉ. डी. डी. ओझा	195/-
4	भूमि संरक्षण	डॉ. दिनेश मणि	95/-
5	बच्चों के लिए विज्ञान मॉडल	श्री बृजेश दीक्षित	95/-
6	वैकल्पिक ऊर्जा के स्रोत	सुश्री संगीता चतुर्वेदी	95/-
7	प्राचीन भारत में वैज्ञानिक चिंतन	डॉ. पुरुषोत्तम चक्रवर्ती	95/-
8	इलेक्ट्रॉनिक आधारित सामरिक सुरक्षा तकनीक	डॉ. मनमोहन बाला	95/-
9	जैव विविधता संरक्षण	डॉ.मनीष मोहन गोरे	95/-
10	दूर संचार	श्री संतोष शुक्ला	150/-
11	घर–घर में विज्ञान	डॉ. के. एम. जैन	150/-
12	भौतिकी की विकास यात्रा	डॉ. के. एम. जैन	150/-
13	नैनोटेक्नॉलॉजी	डॉ. पी. के. मुखर्जी	95/-
14	हमारे जीवन में अंतरिक्ष	कालीशंकर एवं राकेश शुक्ला	195/-
15	वैश्विक तापन	डॉ. दिनेश मणि	95/-
16	ई–वेस्ट प्रबंधन	श्री संतोष शुक्ला	150/-
17	लेसर लाईट	डॉ. पी. के. मुखर्जी	150/-
18	न्यूक्लियर एनर्जी	डॉ. अनुज सिन्हा	95/-
19	न्यूट्रिनों की दुनिया	डॉ. के. एम. जैन	95/-
20	भोजवैटलैंड : भोपाल ताल	श्री राजेन्द्र शर्मा 'अक्षर'	195/-
21	महासागर बोलते हैं	श्री बजरंगलाल जेठू	250/-
22	महासागर : जीवन के आधार	श्री नवनीत कुमार गुप्ता	195/-
23	ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति	श्री महेन्द्र कुमार माथुर	195/-
24	सूक्ष्म जीव विज्ञान	डॉ. पंकज श्रीवास्तव एवं श्रीमती तोषी जैन	195/-
25	भारत में विज्ञान एवं विज्ञान संचार की परंपरा	श्री विश्वमोहन तिवारी	195/-
26	सेहत और हम	डॉ. मनीष मोहन गोरे	195/-
27	रसोई विज्ञान	पुनीता मल्होत्रा	95/-
28	ह्यूमन ट्रांसमिशन एवं अन्य विज्ञान कथाएं	डॉ. ज़ाकिर अली रजनीश	150/-
29	बायोइंफार्मेटिक्स	डॉ. अर्चना पांडेय	150/-
30	हमारे प्रेरणा स्रोत भारतीय वैज्ञानिक	राम शरण दास	195/-
31	मध्यप्रदेश की विज्ञान संचार यात्रा	चक्रेश जैन	95/-
32	हिन्दी विज्ञान लेखनः भूत, वर्तमान एवं भविष्य	डॉ. शिव गोपाल मिश्रा	195/-
33	दैनिक जीवन में रसायन	डॉ. पुरुषोत्तम चक्रवर्ती	195/-
34	जलवायु परिवर्तन	डॉ. दिनेश मणि	195/-
35	ग्रीन बेबी	श्री विजय चितौरी	195/-
36	फोरेन्सिक साइंस	डॉ. पंकज श्रीवास्तव	195/-
37	सर्वशास्त्र शिरोमणि गणित	डॉ. राजेन्द्र प्रसाद मिश्रा	195/-
38	ऊतक संवर्धन	श्री प्रेमचन्द्र श्रीवास्तव	195/-
39	आइए लिनक्स सीखें	श्री रविशंकर श्रीवास्तव	250/-
40	हम क्या समझते हैं?	श्री प्रदीप श्रीवास्तव	95/-
41	सौन्दर्य प्रसाधनों का रसायन विज्ञान	डॉ. बबिता अग्रवाल	195/-
42	प्रदूषण जनित रोग	डॉ. सुनंदा दास	195/-
43	भोपाल के पक्षी	डॉ. स्वाति तिवारी	395/-
44	पर्यावरण और मानव जीवन	डॉ. सुमन गुप्ता	195/-